इकाई 1 सामान्य समष्टि अवधारणाएं
(General Macro Concepts)

1.1 प्रस्तावना (Introduction)
1.2 उद्देश्य (Objectives)
1.3 समष्टि आर्थिक प्रतिमान (Macro Economic Model)
1.3.1 चर (Variables)
1.3.2 फलनात्मक सम्बन्ध और प्राचल (Functional Relationship and Parameter)
1.3.3 काल-श्रेणी और तिर्यक-अनुभाग विश्लेषण (Time Series and Cross-section Analysis)
1.3.4 पश्चता (Lag)
1.4 लेखा सम्बन्ध और व्यावहारिक सम्बन्ध या समानिकायें और समीकरण (Accounting and Behavior Relationships or Identities and Equations)
1.5 पूर्ण रोजगार (Full Employment)
1.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
1.7 सारांश (Summary)
1.8 शब्दवाली (Glossary)
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
1.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
1.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

समष्टि अर्थशास्त्र के विश्लेषण की संपूर्ण रूपरेखा कई अवधारणाओं, शर्तों और संकल्पनाओं पर निर्भर करती है। इन्हें ठीक प्रकार से समझकर ही समष्टि अर्थशास्त्र की समस्याओं को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। इन सभी शब्दों, अवधारणाओं और विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक उपकरणों की समझ विकसित कर पाना थोडा मुश्किल है। यहाँ हम इनमें से कुछ ऐसी धारणाओं की व्याख्या करेंगे जो आधारभूत प्रकृति की हैं और समष्टि अर्थशास्त्र में जिनका व्यापक रूप में उपयोग किया जाता है।

1.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढने के बाद आप:

- ✓ समष्टि अर्थशास्त्र की विभिन्न अवधारणाओं को समझ सकेंगे।
- ✓ समष्टि आर्थिक प्रतिमान एवं इसकी अवधारणाओं को जान सकेंगे।
- ✓ चर का अर्थ एवं प्रकारों को समझ सकेंगे।
- ✓ दों चरों के बीच के सम्बन्ध को दर्शाता फलनात्मक सम्बन्ध के अर्थ को जान सकेंगे।
- ✓ समष्टि अर्थशास्त्र में पूर्ण रोजगार की अवधारणा से अवगत हो सकेंगे।

1.3 समष्टि आर्थिक प्रतिमान (Macro Economic Model)

वास्तविक दुनिया का सोच-विचार कर किया गया सरलीकृत चित्रण ही एक समष्टि आर्थिक प्रतिमान कहलाता है। इन आर्थिक प्रतिमान में आर्थिक संबंधों का एक समूह समावेशित होता हैं जिसमें ऐसा एक चर मौजूद होता हैं जो प्रतिमान के अन्य संबंधो से भी जुड़ा होता हैं। चित्रों, समीकरणों एवं शब्दों के माध्यम से यह प्रतिमान वास्तविक दुनिया की समस्याओं को समझाता हैं।

किसी भी समस्या पर कार्य करने से पहले कोई भी अर्थशास्त्री उस समस्या को समझने एवं उसकी व्याख्या करने के लिए सबसे पहले एक गणितीय प्रतिमान का निर्माण है एवं साथ ही उस समस्या से जुडी मान्यताओं का विश्लेषण करता है। किसी भी आर्थिक गणितीय प्रतिमान में तीन अंश या चर शामिल होते हैं, पहला **निर्भर चर (Dependent Variable)**, यह वो चर होता हैं जिसके बारे में हमें पता लगाना है यानि जानना है, जैसे कोई घटना जो घट चुकी हैं; दूसरा **स्वतंत्र चर (Independent Variable)**, यह चर निर्भर चर को प्रभावित करता हैं अर्थात् यह निर्भर चर की घटना के घटित होने के लिए उत्तरदायी होता हैं इन्हें व्याख्यात्मक चर भी कहते हैं क्योंकि यह निर्भर चर की व्याख्या करते हैं, तीसरा **व्यावहारिक मान्यताएं (Practical beleifs)** यह मान्यताएं, निर्भर चर एवं व्याख्यात्मक चर के बीच के संबंधों एवं उनकी प्रकृति की व्याख्या करते हैं।

अर्थशास्त्री द्वारा बनाए गए प्रतिमान में दो समुच्चय या समूह होते हैं, **पहला** व्यावहारिक संबंधों का और दूसरा संतुलन शर्तों का। अर्थशास्त्री अपने प्रतिमान में जिन भी चरों (variables) एवं प्राचलों (parameters) को सम्मिलित करना चाहता हैं वह पहले उनकी विस्तार से व्याख्या करता हैं। उसके बाद वह प्रतिमान को सुचारू रूप से चलाने के लिए आवश्यक शर्तें तैयार करता है। यह शर्तें परिभाषा या पहचान, कार्यात्मक संबंध, संतुलन और असंतुलन शब्दों द्वारा बनाई जाती हैं, जिन्हें आगे प्रवाह (flow) और स्टॉक शब्दों में विभाजित किया गया है।

प्रतिमान के निर्माण के लिए विभिन्न धारणाओं का प्रयोग किया जाता हैं जैसे, चर, पश्चता समायोजन (lag adjustment), अन्तर्जात (endogenous) एवं बहिर्जात (exogenous), चर (variables), फलनात्मक सम्बन्ध (functional relation), प्रत्याशित (ex-ante) और यथार्थ (ex-post), स्थिरांक (constants), समीकरण और संतुलन शर्त (equilibrium conditions) इन सभी धारणाओं के बारे में आप एक-एक करके विस्तार से पढेंगे।

समष्टि आर्थिक प्रतिमान से जुडी कुछ धारणाएं इस प्रकार हैं:-

1. **स्थिरांक (Constants):** जिसकी मात्रा एवं आकार में कोई परिवर्तन नहीं होता हैं उसे स्थिरांक कहा जाता हैं । एक स्थिरांक, चर के बिल्कुल विपरीत होता है। जब कोई चर किसी स्थिरांक के साथ जुड़ाता है, तो इसे चर का गुणांक (coefficient) कहा जाता है।
2. **प्राचल (Parameters):** प्राचल एक प्रतीक है जो किसी विशेष समस्या के लिए तो स्थिरांक है परन्तु विभिन्न समस्याओं के लिए यह अलग-अलग मूल्य या मान ले सकता है। प्राचल में एक चर के भिन्न मूल्य हो सकते हैं किन्तु प्राचल को प्रतिमान में फिर भी एक स्थिरांक ही माना जाता है, प्राचल की इस विशेषता के कारण ही इसे प्राचलिक (parametric) स्थिरांक के नाम से भी जाना जाता हैं। किसी आर्थिक प्रतिमान में प्राचलों को a, b और c या α, β और γ जैसे प्रतीकों द्वारा व्यक्त किया जाता है।
3. **मान्यताएं (Assumptions):** अर्थशास्त्रियों द्वारा बनाए गए प्रत्येक प्रतिमान में कुछ मान्यताएं पायी जाती हैं, यह प्रतिमान इन मान्यताओं पर ही आधारित होते हैं। अर्थशास्त्री प्रतिमान का निर्माण करते समय इस बात का ध्यान आवश्यक रखते हैं कि वह सरल एवं कम मान्यताओं का ही उपयोग करे। जिससे की प्रतिमान का निर्माण करने के साथ-साथ उसका परिक्षण भी आसानी से किया जा सके।
4. **समीकरण (Equations):** समीकरण को ऐसे कथन के रूप में परिभाषित किया जाता हैं जो दो अभिव्यक्तियों (statement) की समानता पर जोर देता है, जो समान चिह्न "=" से जुड़े हुए हैं। आर्थिक प्रतिमानों में तीन प्रकार की समीकरणों का प्रयोग किया जाता है, पहली पारिभाषिक समीकरण, दूसरी व्यावहारिक समीकरण और तीसरी संतुलन समीकरण जिसे संतुलन समीकरण की शर्त भी कहते हैं।
    - **क. पारिभाषिक समीकरण (Definitional Equation):** किन्ही दों सामान्य अर्थ वाले वैकल्पिक व्यंजकों (alternative expressions) के बीच के संबंध को संदर्भित (refer) करने वाली समीकरण को पारिभाषिक समीकरण कहा जाता है। पारिभाषिक समीकरण में समान चिह्न "=" का प्रयोग किया जाता है। इसको 'समानिका' (identity) के नाम से भी जाना जाता है जोकि स्वयंसिद्ध सत्य (truism) को दर्शाता है।
    - **ख. व्यावहारिक समीकरण (Behavioural Equation):** व्यावहारिक समीकरण कुछ मान्यताओं पर आधारित होता है जिस पर विचाराधीन चर (variable under consideration) का विशेष व्यवहार आधारित होता है। एक व्यावहारिक समीकरण यह बताता है कि कोई एक चर अन्य चरों में परिवर्तन के परिणामस्वरूप किस प्रकार का व्यवहार करता है। उदाहरण के लिए मान लीजिए यदि हमें दूध की माँग का विश्लेषण करने के लिए एक प्रतिमान का निर्माण करना हैं तब व्यावहारिक समीकरण के अनुसार दूध की मांगी गई मात्रा का निर्णय दूध की कीमत पर निर्भर करेगा। नीचे दिए गए माँग फलन पर चर्चा कीजिए:

      $$Qd = 400 - 8P \qquad \text{…….. (1)}$$

      $$Qd = 400 - 4P \qquad \text{……..(2)}$$

      यहाँ दों समीकरण दी गई हैं समीकरण 1 में, कीमत 8 रूपये हैं जोकि ज्यादा हैं जबकि समीकरण 2 में, कीमत 4 रूपये हैं जोकि कम हैं। समीकरण 1 में कीमत ज्यादा होने से दूध की मांगी गई मात्रा कम होगी जैसे 50 टन, जबकि समीकरण 2 में कीमत कम होने से दूध की मांगी गई मात्रा ज्यादा होगी जैसे 100 टन। यह दोनों समीकरण यह दर्शाते हैं की कीमत के ज्यादा होने से मांगी गई मात्रा कम हो जाती हैं एवं कीमत के कम होने पर मांगी गई मात्रा बढ़ जाती हैं।
    - **ग. संतुलन समीकरण की शर्त (Condition of Equilibrium Equation):** संतुलन एक ऐसी स्थिति हैं जहाँ उपभोक्ता या उत्पादक को पूर्ण संतुष्टि प्राप्त होती हैं और वह उस स्थिति में

कोई परिवर्तन करना नहीं चाहते। कोई भी आर्थिक प्रतिमान जब संतुलन के अध्ययन से सम्बंधित होता हैं तो उस प्रतिमान में दी गई समीकरण संतुलन की स्थिति को प्राप्त करने की प्रक्रिया की व्याख्या करती हैं इसे ही संतुलन शर्त कहा जाता हैं।

एक बाज़ार के प्रतिमान के लिए संतुलन की स्थिति तब होती हैं जब बाज़ार में माँगी गई मात्रा (Quantity demanded) पूर्ति की मात्रा (Quantity supplied) के बराबर हो, अर्थात: $Qd = Qs$

संतुलन की शर्त को व्यावहारिक समीकरणों द्वारा प्राप्त किया जा सकता हैं। आइये इसे एक उदाहरण के साथ समझते हैं, मान लीजिए एक बाज़ार प्रतिमान के लिए तीन व्यावहारिक समीकरण हैं:-

$$Qd = 18 - 2P \quad \ldots\ldots (1)$$

$$Qs = -6 + 6P \quad \ldots\ldots (2)$$

$$Qd = Qs \quad \ldots\ldots (3)$$

यदि समीकरण (1) और समीकरण (2) को समीकरण (3) में स्थानापन्न (substitute) करने से,

$$18 - 2P = -6 + 6P$$
$$-2P - 6P = -6 - 18$$
$$-8P = -24$$
$$P = \frac{24}{8} = 3$$

कीमत (P) का मूल्य 3 रूपये हैं, अब अगर P के मूल्य को समीकरण (1) और समीकरण (2) में डाला जाए तो हमें संतुलन की स्थिति प्राप्त हो जाएगी जैसे:

$$Qd = 18 - 2 \times 3 = 18 - 6 = 12$$
$$Qs = -6 + 6 \times 3 = -6 + 18 = 12$$
अर्थात् $Qd = Qs = 12$

इस तरह संतुलन की स्थिति प्राप्त होगी।

एक समष्टि आर्थिक प्रतिमान में अन्य धारणाएं भी सम्मिलित होती हैं। जैसे, चर, फलनात्मक सम्बन्ध, काल-श्रेणी और तिर्यक-अनुभाग विश्लेषण और पश्चता। इन सभी धारणाओं के बारे में आप आगे विस्तार से पढेंगे।

1.3.1 चर (Variables)

कोई भी ऐसी मात्रा जो किसी विशेष समय अवधि में परिवर्तित होती है उसे चर (varible) कहा जाता है। चर के सम्बन्ध में एक मात्रा कई मूल्य धारण करती है जो इसमें वृद्धि या कमी को प्रकट करती हैं। उदाहरण के लिए यदि हम कीमतों, आय, रोजगार, उत्पादन, मुद्रा की मात्रा आदि के भिन्न-भिन्न स्तरों पर इनकी बदलती हुई मात्राएँ चर (variable) कही जा सकती हैं।

चरों को निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटा जा सकता है -

1. **आश्रित और स्वतन्त्र चर (Dependent and Independent Variables) -** आश्रित चर (Dependent Variable) उस चर को कहते हैं जिसकी मात्रा किसी अन्य चर की मात्रा में होने वाले परिवर्तन पर एक निश्चित रूप में निर्भर करती है। स्वतन्त्र चर (Independent Variable) उस चर को कहते हैं जोकि किसी भी चर से प्रभावित नहीं होता हैं। *उदाहरण के लिए* यदि अन्य बातें समान रहें तो माँग का कीमत के साथ उलटा (inverse) सम्बन्ध होता है। इसका अर्थ है कि वस्तु की माँग उस वस्तु की कीमत पर निर्भर करती है। इसी प्रकार यह कहा जा सकता है कि उत्पादन, रोजगार के साथ बढ़ता या घटता है। इसमें उत्पादन एक आश्रित चर है जबकि रोजगार एक स्वतन्त्र चर है।
2. **अन्तर्जात और बहिर्जात चर (Endogenous and Exogenous Variables) -** अन्तर्जात चर (Endogenous Variable) उस चर को कहते हैं जो आर्थिक प्रणाली के आन्तरिक संरचना से सम्बन्धित होते हैं। इन चरों को आर्थिक प्रणाली या आर्थिक प्रतिमान के आन्तरिक अंग कहा जाता हैं। बहिर्जात चर (Exogenous Variables) उस चर को कहते हैं जो अर्थ प्रणाली के बाहर के होते हैं। आय, उत्पादन और रोजगार के स्तर, बचत और निवेश की धारणायें, माँग और पूर्ति, पूँजी का भंडार, उपभोक्ताओं की वस्तुओं के बारे में रुचियाँ आदि ऐसे चर हैं जो आर्थिक प्रणाली के आन्तरिक ढ़ांचे से सम्बन्ध रखते हैं। दूसरी ओर जनसंख्या का आकार, वृद्धि और बनावट, मज़दूर संगठनों की शक्ति, उत्पादन के तकनीक, आयात, निर्यात, आविष्कार, नवप्रवर्तन आदि ऐसे चर हैं जिन्हें बहिर्जात चर माना जाता है। भिन्न-भिन्न स्थितियों और समयों में इनको विभिन्न ढंगों से परिभाषित किया जाता है क्योंकि इन दो प्रकार के चरों के बीच कोई स्पष्ट रेखा नहीं है। उदाहरण के लिए तकनीकी आविष्कारों और नवप्रवर्तनों को आमतौर पर बहिर्जात चर माना जाता है जबकि खेती और उद्योगों के विकास के कारण ये तकनीकी परिवर्तन पैदा होते हैं तो इन्हें बहिर्जात चरों की बजाय अन्तर्जात चर माना जा सकता है।
3. **स्टॉक और प्रवाह चर (Stock and Flow Variables) -** बहुत से आर्थिक वाद-विवाद इस कठिन समस्या के इर्द-गिर्द घूमते हैं कि किसी चर को स्टॉक माना जाए अथवा प्रवाह। स्टॉक चर एक ऐसा चर है जिसका समय आयाम नहीं होता है और यह किसी विशेष समय बिंदु से संबंधित होता है। दूसरी ओर प्रवाह चर वह है जिसमें अनिवार्य रूप से एक समय आयाम होता है। यह समय की अवधि से संबंधित है *जैसे* एक दिन, एक सप्ताह, एक महीना या एक वर्ष। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति की शिक्षक के रूप में कार्य कर कुछ आय अर्जित करता है। समय के एक विशेष बिन्दु पर अर्जित आय की कुल मात्रा एक स्टॉक है जबकि समय की एक विशेष अवधि में व्यय पर खर्च की गयी आय प्रवाह है। व्यष्टि अर्थशास्त्र के सिद्धान्त में बाजार माँग और पूर्ति की सूचियां प्रवाह को प्रकट करती हैं जबकि एक विशेष वस्तु की समय के विशेष बिन्दु पर बाज़ार में प्राप्ति स्टॉक चर को प्रकट करती है। समष्टि आर्थिक विश्लेषण में पूँजी भंडार, मुद्रा की पूर्ति, माल सूचियां (inventories), धन आदि स्टॉक चर हैं जबकि आय, खर्च, बचत, निवेश, उपभोग आदि प्रवाह चर हैं। स्टॉक और प्रवाह धारणाओं की ऊपर दी गई व्याख्या को ध्यान में रखते हुए इनकी परिभाषा निम्नलिखित ढंग से की जा सकती है - ***स्टॉक चरों*** को समय के एक विशेष बिन्दु पर मापा जाता है और वे समय की अवधि से स्वतन्त्र होते हैं। ***प्रवाह चरों*** का सम्बन्ध आवश्यक रूप में समय की अवधि के साथ होता है।
4. **प्रत्याशित और यथार्थ चर (Ex-ante and Ex-post Variable) -** प्रत्याशित (ex-ante) और यथार्थ (ex-post) शब्द लैटिन भाषा के शब्द हैं जिनके अर्थ क्रमश: 'पहले' और 'बाद में' हैं। स्वीडन के अर्थशास्त्रियों ने इन धारणाओं का आर्थिक साहित्य में बहुत व्यापक रुप से प्रयोग किया। बचत, निवेश, आय, उत्पादन और उपभोग के चरों के समय की एक विशेष अवधि के आरम्भ में किए गए अनुमानों को प्रत्याशित (ex-ante) चर कहा जाता है। प्रत्याशित दृष्टि से चर नियोजित (planned), इच्छित (desired or intended) या सम्भावित (expected) अर्थ में लिए जाते हैं।

यथार्थ (ex-post) दृष्टि में चरों से अभिप्राय समय की विशेष अवधि के अन्त में चरों के वास्तविक परिमाण (magnitudes) से है जैसे बचत, निवेश, आय और उत्पादन के समय की विशेष अवधि के अन्त में वास्तविक मूल्यों को यथार्थ चर (ex-post Variable) कहा जा सकता है। यथार्थ दृष्टि से ये चर वास्तविक (actual) या वसूल किये गये (realised) मूल्य से हैं क्योंकि प्रत्याशित और यथार्थ चरों का सम्बन्ध समय की अवधि के आरम्भ और अन्त में प्राप्त मूल्यों के सम्बन्ध में है। इसलिए यह आवश्यक नहीं कि वे आपस में सदैव एक समान रहेंगे। चरों के यथार्थ (ex-post) मूल्य नियोजित (planned) या प्रत्याशित (ex-ante) मूल्यों से भिन्न हो सकते हैं। इसी कारण से हम कहते है कि प्रत्याशित बचत और निवेश एक-दूसरे के समान नहीं होते पर यथार्थ दृष्टि से वे एक-दूसरे के समान होते हैं। प्रत्याशित बचत और निवेश आपस में तब समान हो सकते हैं, बचतकर्ताओं और निवेशकों की योजनाएँ पूरी तरह से मेल खाती हों।

1.3.2 फलनात्मक सम्बन्ध और प्राचल (Functional Relationship and Parameter)

दो या दो से अधिक चरों के बीच कार्यात्मक संबंध यह व्यक्त करते हैं कि उनकी मात्राओं के बीच इतना विशिष्ट संबंध है कि एक चर की मात्रा में परिवर्तन के परिणामस्वरूप दूसरा चर निरंतर और निश्चित तरीके से परिवर्तित होता है। उदाहरणस्वरूप, आपने प्रथम सेमेस्टर में 'व्यष्टि अर्थशास्त्र के मूलतत्व' में अध्ययन किया था कि वस्तु की मात्रा, कीमत का फलन है। इन दोनों चरों में ऐसा सम्बन्ध है कि यदि अन्य बातें समान रहें, तो वस्तु की कीमत में एक निश्चित वृद्धि या कमी होने पर उस वस्तु की माँग में कमी या वृद्धि निश्चित रूप से हो जाती है। माँग और कीमत में विपरीत परिवर्तन होने के कारण यह कहा जा सकता है कि माँग कीमत का उलटा (inverse) फलन है। दूसरी ओर वस्तु की पूर्ति इसकी कीमत का प्रत्यक्ष (direct) फलन है। यह प्रकट करता है कि एक वस्तु की कीमत में वृद्धि या कमी होने से इसकी पूर्ति में विस्तार या संकुचन होता है। फलनात्मक सम्बन्ध को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है:

$$\mathrm{D} = f(\mathrm{P})$$
$$S = f(\mathrm{P})$$

ये सम्बन्ध बताते हैं कि माँग (D) और पूर्ति (S) एक क्रमबद्ध रूप में वस्तु की कीमत (P) पर निर्भर हैं। इनमें माँग (D) और पूर्ति (S) आश्रित या निर्भर चर हैं जबकि कीमत (P) स्वतन्त्र चर है।

समष्टि अर्थशास्त्र में भी बहुत से फलनात्मक सम्बन्ध पाए जिनको आप अगले अध्ययों में जानेगें, जैसे

$$C = f(Y)$$
$$Q = f(N)$$

इसमें उपभोग (C), आय (Y) का फलन है और उत्पादन (Q) रोजगार (N) का फलन है। उपभोग (C), आय (Y) का प्रत्यक्ष (Direct) फलन है। आय में वृद्धि या कमी से उपभोग में भी वृद्धि या कमी होती है। इसी प्रकार उत्पादन (Q), रोजगार (N) का प्रत्यक्ष फलन है।

फलनात्मक सम्बन्ध केवल दो चरों तक ही सीमित नहीं होता। दो से अधिक चरों में भी फलनात्मक सम्बन्ध हो सकता है, जैसे :-

$$\mathrm{D} = f(\mathrm{P_1}, \mathrm{P_2}, \mathrm{P_3}, \ldots . \mathrm{P_n}, \mathrm{X}, \mathrm{Y})$$

उपरोक्त सम्बन्ध प्रकट करता है कि किसी वस्तु की माँग (D_1), इसकी कीमत (P_1), दूसरी सम्बन्धित वस्तुओं की कीमतों $\mathrm{P_2}, \mathrm{P_3}, \ldots \mathrm{P_n}$ आदि, उपभोक्ताओं की रुचियों (X) और उनकी आय (Y) का फलन है। इसका अर्थ है कि इस वस्तु की माँग इन सभी चरों पर निर्भर है। जैसे ही स्वतन्त्र चरों में परिवर्तन होते हैं, D_1 एक क्रमबद्ध (systematic) ढंग से बदलती है।

एक और फलनात्मक सम्बन्ध इस प्रकार है-

$$C = f(Y, P, M, r)$$

यह सम्बन्ध प्रकट करता है कि उपभोग (C), आय (Y), कीमत स्तर (P), मुद्रा की मात्रा (M) और ब्याज की दर (r) का फलन है।

आमतौर पर आर्थिक सम्बन्धों में हम मान्यता लेते हैं कि 'अन्य बातें समान रहें' (other things remaining the same or ceteris paribus)। माँग विश्लेषण में हम मानते हैं कि सम्बन्धित वस्तुओं की कीमतें, उपभोक्ताओं की रुचियां और उनकी आय समान रहती है। इस प्रकार वस्तु की माँग (D_1), उसकी कीमत (P_1) का फलन है -

$$D_1 = f(P_1, \overline{P_2}, \overline{P_3}, \ldots \overline{P_n}, \overline{X}, \overline{Y})$$

इस सम्बन्ध में $\overline{P_2}, \overline{P_3}, \ldots \overline{P_n}, \overline{X}$ और $\overline{Y}$ पर रेखायें (bars) दी गई हैं। रेखायें (bars) यह प्रकट करती हैं कि ये सभी तत्व स्थिर (Constant) हैं।

प्राचल (Parameter) उन तत्वों को कहा जाता है जिन्हें एक फलनात्मक सम्बन्ध में स्थिर माना जाता है।

$$C = f\ (\mathrm{Y}, \overline{\mathrm{P}}, \overline{\mathrm{M}}, \overline{\mathrm{W}})$$

इस फलन में उपभोग (C) आश्रित या निर्भर चर है। आप (Y) एक स्वतन्त्र चर है जबकि कीमत स्तर (P), मुद्रा की मात्रा (M) और धन (W) को स्थिर माना गया है। इस प्रकार P, M और W इस फलन में प्राचल है।

उत्पादन (Q) और रोजगार (N) में फलनात्मक सम्बन्ध को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है -

$$\mathrm{Q} = f(\mathrm{N}, \overline{\mathrm{T}}, \overline{\mathrm{K}})$$

इस सम्बन्ध में तकनीक (T) और पूँजी भंडार (K) को स्थिर माना गया है और ये प्राचल है और अल्पकाल में उत्पादन (Q), रोजगार (N) की मात्रा का फलन है।

1.3.3 काल-श्रेणी और तिर्यक-अनुभाग विश्लेषण (Time Series and Cross section Analysis)

यदि किसी चर के सम्बन्ध में किसी इकाई से भिन्न- भिन्न समयों जैसे वर्ष, महीनों या सप्ताहों में लगातार आँकड़े (data) प्राप्त किए गए हैं तो उस श्रेणी को काल-श्रेणी कहा जाता है। उदाहरण के लिए संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) के द्वारा मानव विकास सूचकांक प्रकाशित किए जाते हैं। लम्बे समय पर मानव विकास के ये सूचकांक एक समय-श्रेणी को प्रकट करते हैं। समय-श्रेणी के समंकों के आधार पर किए गए विश्लेषण या भविष्यवाणी को **समय श्रेणी विश्लेषण** का नाम दिया जाता है।

तिर्यक-अनुभाग विश्लेषण ऐसे आँकड़ों पर आधारित होता है जो किसी विशेष समय पर समाज के भिन्न-भिन्न उप-भागों या तिर्यक-अनुभागों से प्राप्त किए गए हैं। ये उप-भाग या अनुभाग उपभोक्ता, मज़दूर, फर्म, उद्योग या कुछ भौगोलिक क्षेत्र हो सकते हैं। मान लीजिए सरकार औद्योगिक श्रमिकों के लिए एक नई वेतन नीति लागू करना चाहती है। इसके बारे में लोगों की प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण **तिर्यक-अनुभाग अध्ययन** के द्वारा किया जा सकता है।

1.3.4 पश्चता (Lag)

समष्टि आर्थिक समस्याओं का या तो तात्कालिक समंजनों (instantaneous adjustments) या समय पश्चता समंजनों (lagged adjustments) के रूप में विश्लेषण किया जाता है। लगातार समंजनों में चरों की परिवर्तन की दरें ऐसे सामान्य सन्तुलन से सम्बन्ध रखती हैं कि समायोजन तत्काल होते चले जाते हैं और सन्तुलन कभी भंग नहीं होता। समय विश्लेषण (time analysis) में विभिन्न आर्थिक चरों का सम्बन्ध भिन्न-भिन्न समय अवधियों के साथ होता है। जैसे ही एक चर के मूल्य में परिवर्तन होते हैं तो सन्तुलन भंग हो जाता है। भिन्न-भिन्न चरों में पूर्ण मेल और समायोजन होने में कुछ समय अन्तराल (interval) लगता है। समायोजन के लिए आवश्यक समय के अन्तराल को पश्चता या समय-पश्चता (time lag) कहा जाता है। अर्थशास्त्र में हम उपभोग या खर्च पश्चता (Consumption or Expenditure Lag), उत्पादन पश्चता (Production Lag), आय पश्चता (Income Lag),

प्रशासनिक पश्चता (Administrative Lag), मज़दूरी कीमत पश्चता (Wage Price Lag) इत्यादि का अध्ययन करते हैं। **राबर्टसन (Robertson)** ने आय के स्तर का विश्लेषण खर्च पश्चता के द्वारा किया है। इसमें आज के खर्च का सम्बन्ध पिछले काल की आय के साथ जोड़ा गया है। यदि आय और खर्च के बारे में नीचे दिए गए समीकरण प्रयोग करते हैं तो सभी चरों का सम्बन्ध वर्तमान समय अवधि के साथ है।

$$Y_t = C_t + I_t$$

इस हालत में कोई समय पश्चता (time lag) नहीं पाई जाती। अब हम राबर्टसन के व्यावहारिक समीकरण को शामिल करते हैं।

$$C_t = f(Y_{t-1})$$

इसमें माना गया है कि आय और उपभोग में समय पश्चता है। यदि यह पश्चता दी गई हो तो आय और खर्च के सम्बन्ध को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :-

$$Y_t = C(Y_{t-1}) + I_t$$

इसी प्रकार उत्पादन की आधुनिक प्रक्रिया में उत्पादक के द्वारा वहन की जाने वाली लागत और अन्तिम उपभोक्ताओं द्वारा वस्तुओं को खरीदने के बीच समय की कुछ अवधियां गुजरती हैं। पश्चताओं का अध्ययन समय-विश्लेषण का सार है। यदि हम इनकी उपेक्षा करते हैं तो विभिन्न आर्थिक चरों में गतिशील समायोजनों की प्रक्रिया की व्याख्या कर सकना सम्भव नहीं है।

1.4 लेखा सम्बन्ध और व्यावहारिक सम्बन्ध या समानिकायें और समीकरण (Accounting and Behaviour Relationship or Identitiesand Equations)

ऐसा सम्बन्ध जो परिभाषा के आधार पर सत्य माना जाता है वह लेखा सम्बन्ध (Accounting relationship) या समानिका (Identity) कहलाता है। उदाहरण के लिए बचत की परिभाषा दी जाती है कि यह उपभोग पर आय का आधिक्य (excess) है। इसी प्रकार आय की परिभाषा दी जाती है कि यह उपभोग और निवेश का योग है। शामिल तत्वों का आकार चाहे कुछ भी हो, यदि उपरोक्त परिभाषा आधारित सम्बन्ध दिए गए हैं तो बचत और निवेश में आवश्यक रूप में समानिका (Identity) पाई जाती है।

$$S \equiv Y - C$$
$$Y \equiv C + I$$
$$S \equiv I$$

समानिका या लेखा सम्बन्ध स्वयंसिद्ध सत्य (truism) को प्रकट करता है। इसे चिन्ह '≡' के द्वारा प्रकट किया जाता है। इसका अर्थ है कि चरों के आकार चाहे कुछ भी हों उनमें सदा समानता पाई जाती है। यह भी कहा जा सकता है कि लेखा सम्बन्ध पुनरुक्ति (tautological) प्रकार का है। यह इस बात की व्याख्या नहीं करता कि भिन्न-भिन्न चरों ने कुछ विशेष मूल्यों को क्यों धारण किया है। उदाहरण के लिये इस बात का कोई अर्थ नहीं कि 1 जनवरी, 2012 को कपड़े की बेची गई मात्रा इसकी खरीदी गई मात्रा के समान थी या कि मुद्रा की पूर्ति इसकी माँग के समान है (MV=PT)।

दूसरी ओर व्यावहारिक (behavioristic) सम्बन्ध, बाजार व्यवहार को प्रकट करते हैं। ये केवल सत्यता नहीं परन्तु इस दृष्टिकोण से अर्थपूर्ण हैं कि उन्हें अनुभवजन्य (empirical), खोज और परीक्षणों से सत्य या असत्य सिद्ध किया जा सकता है। वे उपभोक्ताओं, निवेशकों, बाजार या पूरी अर्थ प्रणाली के बारे में कुछ परिकल्पना (hypothesis) अवश्य करते हैं। व्यावहारिक सम्बन्धों को समीकरणों के रूप में प्रकट किया जा सकता है और इन्हें चिन्ह '=' के द्वारा प्रकट किया जाता है। उदाहरण के लिये,

$$C = C_0 + bY$$

इस समीकरण में C = उपभोग के खर्च की मात्रा, C_0 = स्वतन्त्र (autonomous) उपभोग खर्च जो आय के शून्य स्तर पर है, b = उपभोग-आय अनुपात और Y = आय का स्तर है। ऊपर दिया गया सम्बन्ध एक

समुदाय के वास्तविक अनुभव पर आधारित है। इसके बारे में आप अगले अध्याय 'उपभोक्ता फलन' में विस्तार से पढेंगे।

इस प्रकार समानिकाओं और समीकरणों का अन्तर इस तथ्य को दर्शाता है कि चरों का आकार चाहे कैसा भी हो समानिकायें लागू होती हैं और उन्हें अनुभवसिद्ध निरीक्षण से प्रकट नहीं किया जा सकता। इसके विपरीत व्यावहारिक सम्बन्ध या समीकरण आर्थिक व्यवहार के बारे में ऐसा कथन (propositions) हैं जिनका अनुभवसिद्ध निरीक्षण के द्वारा परिक्षण किया जा सकता है।

1.5 पूर्ण रोजगार (Full Employment)

अन्य आर्थिक संकल्पनाओं की भाँति पूर्ण रोजगार संकल्पना भी एक ऐसा विषय है जिस पर अर्थशास्त्रियों की एक राय नहीं है। व्यष्टि आर्थिक दृष्टिकोण में यह संकल्पना एक ऐसी स्थिति की ओर संकेत करती है जिसमें अर्थव्यवस्था के सभी ऐच्छिक एवं स्वस्थ व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हो। जबकि समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण के अनुसार यह ऐसी स्थिति है जिसमें अर्थव्यवस्था के मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का पूरा उपयोग होता है। जबकि परम्परागत अर्थशास्त्री यह मानते थे कि अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति सदैव ही बनी रहती है, कीन्स तथा उसके अनुयायी यह मानते हैं कि पूर्ण रोजगार की प्राप्ति ही आर्थिक स्थायित्व (Economic Stability) का लक्ष्य है।

इस बारे में यह ध्यान देने योग्य बात है कि परम्परागत अर्थशास्त्रियों के अनुसार पूर्ण रोजगार का अभिप्राय अनैच्छिक बेरोजगारी की अनुपस्थिति से था अर्थात् एक ऐसी स्थिति जिसमें कोई भी श्रमिक अपनी इच्छा के बिना बेरोजगार नहीं है। **प्रोफेसर विलियम बैवरिज (William Beveridge)** के अनुसार, ***"पूर्ण रोजगार एक ऐसी स्थिति है जिसमें बेरोजगार व्यक्तियों की अपेक्षा नौकरियों के रिक्त स्थानों की संख्या अधिक होती है और जिनको बहुत कम समय में ही भरा जा सकता है।"*** तथापि **कीन्स** के अनुसार ***"यह एक समष्टि आर्थिक कल्पना है और एक ऐसी स्थिति है जिसमें प्रभावी माँग की किसी भी वृद्धि के परिणामस्वरूप उत्पादन तथा रोजगार के स्तर को बढ़ाया नहीं जा सकता क्योंकि अर्थव्यवस्था में सभी उपलब्ध संसाधन पहले से ही उपयोग में लगे हुए हैं।"*** लेकिन वास्तविक जीवन में ऐसी स्थिति को प्राप्त कर पाना कठिन है क्योंकि कोई भी अर्थव्यवस्था ऐसी नहीं हो सकती जिसमें किसी न किसी प्रकार की बेरोजगारी उपस्थित ना हो। माँग में परिवर्तन के कारण या तकनीकी उन्नति के कारण कम से कम संरचनात्मक बेरोजगारी तो अर्थव्यवस्था में हर समय ही बनी रहती है। इसके अतिरिक्त हर समय कुछ न कुछ व्यक्ति ऐसे अवश्य होते हैं जो एक काम को छोड़कर दूसरे काम में लगना चाहते हैं परन्तु समय पश्चता के कारण बेरोजगार रहते हैं।

1.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. चर ..... प्रकार के होते हैं। (5 **या** 3)
2. 'पूर्ण रोजगार एक समष्टि आर्थिक कल्पना हैं' यह ..... अर्थशास्त्री का कथन हैं। (सैमुएलसन **या** कीन्स)
3. ..... समीकरण का प्रकार नहीं हैं। (व्यावहारिक समीकरण **या** तिर्यक समीकरण)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. फलनात्मक सम्बन्ध दो या दो से ज्यादा चरों के बीच सम्बन्ध को दर्शाता हैं।
2. फलनात्मक सम्बन्ध के सन्दर्भ में एक चर में परिवर्तन होने से दुसरे चर में परिवर्तन नहीं होगा।
3. फलनात्मक सम्बन्ध में अन्य बातें या चर जो सम्बन्ध को प्रभावित कर सकते हैं वह समान नहीं होते।
4. फलनात्मक सम्बन्ध सिर्फ प्रत्यक्ष परिवर्तन को ही दर्शाता हैं।
5. काल-श्रेणी में सिर्फ एक महीनें या साल के आँकड़े लिए हैं।
6. काल-श्रेणी में किसी इकाई से भिन्न- भिन्न समयों जैसे साल, महीनों या सप्ताहों में लगातार आँकड़े लिए जाते हैं।

7. काल-श्रेणी में एक से ज्यादा इकाई की एक समय में बात करता हैं।
8. काल-श्रेणी में एक इकाई की एक जगह की बात करता हैं।

1.7 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने समष्टि अर्थशास्त्र की सामान्य अवधारणाओं के बारे में विस्तार से पढ़ा और उन्हें समझा। इकाई में सबसे पहले आपने समष्टि आर्थिक प्रतिमान के बारे में पढ़ा, समष्टि आर्थिक प्रतिमान के अंतर्गत आपने स्थिरांक, प्राचल, समीकरण एवं संतुलन शर्त के बारे में पढ़ा। स्थिरांक उसे कहा जाता हैं जिसकी मात्रा एवं आकार में कोई परिवर्तन नहीं होता हैं। प्राचल एक प्रतीक है जो किसी विशेष समस्या के लिए तो स्थिरांक है परन्तु विभिन्न समस्याओं में यह अलग-अलग मूल्य या मान ले सकता है। समीकरण को एक ऐसे कथन के रूप में परिभाषित किया जाता हैं जो दो अभिव्यक्तियों (statement) की समानता पर जोर देता है, जोकि समान चिह्न "=" से जुड़े हुए हैं। कोई भी आर्थिक प्रतिमान जब संतुलन के अध्ययन से सम्बंधित होता हैं तो उस प्रतिमान में दी गई समीकरण संतुलन की स्थिति को प्राप्त करने की प्रक्रिया की व्याख्या करती हैं, इसे ही संतुलन शर्त कहा जाता हैं। समष्टि आर्थिक प्रतिमान के अंतर्गत और भी धारणाएं सम्मिलित होती हैं जिसमें पहली धारणा हैं चर। आपने इकाई में पढ़ा की चर उस मात्रा को कहते हैं, जो किसी विशेष समय अवधि में परिवर्तित होती है। चर के सम्बन्ध में एक मात्रा कई मूल्य धारण करती है जो इसमें वृद्धि या कमी को प्रकट करती हैं। इसके साथ ही आपने जाना की चर तीन भागों में विभाजित हैं, ***पहला*** आश्रित और स्वतन्त्र चर, ***दूसरा*** अन्तर्जात और बहिर्जात चर और ***तीसरा*** स्टॉक और प्रवाह चर।

इसके साथ ही आपने चर के दों प्रकार के बारे में भी जाना, पहला प्रत्याशित और यथार्थ, समय की एक विशेष अवधि के आरम्भ में किए गए अनुमानों को प्रत्याशित चर कहा जाता है और यथार्थ दृष्टि से चरों से अभिप्राय समय की विशेष अवधि के अन्त में चरों के वास्तविक आकार से है। इसके साथ ही आपने समष्टि अर्थशास्त्र में विश्लेषण के बारे में भी पढ़ा जिसमें आपने काल-श्रेणी और तिर्यक-अनुभाग विश्लेषण के बारे में जाना। इकाई में आगे आपने पश्चता (lag) के बारे में पढ़ा और जाना, भिन्न-भिन्न चरों में पूर्ण मेल और समायोजन होने में कुछ समय अन्तराल (interval) लगता है। इसके साथ ही आपने आगे पढ़ा लेखा सम्बन्ध के बारे में पढ़ा और समझा की ऐसा सम्बन्ध जो परिभाषा के आधार पर सत्य माना जाता है वह लेखा सम्बन्ध या समानिका कहलाता है। आखिर में आपने पूर्ण रोजगार की स्थिति के बारे में पढ़ा की कैसे पूर्ण रोजगार एक और जाना की समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण के अनुसार यह ऐसी स्थिति है जिसमें अर्थव्यवस्था के मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का पूरा उपयोग होता है।

1.8 शब्दवाली (Glossary)

- **औसत बचत प्रवृत्ति (Average Propensity to Save):** आय का वह भाग जिसे खर्च करने के जगह बचाया जाता हैं। औसत बचत प्रवृत्ति की गणना कुल बचत को आय स्तर से विभाजित करके की जाती है।
- **औसत उपभोग प्रवृत्ति (Average Propensity to Consume):** औसत उपभोग प्रवृत्ति आय के उस भाग को दर्शाती हैं जिसे खर्च किया जाता हैं। औसत उपभोग प्रवृत्ति की गणना कुल उपभोग को आय स्तर से विभाजित करके की जाती है।
- **परिकल्पना (Hypothesis):** परिकल्पना एक धारणा या एक विचार हैं जिसे तर्क के लिए प्रस्तावित किया जाता है ताकि यह देखा जा सके की किया जाने वाला परीक्षण सच हो सकता है या नहीं।
- **तरलता (Liquidity):** तरलता की धारणा एक व्यक्ति की तरल परिसम्पत्तियों और कुल परिसम्पत्तियों में एक अनुपात है और इसे स्टॉक अनुपात चर भी कहा जाता है।
- **आय प्रचलन वेग (Income Velocity):** यह वह दर है जिस पर किसी अर्थव्यवस्था में उपभोक्ता और व्यवसाय सामूहिक रूप से पैसा खर्च करते हैं।

- **फलनात्मक सम्बन्ध (Functional Relationship):** यह दो या दो से अधिक चरों में उनकी मात्राओं में ऐसा विशिष्ट सम्बन्ध को प्रकट करता है कि एक चर की मात्रा में परिवर्तन एक निरन्तर और निश्चित रूप में दूसरे चर में परिवर्तन के साथ सम्बन्धित है।
- **काल-श्रेणी (Time-Series):** जब किसी चर के सम्बन्ध में किसी इकाई से भिन्न-भिन्न समयों में जैसे साल, महीनों या सप्ताहों में लगातार आँकड़े प्राप्त किए जाए तब उसे काल-श्रेणी कहते हैं ।
- **तिर्यक-अनुभाग विश्लेषण (Cross Section Analysis)** : जब किसी विशेष समय पर समाज के भिन्न-भिन्न उप-भागों या तिर्यक-अनुभागों से प्राप्त किए गए आँकड़ों पर आधारित विश्लेषण को तिर्यक-अनुभाग विश्लेषण कहते हैं।
- **समय-पश्चता (Time-Lag)** : समायोजन के लिए आवश्यक समय के अन्तराल को पश्चता या समय-पश्चता कहा जाता है।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. 3 2. कीन्स 3. तिर्यक समीकरण

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य	2. असत्य	3. असत्य	4. असत्य
5. असत्य	6. सत्य	7. असत्य	8. असत्य

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), ***Macroeconomic Analysis***, Galgotia Publications, New Delhi

1.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics, Theory and policy***, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.

- Ackley, G. (1978), *Macroeconomics : Theory and Policy*, Macmillan, New York

1.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. चर से आप क्या समझते हैं? विभिन्न प्रकार के चरों की व्याख्या कीजिए।
2. समष्टि आर्थिक प्रतिमान का क्या अर्थ हैं? इस प्रतिमान की विभिन्न धारणाओं का उल्लेख कीजिए।
3. फलनात्मक सम्बन्ध की उदाहरण के साथ व्याख्या कीजिए।

इकाई 2 समष्टि अर्थशास्त्र की प्रस्तावना
(Introduction of Macro Economics)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)
2.2 उद्देश्य (Objectives)
2.3 समष्टि अर्थशास्त्र की अवधारणा (Concept of Macro Economics)
2.3.1 समष्टि अर्थशास्त्र का अर्थ (Meaning of Macro Economics)
2.3.2 समष्टि अर्थशास्त्र की परिभाषा (Definition of Macro Economics)
2.3.3 समष्टि अर्थशास्त्र की विशेषताएँ (Features of Macro Economics)
2.4 समष्टि अर्थशास्त्र का इतिहास (History of Macro Economics)
2.5 समष्टि अर्थशास्त्र में विश्लेषण के प्रकार (Types of Analysis in Macro Economics)
2.6 समष्टि अर्थशास्त्र का क्षेत्र (Scope of Macro Economics)
2.7 समष्टि अर्थशास्त्र का महत्त्व एवं सीमाएं (Importance and Limitations of Macro Economics)
2.8 व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र में अंतर एवं परस्परिक निर्भरता (Difference and Interdependence between Microeconomics and Macroeconomics)
2.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
2.10 सारांश (Summary)
2.11 शब्दावली (Glossary)
2.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
2.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
2.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
2.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

समष्टि अर्थशास्त्र के सन्दर्भ में यह दूसरी इकाई हैं। इससे पहले की इकाई में आपने समष्टि अर्थशास्त्र में इस्तेमाल होने वाली निम्न अवधारणाओं के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत इकाई में आप समष्टि अर्थशास्त्र के बारे में पढेंगे, समष्टि अर्थशास्त्र का अर्थ क्या हैं यह जानेंगे, समष्टि अर्थशास्त्र के प्रकार एवं महत्व के बारे में भी पढेंगे एवं साथ ही यह भी जानेंगे की अर्थव्यवस्था में समष्टि अर्थशास्त्र की क्या भूमिका हैं। व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र के बीच के अंतर को भी आप इस इकाई में पढेंगे और साथ ही यह भी जानेंगे की यह दोनों कैसे एक दुसरे पर निर्भर हैं।

2.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:-

- ✓ समष्टि अर्थशास्त्र की अवधारणा एवं इतिहास को समझ सकेंगे।
- ✓ समष्टि अर्थशास्त्र में विश्लेषण किस प्रकार किया जाता हैं एवं इसके विश्लेषण के प्रकारों को समझेंगे।
- ✓ समष्टि अर्थशास्त्र के क्षेत्र, महत्व एवं सीमाओं को जानेंगे।
- ✓ व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र के बीच के अंतर एवं इनके बीच की परस्परिक निर्भरता को समझेंगे।

2.3 समष्टि अर्थशास्त्र की अवधारणा (Concept of Macro Economics)

समष्टि अर्थशास्त्र के बारे में सबसे पहले 1929-33 की महामंदी (Great Depression) में ही चर्चा हुई। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का यह मानना था की किसी भी अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति हमेशा बनी रहती हैं परन्तु इस महामंदी ने उनके इस कथन को तोड़ दिया। इस मंदी के कारण ही अर्थशास्त्रियों का ध्यान समष्टि आर्थिक समस्याओं की तरफ गया। **कीन्स (Keynes)** ने 1936 में अपनी पुस्तक ***"The General Theory of Employment, Interest and Money"*** में एक नए सिद्धान्त की बात की जिसे समष्टि आर्थिक सिद्धान्त (Macro Economic Theory) के नाम से जाना जाने लगा। समष्टि अर्थशास्त्र में हम संपूर्ण अर्थव्यवस्था का अध्ययन करते हैं। रोजगार, सामान्य कीमत-स्तर, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं आर्थिक विकास जैसी समस्याओं का अध्ययन समष्टि अर्थशास्त्र में किया जाता हैं।

2.3.1 समष्टि अर्थशास्त्र का अर्थ (Meaning of Macro Economics)

Macro अंग्रेज़ी भाषा का शब्द हैं जिसे ग्रीक के 'Macros' शब्द से उत्पन्न किया गया हैं, जिसका अर्थ होता हैं 'बड़ा' या 'सम्पूर्ण'। अत: समष्टि अर्थशास्त्र सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के समुच्चय (aggregates) और औसत (average) से संबंधित हैं, समष्टि अर्थशास्त्र में आय जैसे किसी विशेष या एकल चर को नहीं लिया जाता है, बल्कि संपूर्ण आय या राष्ट्रीय आय पर विचार किया जाता है जैसे, कुल समग्र, कुल उपभोग, कुल बचत, कुल निवेश, कुल माँग, कुल पूर्ति, कुल उत्पादन, कुल रोजगार, सामान्य कीमत-स्तर आदि। समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत विभिन्न समस्याओं का विवरण किया जाता हैं जोकि पूरी अर्थव्यवस्था से सम्बंधित होती हैं जैसे, रोजगार, विकास, व्यापक चक्र, आय इन सभी समस्याओं को समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत देखा जाता हैं।

समष्टि अर्थशास्त्र अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार एवं अधिकतम आय के स्तर की जानकारी भी देता हैं, समष्टि अर्थशास्त्र अर्थव्यवस्था के भिन्न समुच्चय और औसत को परखता हैं, यह किस तरह निर्धारित होते हैं यह देखता हैं एवं साथ ही इनके निर्धारित होने के तत्व कौन-कौन से हैं इस बारे में भी जानकारी देता हैं। दूसरे शब्दों में, समष्टि अर्थशास्त्र विभिन्न समुच्चय और औसत के अंतर्संबंधों, उनके निर्धारण एवं उनके बीच होने वाली अस्थिरता की व्याख्या करता है।

2.3.2 समष्टि अर्थशास्त्र की परिभाषा (Definition of Macro Economics)

समष्टि अर्थशास्त्र की परिभाषाएं कुछ इस प्रकार हैं:

प्रो. बोल्डिंग (Prof. Boulding) के अनुसार, *"समष्टि अर्थशास्त्र व्यक्तिगत मात्राओं का अध्ययन नहीं करता, बल्कि इन मात्राओं के समूह का अध्ययन करता है; व्यक्तिगत आय का नहीं, अपितु राष्ट्रीय आय का व्यक्तिगत कीमतों का नहीं, अपितु सामान्य कीमत-स्तर का; व्यक्तिगत उत्पादन का नहीं, अपितु राष्ट्रीय उत्पादन का। (Micro economics deals not with individual quantities as such, but with the aggregate of these quantities, not with individual incomes but with the national income, not with individual prices but with the price level not with individual output but with the national output)"*

प्रो. शेपिरो (Prof. Shapiro) के अनुसार, *"समष्टि अर्थशास्त्र सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के कार्यकरण से सम्बन्धित है। (Macro Economics deals with the functioning of the economy as a whole.)"*

जी. एक्ले (G. Ackley) के अनुसार *"समष्टि अर्थशास्त्र आर्थिक घटनाओं से वृहद् रूप से व्यवहार करता है। यह आर्थिक जीवन के कुल आयामों से संबंध रखता है। यह आर्थिक अनुभव के 'हाथी' के व्यक्तिगत अंगों के कार्यकरण, हड्डियों के जोड़ों और आयामों को देखने की बजाय, उसके कुल परिमाण और आकार तथा कार्यकरण को देखता है। यह उन वृक्षों से स्वतंत्र रहकर, जंगल की प्रकृति का अध्ययन करता है, जिनसे वह (जंगल) बना है। (Macro- Economics deals with economic affairs 'in the large'. It concerns the overall dimensions of economic life. It looks at the total size and shape and functioning of the 'elephant' of economic experience, rather than working or articulation or dimensions of the individual parts. It studies the character or dimensions of the individual parts. It studies the character of the forest, independently of the trees which compose it.)"*

2.3.3 समष्टि अर्थशास्त्र की विशेषताएँ (Features of Macro Economics)

समष्टि अर्थशास्त्र की परिभाषा एवं अर्थ के आधार पर इसकी विशेषताएँ दी गई हैं जो इस प्रकार हैं:

1. **समग्र इकाइयाँ (Composite units):** समष्टि अर्थशास्त्र में समग्र इकाइयों का अध्ययन किया जाता है ना कि एकल इकाइयों का अध्ययन। समष्टि अर्थशास्त्र में आय की नहीं बल्कि राष्ट्रीय आय की बात की जाती हैं ऐसे ही कुछ महत्वपूर्ण समग्र इकाइयों का अध्ययन किया जाता हैं जैसे, राष्ट्रीय बचत और विनयोग, सकल राष्ट्रीय उत्पाद, कुल रोजगार, समग्र माँग एवं समग्र पूर्ति आदि।
2. **संपूर्ण अर्थव्यवस्था (Whole Economy):** समष्टि अर्थशास्त्र में संपूर्ण अर्थव्यवस्था की समस्याओं पर ध्यान दिया जाता हैं, संपूर्ण अर्थव्यवस्था को ध्यान में रख कर ही समष्टि नीतियों का निर्माण किया जाता हैं एवं इसके प्रभाव का अध्ययन किया जाता है।
3. **तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study):** समष्टि अर्थशास्त्र में प्रत्येक इकाई या चर का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है, उदाहरण के लिए, यह दो समय अवधि के भीतर राष्ट्रीय आय, बचत, निवेश और कुल रोजगार आदि का अध्ययन करती है।
4. **आय का सिद्धांत (Theory of Income):** आय को निर्धारित एवं इसे प्रभावित करने वालो तत्वों का अध्ययन समष्टि अर्थशास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है इसलिए इसे आय का सिद्धांत भी कहते हैं। राष्ट्रीय आय केवल श्रम नियोजित करने से बढ़ती है इसलिए पूर्ण रोजगार के निर्धारक तत्व ही देश में आय निर्धारित करते हैं। अत: आय सिद्धान्त को रोजगार का सिद्धान्त भी कहा जाता हैं।

5. **व्यष्टि अर्थशास्त्र का पूरक (Compliment Micro Economics):** व्यष्टि अर्थशास्त्र द्वारा किए गये विश्लेषण से जो भी निष्कर्ष प्राप्त होते हैं उनकी सत्यता की जाँच समष्टि अर्थशास्त्र करता हैं। अत: इसलिए समष्टि अर्थशास्त्र को व्यष्टि अर्थशास्त्र का पूरक कहा जाता हैं।
6. **समष्टि उपकरण (Macro Equipments):** अर्थव्यवस्था में संतुलन बनाए में रखने एवं देश में विकास से सम्बन्धित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समष्टि उपकरणों का प्रयोग किया जाता है जैसे, मौद्रिक नीति, राजकोषीय नीति, आय नीति एवं विदेशी विनिमय नीति। इन्ही सब नीतियों को समष्टि उपकरण कहा जाता हैं।

2.4 समष्टि अर्थशास्त्र का इतिहास (History of Macro Economics)

प्रारम्भ से ही अर्थशास्त्रियों ने सूक्ष्म विश्लेषण का प्रयोग किया है तथा मार्शल द्वारा इस पद्धति को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया हैं। प्राचीन समय में आर्थिक विश्लेषण की एक पृथक तथा स्पष्ट शाखा के रूप में व्यापक या समष्टि अर्थशास्त्र विद्यमान नहीं था परन्तु समष्टि अर्थशास्त्र को प्राय: व्यष्टि अर्थशास्त्र के साथ मिलाकर प्रयोग में लाया जाता था।

समष्टि शब्द का प्रथम बार प्रयोग संभवत: **रैगनर फ्रिश** (Ragnar Frisher) ने 1933 में किया। जहाँ तक आर्थिक समस्याओं के अध्ययन की विधि के रूप में मेंक्रो शब्द के प्रयोग का प्रश्न है, तो यह कहा जा सकता है कि व्यापारीयों ने किया, हांलाकि वह एक अध्ययन विधि के रूप में समष्टि अर्थशास्त्र से परिचित नहीं थे परन्तु वे संपूर्ण अर्थव्यवस्था के निर्यात में वृद्धि के द्वारा समृद्ध बनाने पर जोर देते थे अत: उनका दृष्टिकोण समष्टिमूलक था। व्यापारिकता के बाद प्रकृतिवाद नामक विचारधारा ने भी समष्टि अर्थशास्त्र का प्रयोग किया। 18वीं सदी में इस विचारधारा के विचारक **डॉ. क्वेजने** (Dr. Quezne) ने समाज को तीन वर्गों में बांटा है ***पहला*** उत्पादक वर्ग (producing class), ***दूसरा*** सम्पत्ती स्वामी वर्ग (property owner class) और ***तीसरा*** अनुत्पादक वर्ग (unproductive class)। इन तीनों वर्गों के बीच ही **'धन के संचलन का सिद्धांत'** (Theory of Circulation of Money) प्रस्तुत किया, जिसे एक आर्थिक सारणी के माध्यम से व्यक्त किया गया था। इस प्रकार, संपूर्ण अर्थव्यवस्था में धन का वितरण समष्टि अर्थशास्त्र का विषय है।

1930 के पूर्व अर्थशास्त्रियों का ध्यान केवल व्यष्टि आर्थिक विश्लेषण पर केन्द्रित था क्योंकि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री यह मानना था कि अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति स्वयं ही बनी रहती है और उसमें होने वाले परिवर्तन अस्थायी होते है एवं जल्द ही समाप्त हो जाते है। वास्तविकता तो यह है कि उस समय की आर्थिक व्यवस्था प्रगतिशील एवं चलाने में आसान थी। अत: नव स्थापित अर्थशास्त्रियों ने संपूर्ण अर्थव्यवस्था को स्थिर माना एवं सामान्य कीमतों, उत्पादन की मात्रा आदि पर ध्यान ना देकर व्यक्तिगत कीमतों एवं मात्राओं के निर्धारण का अध्ययन एवं विश्लेषण किया। संपूर्ण अर्थव्यव्स्था को स्थिर मानने के पीछे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों की महत्वपूर्ण मान्यता हैं पूर्ण रोजगार की मान्यता। इस मान्यता के अनुसार जब अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति बनी रहेगी तो अल्पकाल में अर्थव्यवस्था का कुल उत्पादन स्थिर रहेगा तथा कीमत स्तर में कोई अस्थिरता नहीं होगी। ऐसी स्थिति में जहाँ कुल उत्पादन, कुल रोजगार और मूल्य स्तर यानी सभी समग्र चर स्थिर हैं तो विश्लेषण व्यक्तिवादी होगा। अब आप समझ रहे होंगे कि क्यों प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने अपना ध्यान व्यष्टि अर्थशास्त्र से सम्बन्धित समस्याओं जैसे उत्पादों के मूल्य तथा मूल्य निर्धाण की क्रिया पर केन्द्रित किया।

दरअसल, 1919-1929 के बीच संभावित उत्पादन या रोजगार (Potential Output and Employment) और वास्तविक उत्पादन या रोजगार (Actual Output and Employment) के बीच 5 प्रतिशत से अधिक का अंतर नहीं था। इसका अर्थ यह हुआ की किसी भी समय कुछ श्रमिक अपना रोजगार बदलते रहेंगे। अत: अर्थशास्त्रियों ने यह मान लिया किया कि अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी कभी भी 4 प्रतिशत से नीचे नहीं गिरेगी। 1978 के **हम्फ्रे-हाकिन्स** या पूर्ण रोजगार और संतुलित संवृद्धि विधि (Humphrey-Hawkins or Full Employment and Balanced Growth Act) ने 4 प्रतिशत बेरोजगारी को पूर्ण रोजगार का नाम दिया। मार्शल के समय तक, समष्टि अर्थशास्त्र अपने चरम पर पहुँच गया था। परन्तु 1930 की महा-मन्दी ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों की पूर्ण रोजगार की मान्यता एवं उस पर

आधारित सिद्धान्तों (रोजगार, आय और मूल्य स्तर) की सत्यता एवं उपयोगिता पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया। गंभीर आर्थिक संकट की इस स्थिति में अर्थव्यवस्था को महा-मन्दी से मुक्ति दिलाने के उद्देश्य से कीन्स ने उन कारणों का परीक्षण किया जिनके फलस्वरूप यह मंदी उत्पन्न हुई। इसी के सन्दर्भ में **कीन्स (Keynes)** ने 1936 में अपनी पुस्तक प्रकाशित की जिसे ***"The General Theory of Employment, Interest and Money"*** के नाम से जाना गया। अपनी इस पुस्तक में कीन्स ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों द्वारा दिए गये सिद्धांतों को चुनौती दी। कीन्स की इस पुस्तक के प्रकाशित होने के बाद ही समग्र विश्लेषण की दिशा में नई सोच शुरू हुई, अत: समष्टि अर्थशास्त्र की भी शुरुआत हुई।

जे.एम.कीन्स (J. M. Keynes) की पुस्तक **"जेनरल थियरी (General Theory)"** के प्रकाशन के बाद समष्टि विश्लेषण को दो भागों में बाँटा गया हैं, पहला प्रतिष्ठित समष्टिभावी दृष्टिकोण या कीन्स के पूर्ववर्ती समष्टिभावी दृष्टिकोण और दूसरा कीन्सीयन दृष्टिकोण।

कीन्स ने समष्टि अर्थशास्त्र में एक नए आर्थिक चिंतन या **'क्रांतिकारी सोच'** को जन्म दिया जिसे 'कीनेसियन क्रांति' कहा जाता है। महा-मन्दी से अर्थव्यवस्था को मुक्ति दिलाने वाला कीन्स का आर्थिक विचार 1960 की दशाब्दि में अपनी चरम सीमा पर था। कीन्स के द्वारा दिए गये यह सुझाव विकासशील देशों में तो अनुकूल परिणाम देते हैं क्योंकी यहाँ समस्या माँग में कमी की होती हैं परन्तु अगर समस्या पूर्ति में कमी की है तो यह उपचार प्रतिकूल परिणाम दे सकते हैं परन्तु कीन्स का आर्थिक विचार 1970 की दशाब्दि में कमजोर सा पड़ गया और यह लगने लगा की **'कीन्सियन उपचार'** वर्तमान आर्थिक समस्याओं के समाधान में प्रभावपूर्ण नहीं हो सकते, तभी प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के सिद्धान्तों का प्रतिपादन, सुधार एवं नवीकरण होने लगा जो कीन्सियन क्रांति के प्रभाव में दब से गये थे। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के नये आर्थिक विचारों को ही नव-प्रतिष्ठित के नाम से जाना गया। इसमें सोलो (Solow), स्वैन, (Swan), आदि ने नियोक्लासिकल संवृद्धि मॉडल प्रस्तुत किया जिसमें यह प्रतिपादित किया गया कि 'अर्थव्यवस्था में स्थिरता का तत्त्व आवश्यक रूप से रहता है और यदि पूर्ण रोजगार पथ से अलगाव (Isolate) होता है, तो भी इसके पुनः कायम होने की प्रवृत्ति होती है।'

2.6 समष्टि अर्थशास्त्र का क्षेत्र (Scope of Macro Economics)

जैसा कि अब आप जान गये हैं की समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत हम सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की बात करते हैं अत: इसका क्षेत्र बहुत विशद है। समष्टि अर्थशास्त्र के क्षेत्र के बारे में अब आप विस्तार से पढेंगे:

1. **आय तथा रोजगार का सिद्धान्त (Theory of Income and Employment):** समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत कुल माँग और कुल पूर्ति के आधार पर रोजगार के स्तर का निर्धारण किया जाता है। जिसके अंतर्गत समष्टि अर्थशास्त्र में रोजगार को निर्धारित करने वाले विभिन्न तत्वों, जैसे- कुल माँग, कुल पूर्ति, कुल उपभोग, कुल निवेश, कुल बचत आदि का अध्ययन किया जाता है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रीयों की धारणा यह थी की अर्थव्यवस्था में सदैव पूर्ण रोजगार की स्थिति बनी रहेगी, समष्टि अर्थशास्त्र में उनकी इस धारणा को गलत सिद्ध करते हुए आय तथा रोजगार के सिद्धान्त का अधिक उपयुक्त विश्लेषण किया गया है जिसके अंतर्गत सभी निर्धारित तत्वों का भी अध्ययन किया जाता हैं।
2. **मुद्रा एवं कीमत-स्तर का सिद्धान्त (Theory of Money and Prices):** मुद्रा और कीमत-स्तर में उतार-चढ़ाव का देश में उत्पादन, उपभोग, रोजगार आदि जैसी दैनिक गतिविधियों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत मुद्रा के कार्य और उससे संबंधित सिद्धांतों, अन्य वित्तीय संस्थानों और बैंकों के साथ-साथ बैंकिंग की प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है।
3. **आर्थिक विकास का सिद्धान्त (Theory of Economic Growth):** समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत हम सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को पढ़ते हैं अथवा उसका अध्ययन करते हैं, आर्थिक विकास के सिद्धान्तों का अध्ययन भी समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत ही होता हैं एवं यह सिद्धांत इसका एक महत्वपूर्ण अंग है। आर्थिक विकास के सिद्धांत के अंतर्गत किसी देश के अविकसित होने के कारणों तथा उस देश में विकास की नीतियों एवं तरीकों का अध्ययन किया जाता है।

4. **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का सिद्धान्त (Theory of International Trade):** अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सिद्धांतों की व्याख्या एवं अध्ययन भी समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत ही किया जाता हैं, इसमें कोटा (Quota), टैरिफ (Tariff) तथा संरक्षण (Protection) आदि का अध्ययन किया जाता हैं। अत: विभिन्न देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का भी अध्ययन किया जाता है।
5. **व्यापार-चक्र का सिद्धान्त (Theory of Trade Cycle):** अर्थव्यवस्था के अंतर्गत व्यापार-चक्र की समस्याए उत्पन्न होती हैं जिससे आर्थिक विकास प्रभावित होता हैं। किसी अर्थव्यवस्था में कभी तेजी तो कभी मंदी आती है, यह सब व्यापार चक्र का ही एक हिस्सा है। समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत हम व्यापार-चक्र की समस्याओं का भी अध्ययन करता है।
6. **वितरण का सिद्धान्त (Theory of Distribution):** वितरण के सिद्धांत में हम देखते हैं कि समाज के विभिन्न वर्गों के बीच आय कैसे वितरित की जाती है। समष्टि अर्थशास्त्र में श्रमिकों, पूंजीपतियों और अन्य सामाजिक वर्गों के सापेक्ष सामूहिक शेयरों की व्याख्या की जाती है। राष्ट्रीय आय कैसे समाज में वितरण की गई एवं यह वितरण बराबर हैं या असमान यह भी इसके अंतर्गत देखा जाता हैं।

2.7 समष्टि अर्थशास्त्र का महत्त्व एवं सीमाएं (Importance and Limitations of Macro Economics)

समष्टि अर्थशास्त्र का महत्त्व (Importance of Macro Economics):

समष्टि अर्थशास्त्र का अर्थव्यवस्था में क्या महत्व हैं इसकी व्याख्या निम्न बिंदुओं से की गई हैं:

1. **अर्थव्यवस्था की कार्य-प्रणाली को समझना (To Understand the Working of the Economy):** समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का विश्लेषण किया जाता हैं, अत: इसके चर हमें एक अर्थव्यवस्था की कार्य-प्रणाली को समझने में मदद करते हैं। राष्ट्रिय आय, कुल उपभोग, कुल उत्पादन, अर्थव्यवस्था में रोजगार क स्तर यह सभी हमें समष्टि अर्थशास्त्र से ही ज्ञात होता हैं।
2. **आर्थिक नीतियों के निर्माण में सहायक (Helpful in Making Economic Policies):** कोई भी आर्थिक नीति किसी विशेष व्यक्ति या विशेष जगह के लिए नहीं बनाई जाती, सरकार द्वारा बनाई गई आर्थिक नीति पुरे देश या पूरी अर्थव्यवस्था के लिए समान होती हैं। अत: सरकार पुरे देश के रोजगार के स्तर को देख कर ही रोजगार की नीति बनाती हैं। समष्टि अर्थशास्त्र सरकार के लिए नीतियां बनाने में मददगार साबित होती है। यह नीतियां अलग-अलग उदेश्य के लिए बनाई जाती हैं, सरकार इन नीतियों का निर्माण कुछ इस तरह करती हैं जिससे अर्थव्यवस्था में उपभोग, आय, उत्पादन एवं रोजगार का स्तर बढ़ सके।
3. **विकास नियोजन में सहायक (Helpful in Development Planning):** आज के समय में विकास नियोजन बहुत आवश्यक हैं, जिसके लिए सरकार को अर्थव्यवस्था के सिमित साधनों को ध्यान में रख कर ऐसे उदेश्य बनाने होते हैं जिससे किसी भी देश का विकास हो सके। सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की समस्याओं का विवरण करना होगा अथवा ऐसी योजना तैयार करनी होगी जिसकी मदद से देश का विकास हो सके, यह समष्टि अर्थशास्त्र के द्वारा ही संभव हैं।
4. **व्यापार चक्रों का अध्ययन (Study of Trade Cycles):** व्यापार चक्र में बदलाव हर एक अर्थव्यवस्था में देखने को मिलता हैं। कभी तेजी या कभी मंदी की स्थिति चलती रहती हैं जिससे अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता हैं, अत: उत्पादन, रोजगार एवं कीमत-स्तर भी इससे प्रभावित होते हैं और इनमें उतार-चढ़ाव होता रहता हैं। व्यापार चक्र में होने वाले उतार-चढ़ाव को रोजगार एवं आय जैसे सूचकांकों की सहायता से मापा जाता है। व्यापार चक्र में होने वाले बदलाव एवं व्यापार चक्र को संतुलन में रखने की प्रक्रिया का अध्ययन समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत किया जाता हैं।

5. **व्यष्टि अर्थशास्त्र के विकास में सहायक (Helpful in Development of Micro Economics):** व्यष्टि अर्थशास्त्र कहीं ना कहीं समष्टि अर्थशास्त्र पर भी निर्भर करती हैं। समष्टि अर्थशास्त्र में सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का विवरण या विश्लेषण किया जाता हैं। उधाहरण, पुरे देश का मजदूरी का स्तर किसी एक उधयोग की मजदूरी के स्तर को प्रभवित करता ही हैं। ऐसे ही जब तक सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में कुल माँग में कमी के कारण का पता नहीं चलता, तब तक व्यक्तिगत वस्तु की माँग में कमी के कारण को भी नहीं समझा जा सकता है।
6. **सामूहिक आर्थिक विरोधाभास को समझने में सहायक (Helpful in Understanding Macro Economic Paradox):** कोई ऐसी धारणा जो किसी एक व्यक्ति के लिए तो सही हैं परन्तु सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए गलत हो तो उसे सामूहिक आर्थिक विरोधाभास कहेंगे। मान लीजिए किसी देश में मंदी की स्थिति हैं, ऐसे में अगर कोई एक व्यक्ति बचत करता हैं तो वह उसके लिए लाभकारी हैं परन्तु अगर अर्थव्यवस्था में सभी लोग बचत करने लग जाए तो बचत में वृद्धि आने से मन्दी और बढ़ जाएगी। ऐसे में कुछ लोग या कुछ उद्योग तो लाभ भोगेंगे परन्तु कुछ घाटे में चले जाएँगे, व्यक्तिगत उद्योगों के अनुसार हम सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के बारे में सही जानकारी नहीं दे पाएँगे। सम्पूर्ण उद्योगों की जानकारी से ही हम एक निष्कर्ष तक पहुँच सकते हैं, अत: समष्टि अर्थशास्त्र का अध्ययन, जिसमें हम संपूर्ण अर्थव्यवस्था का विश्लेषण करते हैं, हमें इन विरोधाभासों को समझने में मदद करता है।

समष्टि अर्थशास्त्र की सीमाएं (Limitations of Macro Economics):

समष्टि अर्थशास्त्र के महत्त्व आप पढ़ चुके हैं, समष्टि अर्थशास्त्र की कुछ सीमाएँ एवं दोष भी हैं जो निम्न हैं:

1. **संरचना का भ्रम (Fallacy of Composition):** समष्टि अर्थशास्त्र का सबसे पहला दोष यह हैं की यह सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की ओर ध्यान देती हैं ना कि समूह की बनावट की ओर जिससे अनुचित निष्कर्ष आते हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए सामान्य कीमत-स्तर घट रहा हो परन्तु कृषि वस्तुओ की कीमतें बढ़ सकती हैं जिससे गरीब को नुकसान हो सकता हैं। यह मानना गलत है कि सामान्य मूल्य स्तर में गिरावट के कारण सभी वस्तुओं की कीमतें गिर रही हैं।
2. **बहुत अधिक सामान्यीकरण (Too much Generalisation):** समष्टि अर्थशास्त्र का एक और बड़ा दोष यह भी हैं कि समष्टि अर्थशास्त्र सामान्य निष्कर्षो को ही सत्य मान लेता हैं जोकि व्यक्तिगत इकाइयों पर लागू नहीं होते हैं। उदाहरण, किसी एक व्यक्ति के लिए बचत करना उसके लिए अच्छा साबित हो सकता हैं परन्तु अगर अर्थव्यवस्था में सभी व्यक्ति बचत करने लगे तो अर्थव्यवस्था में मंदी आ जाएगी।
3. **समूहों की विषमता (Heterogenity of Aggregates):** समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत लिये गये समूहों में विषमता होती है। इन समूहों के बीच असमानता के कारण इन्हें किसी एक माप या किसी एक संख्या से व्यक्त करना संभव नहीं है और ऐसा करना गलत होगा। परन्तु समष्टि अर्थशास्त्र विषमता को नहीं मानता हैं एवं सभी चरों का एक साथ अध्ययन किया जाता हैं।
4. **समग्रों को मापने में कठिनाई (Difficulty in the Measurement of Aggregates):** समग्रों को मापना एक कठिन कार्य हैं, किसी देश में कुल वस्तुओं और सेवाओं का सटीक माप करना कठिन एवं असंभव हैं। परन्तु इस समस्या को हल करने के लिए सरकार धन का सहारा लेती हैं जिससे निश्चित रूप से सटीकता बढ़ जाती है।

2.8 व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र में अंतर एवं परस्परिक निर्भरता (Difference and Interdependence between Micro Economicsand Macro Economics)

व्यष्टि अर्थशास्त्र तथा समष्टि अर्थशास्त्र में अन्तर

आधार (Basis)	व्यष्टि अर्थशास्त्र (Micro Economics)	समष्टि अर्थशास्त्र (Macro Economics)
1. परिभाषा	व्यष्टि अर्थशास्त्र के अन्तर्गत व्यक्तिगत इकाईयों का अध्ययन किया जाता है, जैसे- एक फर्म, एक उपभोक्ता आदि।	समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत व्यक्तिगत इकाई का नहीं बल्कि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का अध्ययन किया जाता है, जैसे-राष्ट्रीय आय, कुल रोजगार आदि।
2. उदेश्य	इसका उद्देश्य संसाधनों के कुशल वितरण करने से हैं एवं यह इसी से संबंधित सिद्धांतों, समस्याओं और नीतियों का अध्ययन करता है।	इसका उद्देश्य सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में आयी समस्याओं को हल करना हैं जैसे, पूर्ण रोजगार जैसी समस्या का अध्ययन करना है।
3.आधारभूत अंतर	व्यष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत हम माँग एवं पूर्ति को जैसे उपकरण पढ़ते हैं। इसमें मुख्य निर्धारक तत्व कीमत है, इसलिए इसे कीमत सिद्धान्त भी कहते हैं।	समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत समग्र माँग व समग्र पूर्ति जैसे तत्वों का अध्ययन किया जाता हैं। इसमें मुख्य निर्धारक तत्व आय है, इसलिए इसे आय सिद्धान्त भी कहा जाता है।
4. क्षेत्र	व्यष्टि अर्थशास्त्र का क्षेत्र: i. कीमत का सिद्धान्त ii. कारक मूल्य निर्धारण सिद्धांत या वितरण का व्यक्तिगत सिद्धांत iii. आर्थिक कल्याण का सिद्धांत	समष्टि अर्थशास्त्र का क्षेत्र: i. आय, उत्पादन एवं रोजगार का सिद्धांत ii. सामान्य कीमत-स्तर का सिद्धान्त iii. आर्थिक विकास का सिद्धान्त
5. अध्ययन की विधि	व्यष्टि अर्थशास्त्र के अन्तर्गत अध्ययन करते समय अन्य तत्वों को स्थिर माना जाता है। क्योंकी इसमें एक तत्व की निर्भरता दुसरे पर नहीं देखि जाती हैं इसलिए इस विधि को आंशिक सन्तुलन विश्लेषण कहते हैं।	समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत विभिन्न आर्थिक कारकों, जैसे राष्ट्रीय आय, कुल उपभोग, कुल बचत आदि के बीच परस्पर निर्भरता का अध्ययन किया जाता है। क्योंकी इसमें एक तत्व की निर्भरता दुसरे देखि जाती हैं इसलिए इसे सामान्य आर्थिक विश्लेषण भी कहा जाता है।
6. विरोधाभास	व्यष्टि अर्थशास्त्र के निष्कर्ष हमेशा संपूर्ण अर्थव्यवस्था पर लागू नहीं होते हैं, यदि कोई एक व्यक्ति बचत करता है तो उसे लाभ होगा परन्तु अगर अर्थव्यवस्था में सभी लोग बचत करने लगे तो मंदी आ सकती हैं।	समष्टि अर्थशास्त्र के निष्कर्ष किसी एक व्यक्ति या व्यक्तिगत उद्योग को प्रभावित कर सकते हैं। यदि अर्थव्यवस्था में सभी लोग बचत करने लगे तो इससे कुल उपभोग कम हो जाएगा जिससे आय का स्तर गिर सकता है, अत: प्रत्येक व्यक्ति को हानि होगी।
7. मान्यता	व्यष्टि अर्थशास्त्र पूर्ण रोजगार की मान्यता पर आधारित है। अत: अर्थव्यवस्था कुशल रूप से चल रही हैं।	समष्टि अर्थशास्त्र साधनों का कुशल प्रयोग नहीं होने की मान्यता पर आधारित हैं।

व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र में परस्परिक निर्भरता:

व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र के बीच अंतर आप पढ़ ही चुके हैं, इन दोनों विश्लेषण में अंतर होने का यह मतलब बिलकुल नहीं हैं की यह एक दुसरे के विरुद्ध हैं, व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र तो असल में एक दुसरे के पूरक हैं। यह दोनों ही एक दुसरे पर निर्भर करते हैं, व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र की निर्भरता के बारे में अब आप विस्तार से पढेंगे:

1. **व्यष्टि अर्थशास्त्र का अध्ययन समष्टि अर्थशास्त्र पर निर्भर करता हैं (Micro Economic Analysis depends on Macro Economics):** व्यष्टि अर्थशास्त्र में किसी भी चर का अध्ययन करने के लिए बहुत बार समष्टि अर्थशास्त्र पर निर्भर होना पड़ता हैं, अथवा समष्टि अर्थशास्त्र विश्लेषण की जरुरत पढ़ती हैं। इसे आप उदाहरण से समझ सकेंगे।
   i. किसी उद्योग में काम करने वाले कर्मचारियों को जो आय दी जाती है वह इस बात पर निर्भर करेगी कि अर्थव्यवस्था में अन्य उद्योगों में कर्मचारियों को कितनी आय दी जा रही है।
   ii. किसी वस्तु की कीमत केवल उसकी मांग और आपूर्ति से ही निर्धारित नहीं होती, किसी वस्तु की कीमत उससे संबंधित वस्तुओं की मांग और आपूर्ति पर भी निर्भर करती है।
   iii. उद्योग हमेशा अपना कुल उत्पादन कुल बाजार माँग, लोगों की आय और क्रय शक्ति के आधार पर तय करते हैं।
2. **समष्टि अर्थशास्त्र का अध्ययन व्यष्टि अर्थशास्त्र पर निर्भर करता हैं (Macro Economics Analysis depends on Micro Economic):** भले ही समष्टि अर्थशास्त्र सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का विश्लेषण करता हैं परन्तु फिर भी यह व्यष्टि अर्थशास्त्र पर कहीं ना कहीं निर्भर करता हैं क्योंकी सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था एक-एक व्यक्ति या इकाई से ही बनती हैं। इसे आप उदाहरण से समझ सकेंगे।
   i. किसी वस्तु की माँग बढ़ने पर उसकी कीमत के बढ़ने की भी सम्भावना रहती है।
   ii. अर्थव्यवस्था में कोई भी योजना बनाने के लिए व्यक्तिगत इकाई का अध्ययन किया जाता हैं ताकि वह योजना सब के लिए लाभकारी हो।
   iii. अर्थव्यवस्था में सामान्य कीमत-स्तर का निर्धारण एक-एक वस्तु की कीमत से ही किया जाता हैं।

2.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. समष्टि अर्थशास्त्र की विशेषता ..... हैं। (व्यक्तिगत इकाई **या** समग्र इकाइयाँ)
2. समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत .....का अध्ययन किया जाता हैं। (व्यक्तिगत फर्म **या** राष्ट्रीय आय)
3. ..... सिद्धान्त समष्टि अर्थशास्त्र में नहीं पढ़ाया जाता हैं। (कीमत **या** वितरण)
4. ..... अर्थशास्त्र का मुख्य उदेश्य सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था **के** विकास के लिए कार्य करना हैं। (व्यष्टि **या** समष्टि)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. व्यष्टि अर्थशास्त्र का अध्ययन समष्टि अर्थशास्त्र पर निर्भर करता हैं। **सत्य**
2. समष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत समग्र माँग व समग्र पूर्ति का अध्ययन किया जाता हैं। **सत्य**
3. समष्टि अर्थशास्त्र व्यापार चक्रों का अध्ययन करता हैं। **सत्य**
4. समष्टि अर्थशास्त्र में संरचना का भ्रम नहीं होता हैं। **असत्य**

2.10 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने समष्टि अर्थशास्त्र के बारे में विस्तार से पढ़ा और जाना की समष्टि अर्थशास्त्र सम्पूर्ण अर्थवयवस्था की समस्याओं का अध्ययन करता हैं इसके अंतर्गत रोजगार, विकास, व्यापक चक्र और राष्ट्रिय आय जैसी समस्याओं का अध्ययन किया जाता हैं। समष्टि अर्थशास्त्र की विशेषताओं के बारे में आपने

विस्तार से इस इकाई में पढ़ा, इसकी मुख्य छह विशेषताएँ होती हैं, पहली समग्र इकाइयों का अध्ययन, दूसरी संपूर्ण अर्थव्यवस्था का अध्ययन, तीसरी तुलनात्मक अध्ययन, चौथी आय का सिद्धांत, पाँचवी व्यष्टि अर्थशास्त्र का पूरक और छठी समष्टि उपकरण। इसके साथ ही आपने समष्टि अर्थशास्त्र के इतिहास के बारे में भी जाना और यह समझा की कैसे समष्टि अर्थशास्त्र की स्थापना हुई।

इकाई में आगे आपने समष्टि अर्थशास्त्र के क्षेत्र के बारे में जाना जोकि बहुत विशद हैं और पूरी अर्थव्यवस्था को साथ लेकर चलता हैं, इसके क्षेत्र में आय तथा रोजगार का सिद्धान्त, मुद्रा एवं कीमत-स्तर का सिद्धान्त, आर्थिक विकास का सिद्धान्त, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का सिद्धान्त, व्यापार-चक्र का सिद्धान्त एवं वितरण का सिद्धान्त शामिल होते हैं। इसके साथ ही आपने समष्टि अर्थशास्त्र के महत्त्व एवं सीमाओं के बारे में पढ़ा जिसमें आपने यह समझा की एक ओर समष्टि अर्थशास्त्र अर्थव्यवस्था की कार्य-प्रणाली को समझने एवं आर्थिक नीतियों को बनाने में सहायक होता हैं परन्तु यह सामान्य निष्कर्षो को ही सत्य मान लेता हैं जोकि व्यक्तिगत इकाइयों पर लागू नहीं होते हैं, अत: इसमें कुछ सीमाएँ भी हैं जिनके बारे में आप पढ़ चुके हैं। इकाई में आगे आपने व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र में अंतरों एवं इनकी एक दुसरे पर परस्परिक निर्भरता के बारे में भी पढ़ा और यह जाना की कैसे व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र एक दूसरे से भिन्न होने के बावजूद भी एक दूसरे पर निर्भर हैं।

2.11 शब्दावली (Glossary)

- **संभावित उत्पादन (Potential Output):** वह उत्पादन जो सभी दिए गए संसाधनों और जनशक्ति के साथ प्राप्त किया जा सकता है।
- **वास्तविक उत्पादन (Actual Output):** वह उत्पादन जो अर्थव्यवस्था में दिए गये संसाधनों और जनशक्ति के साथ वास्तव में उत्पाद हो रहा हैं, यह संभावित उत्पादन से कम होता हैं।
- **टैरिफ (Tariff):** टैरिफ एक ऐसा कर है जो एक देश द्वारा दूसरे देश को प्रभावित करने, राजस्व बढ़ाने या प्रतिस्पर्धी लाभ की रक्षा करने के लिए आयातित वस्तुओं और सेवाओं पर लगाया जाता है।
- **कोटा (Quota):** कोटा एक सरकार द्वारा लगाया गया व्यापार प्रतिबंध है जो उन वस्तुओं की संख्या या मौद्रिक मूल्य को सीमित करता है जिन्हें कोई देश किसी विशेष अवधि के दौरान आयात या निर्यात कर सकता है।
- **व्यापार-चक्र (Trade Cycle):** एक व्यापार चक्र आर्थिक गतिविधियों में विशेष रूप से रोजगार, उत्पादन और आय, कीमतों, मुनाफे आदि में उतार-चढ़ाव को संदर्भित करता है।

2.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. समग्र इकाइयाँ 2. राष्ट्रीय आय
3. कीमत 4. समष्टि

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. सत्य
3. सत्य 4. असत्य

2.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York

- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), *Macroeconomics*, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), *Macroeconomics*, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), *Macroeconomic Analysis*, Galgotia Publications, New Delhi

2.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Dwivedi, D.N. (2008) *Macro-Economics*, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) *Macro Economics*, Theory and policy, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) *Economics*, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), *Principles of Macro Economics*, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley, G. (1978), *Macroeconomics : Theory and Policy*, Macmillan, New York

2.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. समष्टि अर्थशास्त्र से आप क्या समझते हैं? इसकी विशेषताएँ, महत्त्व एवं सीमाओं की व्याख्या कीजिए।
2. व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र में क्या अंतर हैं? इन दोनों के बीच के परस्परिक निर्भरता की भी व्याख्या कीजिए।
3. समष्टि अर्थशास्त्र के अर्थ एवं परिभाषा की व्याख्या कीजिए। समष्टि अर्थशास्त्र के क्षेत्र एवं विश्लेषण के प्रकार को भी विस्तार से बताइए।

इकाई 3 समष्टि आर्थिक साम्य
(Macro Economic Equilibrium)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)
3.2 उद्देश्य (Objectives)
3.3. साम्य की अवधारणा (Concept of Equilibrium)
3.4 समष्टि आर्थिक साम्य के प्रकार (Types of Macro Economic Equilibrium)
3.4.1 समष्टि स्थैतिक (Macro Static)
3.4.2 तुलनात्मक स्थैतिक समष्टि अर्थशास्त्र (Comparative Static Macro Economics)
3.4.3 गत्यात्मक समष्टि आर्थिक अर्थशास्त्र (Limitations of Comparative Static Macro Economics)
3.5 समष्टि आर्थिक साम्य का महत्व (Importance of Macro Economic Equilibrium)
3.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
3.7 सारांश (Summary)
3.8 शब्दावली (Glossary)
3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
3.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
3.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पहले की दों इकाइयों में आप समष्टि अर्थशास्त्र की मुख्य अवधारणाओं, उसके अर्थ, विशेषताओं, महत्व एवं सीमाओं के बारे जान ही गए हैं। स्थैतिक साम्य, प्रावैगिकी साम्य एवं तुलनात्मक साम्य के बारे में आप पहले पढ़ चुके हैं। इस इकाई में आप यह पढेंगे कि समष्टि अर्थशास्त्र में साम्य या साम्य की स्थिति किस प्रकार स्थापित होती हैं। स्थैतिक, प्रावैगिकी एवं तुलनात्मक साम्य को अब आप समष्टि अर्थशास्त्र की दृष्टि से जानेंगे, आप यह समझेंगे की सम्पूर्ण अर्थशास्त्र में साम्य किस प्रकार स्थापित होता हैं एवं अगर किसी वजह से यह साम्य गड़बड़ा जाए तो वापिस इसे किस प्रकार स्थापित किया जाता हैं। इकाई में आप यह भी पढेंगे की व्यष्टि अर्थशास्त्र से समष्टि अर्थशास्त्र की ओर संक्रमण क्यों हुआ, समष्टि अर्थशास्त्र की आवश्यकता क्यों पड़ी एवं इसके महत्व को भी आप विस्तार से इस इकाई में जानेंगे।

3.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढने के बाद आप:

- ✓ यह समझेंगे कि समष्टि अर्थशास्त्र में साम्य किस प्रकार स्थापित होता हैं।
- ✓ हम समीकरणों के साथ समष्टि स्थैतिक विश्लेषण को समझेंगे।
- ✓ तुलनात्मक स्थिर समष्टि आर्थिक मॉडल को समझेंगे।
- ✓ तुलनात्मक स्थिर समष्टि आर्थिक मॉडल की सीमाओं एवं महत्व को भी जानेंगे।
- ✓ गत्यात्मक विश्लेषण के बारे में जानेंगे।
- ✓ यह भी समझ सकेंगे कि व्यष्टि अर्थशास्त्र से समष्टि अर्थशास्त्र की ओर संक्रमण किस प्रकार हुआ।

3.3. साम्य की अवधारणा (Concept of Equilibrium)

साम्य का अर्थ (Meaning of Equilibrium):

साम्य या सन्तुलन शब्द भौतिक विज्ञान (Physics) से लिया गया है। '***संन्तुलन'*** शब्द का अंग्रेजी रूपान्तर ***Equilibrium*** लैटिन भाषा के दो शब्दों '***Acqus'*** अर्थात् समान एवं '***Libra'*** अर्थात् साम्य से हुआ है। इस प्रकार सन्तुलन का अर्थ है **समान सन्तुलन**।

अर्थशास्त्र में यद्यपि यह शब्द भौतिक विज्ञान (Physics) से लिया गया है फिर भी अर्थशास्त्र में इसका अर्थ वह नहीं हैं जो भौतिक विज्ञान में है। भौतिक विज्ञान में इसका अर्थ स्थिर अवस्था (State of Rest) से लिया जाता है। यह दशा उस समय होती है जब दो विरोधी शक्तियाँ एक समान बल का प्रयोग कर रही हों और उसके परिणामस्वरूप स्थिति में किसी प्रकार का परिवर्तन ना आए। इस प्रकार इसका अर्थ यह हुआ कि साम्य की स्थिति में परिवर्तन की सम्भावना नहीं होती या किसी प्रकार की कोई गति नहीं होती। किन्तु अर्थशास्त्र में सन्तुलन का अर्थ स्थिर अवस्था अथवा अर्थव्यवस्था में गतिहीनता से नहीं लिया जाता। यदि ऐसा मान लिया जाए तो उत्पादन, व्यापार, उपभोग, विनिमय इत्यादि सभी क्रियाएँ ठप्प हो जाएगी और अर्थव्यवस्था छिन्न-भिन्न (Crash) हो जाएगी। अर्थशास्त्र में सन्तुलन की दशा में ऐसी सभी प्रकार की क्रियाएँ होती रहती हैं किन्तु इन क्रियाओं की दर में कोई परिवर्तन नहीं होता। अत: अर्थशास्त्र में सन्तुलन की अवस्था उस स्थिति को कहते हैं जिसमें गति तो होती है परन्तु गति की दर में परिवर्तन नहीं होता।

उदाहरण के लिए, रस्सा-कशी (Tug of War) प्रतियोगिता में जब दोनों टीमें बराबर बल का प्रयोग कर रही होती हैं तो रस्सा स्थिर स्थिति में आ जाता है। इसी प्रकार जब तराजू के दोनों पलड़ों में बराबर का वजन होता है तो तराजू की डंडी सीधी रहती है। ये अवस्थाएँ सन्तुलन स्थिति की सूचक हैं।

साम्य की परिभाषा (Definition of Equilibrium):

प्रो. स्टिगलर (Prof. Stigler) के अनुसार, ***"साम्य वह स्थिति है जिसमें गति की शुद्ध प्रवृत्ति न हो, हम शुद्ध प्रवृत्ति इस कथन पर बल देने के लिए कहते हैं कि यह स्थिति आवश्यक रूप से आकस्मिक जड़ता की नहीं होती अपितु इसके स्थान पर यह बलशाली शक्तियों को निष्प्रभावित करने की स्थिति को प्रदर्शित***

करती हैं। (An Equilibrium is a position from which there is no net tendency to move, we say net tendency to emphasise the fact that it is not necessarily a state of sudden inertia, but may instead represent the cancellation of power forces.)"

प्रो. जे. के. मेहता (Prof. J. K. Mehta) के शब्दों में, *"अर्थशास्त्र में साम्य, गति में परिवर्तन की अनुपस्थिति को प्रदर्शित करता है। (Equilibrium in Economics denotes the absence of change in movement.)"*

प्रो. हेन्सन (Prof. Hanson) के शब्दों में *"साम्य वह अवस्था है, जिसमें उस समय पर विद्यमान आर्थिक बलों में परिवर्तन की प्रवृत्ति नहीं होती। (Equilibrium is a situation in which economic forces, as they exist at the time, have no tendency to change)"*

सीटोवस्की (Scitovasky) के अनुसार, *"कोई एक बाजार अथवा एक अर्थव्यवस्था अथवा व्यक्तियों या फर्म का कोई एक समूह, सन्तुलन की अवस्था में तब कहा जाता है जबकि इसमें कोई सदस्य अपने व्यवहार में परिवर्तन करने की इच्छा नहीं करता। इसलिए एक समूह को सन्तुलन में होने के लिए, उसके सभी सदस्यों का साम्य में होना आवश्यक है और प्रत्येक सदस्य का सन्तुलन व्यवहार अन्य सभी सदस्यों के सन्तुलन व्यवहार के अनुरूप होना चाहिए।"*

3.4 समष्टि आर्थिक साम्य के प्रकार (Types of Macro Economic Equilibrium)

साम्य के अर्थ को आप जान ही गए हैं, समष्टि अर्थशास्त्र में साम्य के मुख्य तीन प्रकार होते हैं, **पहला** समष्टि स्थैतिक, **दूसरा** तुलनात्मक स्थिर एवं **तीसरा** गत्यात्मक विश्लेषण। अब आप इन तीनों प्रकारों को एक-एक कर विस्तार से पढेंगे।

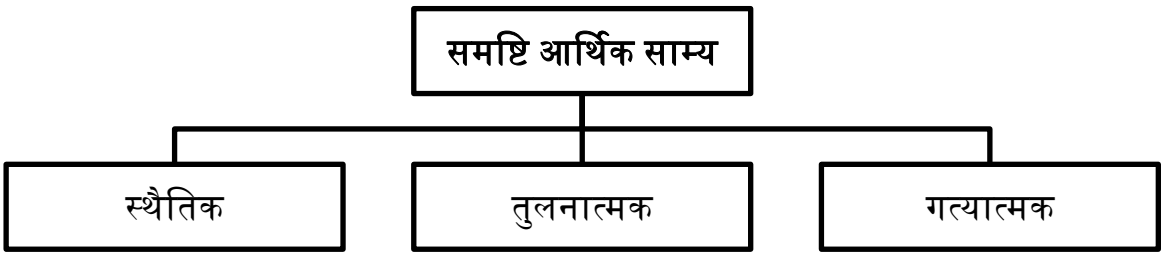

3.4.1 स्थैतिक समष्टि अर्थशास्त्र (Static Macro Economics)

स्थैतिक जिसे अंग्रेज़ी में Statics कहते हैं, ग्रीक भाषा के Statike शब्द से बना है जिसका अर्थ होता है स्थिर करना। भौतिकी (Physics) में इसे स्थिरता की वह स्थिति कहा जाता हैं, जहाँ किसी प्रकार की गति ना हो। अर्थशास्त्र में इसका अर्थ है एक विशेष स्तर पर गति की एक विशिष्ट स्थिति जिसमें कोई परिवर्तन नहीं होता है। **क्लार्क (Clark)** के अनुसार स्थैतिक वह स्थिति है जहाँ अनुपस्थिति में पाँच प्रकार के परिवर्तन प्रमुख होते हैं, ***पहला*** जनसंख्या का परिमाण, ***दूसरा*** पूँजी की पूर्ति, ***तीसरा*** उत्पादन के तरीके, ***चौथा*** व्यापार संगठन के रूप में और ***पाँचवा*** लोगों की आवश्यकताएं स्थिर रहती हैं परन्तु अर्थव्यवस्था समान गति से काम करती रहती है। **प्रो. मार्शल (Prof. Marshall)** का कहना है, ***"इस सक्रिय परंतु अपरिवर्तनशील प्रक्रिया के लिए 'स्थैतिक अर्थशास्त्र' शब्दावली का व्यवहार होना चाहिए।"*** इस प्रकार स्थैतिक अवस्था वह काल-रहित अर्थव्यवस्था है जहाँ कोई परिवर्तन नहीं होता और जो निश्चय से साम्य में होती है। सूचकांक, वर्तमान माँग, उत्पादन और वस्तुओं और सेवाओं की कीमतें स्वचालित रूप से समायोजित हो जाती हैं। स्थैतिक अवस्था में ना तो अतीत होता है और ना ही

भविष्य, इसलिए इसमें अनिश्चितता का तत्व बिल्कुल नहीं होता। इस प्रकार **प्रो. कुज़नेट्स (Prof. Kuznets)** का विश्वास है, ***"यह मान लेने पर कि निरपेक्ष अथवा सापेक्ष तौर से शामिल आर्थिक मात्राओं में समरूपता और स्थिरता होती है, स्थैतिक अर्थशास्त्र संबंधों और प्रक्रियाओं पर विचार करता हैं।"***

समष्टि-स्थैतिकी विश्लेषण अर्थव्यवस्थाओं की स्थैतिक साम्य अवस्था की व्याख्या करता है। इसे **प्रो. कुरीहारा (Prof. Kurihara)** द्वारा बहुत अच्छे ढंग से इन शब्दों में समझाया गया है, ***"यदि उद्देश्य समस्त अर्थव्यवस्था की 'स्थिर तस्वीर' दिखाना हो, तो समष्टि स्थैतिकी तरीका सही तकनीक है। क्योंकि यह तकनीक साम्य की अंतिम अवस्था में निहित समायोजन की प्रक्रिया के निर्देश के बिना समष्टि चरों में सम्बन्धों की खोज की है।"*** ऐसी साम्य की अंतिम अवस्था को इस समीकरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है,

$$Y = C + I$$

यहाँ Y कुल आय है, C कुल उपभोग व्यय तथा I कुल निवेश व्यय है। यह बिना किसी समायोजन प्रक्रिया के कुल निवेश व्यय का समय-मुक्त समानता समीकरण है। यह बिना किसी समायोजन प्रक्रिया के समय-मुक्त समानता समीकरण है।

यदि कुल उपभोग अर्थव्यवस्था से संबंधित है, तो इसका फलन होगा $C = a + bY$ होगा। यदि निजी क्षेत्र में कुल स्वायत्त निवेश (total autonomous investment) और कुल सरकारी व्यय (total government expenditure) का स्तर स्थिर है और कुल राष्ट्रीय आय $Y = C + I + G$ साम्य की स्थिति की सूचक है, तो उपलब्ध जानकारी और तथ्यों के आधार पर हम निम्नलिखित परिणाम पाते हैं।

$$C = a + bY$$
$$I = \bar{I}$$
$$G = \bar{G}$$
$$\text{अतः } Y = a + bY + \bar{I} + \bar{G}$$

अर्थव्यवस्था को स्थिर साम्य आय (Static equilibrium income Y_e) की स्थिति में देखते हुए, हम कह सकते हैं कि साम्य आय $Y_e = Y$ यानी:

$$Ye = a + bY + \bar{I} + \bar{G}$$

अर्थात् स्थैतिक साम्य आय (Y_e)के निर्धारण हेतु हम यह कहेंगे कि

$$Ye = \frac{1}{1-b}(a + \bar{I} + \bar{G})$$

स्थैतिक साम्य आय का यह स्तर निजी स्वायत्त निवेश $\bar{I}$, स्वायत्त सरकारी व्यय $\bar{G}$ तथा उपभोग फलन विद्यमान धनात्मक अचल संख्या a के संदर्भ में निवेश गुणक की क्रिया से प्राप्त होता है। समीकरण में प्रस्तुत स्थिर संख्या b उपभोग करने की सीमांत प्रवृत्ति (marginal propensity to consume) है जिसका फलन $b\frac{\Delta C}{\Delta Y}$ हैं, जिसका वर्णन आगे किया जाएगा।

यदि उपरोक्त समीकरण में विभिन्न मात्राओं को संख्यात्मक रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाए की:

a = 25 करोड़ रूपये
$\bar{I}$ = 25 करोड़ रूपये
$\bar{G}$ = 25 करोड़ रूपये
b = 0.75

ऐसी स्थिति में अर्थव्यवस्था में साम्य की स्थिति में कुल साम्य आय इस प्रकार ज्ञात होगी।

$$Ye = Y = \frac{1}{1-0.75}(25 + 25 + 25) = \frac{1}{0.25} \times 75 = 300 \text{ करोड़ रूपये}$$

इस कुल साम्य आय का चित्रमय विश्लेषण चित्र संख्या 3.1 में प्रस्तुत किया गया है।

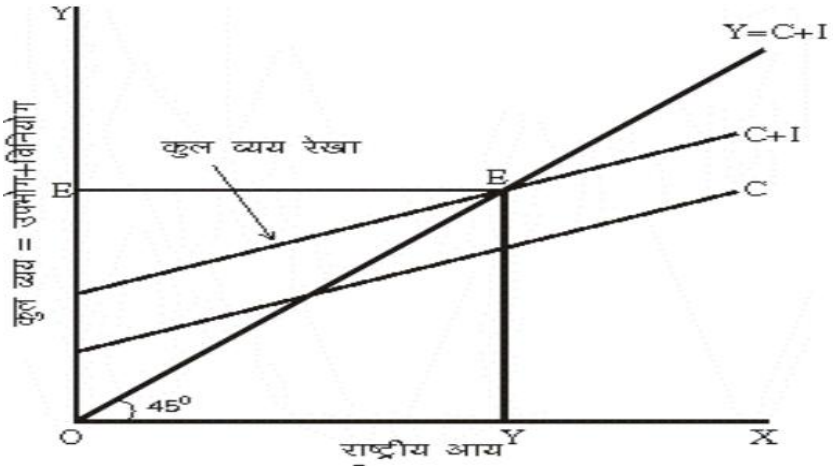

चित्र 3.1

3.4.2 तुलनात्मक स्थैतिक समष्टि अर्थशास्त्र (Comparative Static Macro Economics)

अब आप साम्य स्थिति के तुलनात्मक स्थिर समष्टि आर्थिक मॉडल को समझेंगे। उपरोक्त उदाहरण को संशोधित करते हुए, मान लीजिए कि प्रारंभिक स्वायत्त सरकारी व्यय (autonomous government expenditure) में 50 करोड़ रुपये की वृद्धि हुई है, यानी $\Delta\bar{G}$ = 50 करोड़ रुपये। हालाँकि सरकारी व्यय को छोड़कर अन्य सभी स्वायत्त मात्राएँ स्थिर हैं, सरकारी व्यय में 50 करोड़ रुपये की वृद्धि के परिणामस्वरूप प्रारंभिक कुल इक्विटी आय (total equity income) 300 करोड़ रुपये की राशि में परिवर्तन एवं वृद्धि होगी।

यदि उपर्युक्त समीकरण $Ye = C + \bar{I} + \bar{G}$ में दाईं ओर का कुल व्यय और बाईं ओर की राशि साम्य आय को दर्शाती है, तो यदि सरकारी व्यय में $\Delta\bar{G}$ की मात्रा बढ़ जाती है, तो कुल व्यय कुल आय से अधिक हो जाएगा। फलस्वरूप, 50 करोड़ रूपये के अतिरिक्त सरकारी व्यय को बनाये रखने हेतु कुल साम्य आय में भी वृद्धि होना आवश्यक होगा। परन्तु यह तभी सम्भव होगा जब आरम्भिक साम्य आय उच्चतर नई साम्य आय को प्राप्त होकर 500 करोड़ रूपये हो जाएगी। इस निष्कर्ष को निम्नलिखित समीकरणों के द्वारा समझाया जा सकता है।

$$Ye = \frac{1}{1-b}(a + \bar{I} + \bar{G})$$

$$Ye = \frac{1}{1-0.75}(25 + 25 + 25 + 50) = 500$$

साम्य आय में कुल परिवर्तन $\Delta Y = Ye - Ye$ = 200 करोड़ रूपये है।

इससे आप देख सकते हैं कि सरकारी व्यय में 50 करोड़ रुपये की वृद्धि से साम्य आय में 200 करोड़ रुपये की वृद्धि होती है। एवं अर्थव्यवस्था पुरानी साम्य स्थिति से विचलित होकर नई साम्य स्थिति में पहुँच जाती है जहाँ कुल साम्य आय 500 करोड़ रूपये है। यही तुलनात्मक स्थैतिक समष्टि आर्थिक विश्लेषण है तथा इसे चित्र संख्या 3.2 में प्रस्तुत किया गया है।

तुलनात्मक स्थैतिक व्यापक आर्थिक विश्लेषण में, हम तात्कालिक गुणक (instantaneous multiplier) के एक चर या पैरामीटर में परिवर्तन से उत्पन्न प्रतिक्रिया का अध्ययन करते हैं। जैसा कि उपरोक्त चित्र से स्पष्ट है, कुल सरकारी व्यय में 50 करोड़ रूपये राशि की वृद्धि होने के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था में कुल साम्य-आय 300 करोड़ रूपये से बढ़कर 500 करोड़ हो जाती है, अर्थात् कुल साम्य आय में 200 करोड़ राशि में वृद्धि हो जाती है।

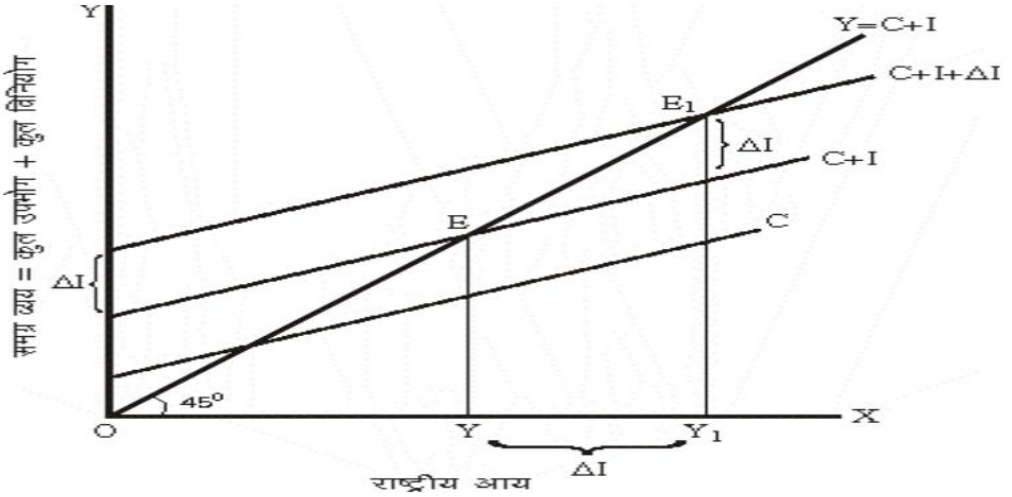

चित्र 3.2

तुलनात्मक स्थिर समष्टि अर्थशास्त्र की सीमाएं (Limitations of Comparative Static Macro Economics):

तुलनात्मक स्थैतिकी विश्लेषण के बारे में आप पढ़ ही चुके हैं एवं यह भी जान गये हैं की यह कैसे आय में परिवर्तन करता हैं। परन्तु तुलनात्मक स्थैतिकी विश्लेषण की कुछ सीमाएं भी हैं जिनके बारे में आप अब विस्तार से पढेंगे। इसकी सीमाएँ निम्नलिखित हैं:

1. तुलनात्मक स्थैतिकी विश्लेषण का क्षेत्र सीमित है, इसमें बहुत-सी महत्वपूर्ण आर्थिक समस्याओं शामिल नहीं होती हैं। ये समस्याएँ आर्थिक उतार-चढ़ाव एवं विकास की समस्याएँ हैं जिनका अध्ययन तकनीकी अर्थशास्त्र की पद्धति से ही किया जा सकता है।
2. तुलनात्मक सांख्यिकी विश्लेषण साम्य की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुँचनें की प्रक्रिया को समझाने में असमर्थ है। यह केवल गतियों की एक आंशिक झलक ही देता है क्योंकि हमें केवल दो 'स्थिर चित्रों' की तुलना करनी होती है, जबकि तकनीक हमें पूरी प्रक्रिया समझाती हैं।
3. इस विधि के अंतर्गत यह निश्चित नहीं होता कि नया साम्य कब स्थापित होगा क्योंकि यह विधि संक्रमण काल (transition period) की उपेक्षा करती है। यह तुलनात्मक सांख्यिकी को आर्थिक विश्लेषण का एक अपूर्ण और अवास्तविक तरीका बनाती है।

तुलनात्मक स्थिर समष्टि अर्थशास्त्र का महत्व (Importance of Comparative Static Macro Economics):

तुलनात्मक स्थैतिकी विश्लेषण में कमियाँ होने के बावजूद भी **हिक्स (Hicks)** ने इस विधि की प्रशंसा की है। उनके अनुसार अशांतकारी कारकों के प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए यह विधि सराहनीय है। यह परिवर्तन की प्रक्रिया में स्थिरता पुनः स्थापित करती है। यदि आर्थिक चरों में कुछ परिवर्तन होते हैं जो निरंतर परिवर्तन की प्रक्रिया को गति प्रदान करते हैं, तो ऐसे में यह बताना संभव नहीं है कि यह प्रक्रिया कब समाप्त होगी। इसी प्रकार यदि साम्य मे एक बार गड़बड़ हो जाती है जिससे असाम्य की निरंतर प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है तो उसके पुनः साम्य की स्थिति में जाने को निश्चित तौर से बताना संभव नहीं होता। ऐसी स्थितियों में, तुलनात्मक सांख्यिकी साम्य के कुछ बिंदुओं को दिखाकर परिवर्तन की दिशा बता सकती है। इस प्रकार यह विश्लेषण अनिश्चित स्थिति में निश्चितता प्रदान करता है।

3.4.3 गत्यात्मक समष्टि अर्थशास्त्र (Dynamic Macro Economics)

गत्यात्मक विश्लेषण संतुलित आय के स्तर में हुए परिवर्तन के मार्ग की व्याख्या करता है। यह अवधि गुणक की विधि द्वारा किसी चर में हुए परिवर्तन द्वारा उत्पन्न प्रतिक्रिया का अध्ययन करती है। गतिशील व्यापक आर्थिक विश्लेषण हमें बताता है कि सरकारी व्यय में, एक निश्चित राशि की वृद्धि के

बाद, आय में वृद्धि की प्रक्रिया तब तक जारी रहती है जब तक एक स्थिर साम्य आय स्तर स्थापित नहीं हो जाता। इस प्रकार, गत्यात्मक आर्थिक विश्लेषण उन **'गतिमान साम्य स्थितियों'** का विश्लेषण है जो अपेक्षित और वास्तविक स्थिर साम्य की स्थितियों के बीच उत्पन्न होते है।

कुल आय की प्रारंभिक साम्य स्थिति और कुल आय की अंतिम साम्य स्थिति के बीच साम्य आय में कुल वृद्धि की प्रक्रिया को समझने के लिए, हमें इसे आय के समय-पालन वाले विस्तार पथ के संदर्भ में देखना चाहिए। मान लीजिए कि शुरुआती अवधि में कुल साम्य आय का स्तर 300 करोड़ रुपये रखते हुए, हम अगली समय अवधि में कुल निवेश व्यय 50 करोड़ रुपये बढ़ाते हैं और बाद की सभी समय अवधि में निवेश को इस नए उच्च स्तर पर बनाए रखते हैं। हम इसमें दों समय अवधि को लेकर चलते हैं, मान लीजिए पहली समय अवधि (1) में, कुल आय में वृद्धि सरकारी व्यय में हुई आरम्भिक वृद्धि $\Delta G = 50$ करोड़ रूपए राशि के समान होगी, अर्थात $\Delta Y1 = \Delta G = 50$ करोड़ रूपये। परन्तु क्योंकी हमारी धारणा यह हैं की किसी भी समय अवधि जैसे, t में कुल उपभोग व्यय उससे ठीक पहली समय अवधि t-1 की आय से निर्धारित होता है, इस धारणा के कारण समय अवधि 1 में आय में वृद्धि से तुरंत उपभोग व्यय में वृद्धि नहीं होगी परन्तु समय अवधि 2 में, सीमांत उपभोग प्रवृत्त (Marginal Propensity to Consume) जोकि स्थिर मानी गई हैं, इसका संख्यात्मक मान सकारात्मक (positive) है लेकिन एक से कम है, अत: $0 < \bar{b} < 1$ । इसके आधार पर समय अवधि 1 में बढ़ी हुई आय $\Delta Y1$ का b प्रतिशत भाग अतिरिक्त उपभोग व्यय में प्रयुक्त होगा, अर्थात समय अवधि 2 में अतिरिक्त कुल उपभोग व्यय की राशि निम्नलिखित प्रकार से निर्धारित होगी।

$$\Delta C2 = b\Delta Y1 = b\Delta G$$

कुल उपभोग व्यय में हुई यह वृद्धि तथा नया निवेश स्तर कुल आय में पुनः वृद्धि करेंगे। परन्तु कुछ समय बाद गुणक प्रभाव धीरे-धीरे कम हो जाएगा और आय की वृद्धि भी तदनुसार कम हो जाएगी। अत: कुल आय की साम्य स्थिति एक नए स्थिर बिन्दु पर पहुँच कर समाप्त हो जाएगी जहाँ कुल बचत एवं कुल निवेश परस्पर समान होते है। आय संचरण की इस गतिशील प्रणाली में, गतिशील तत्व उससे ठीक पूर्ववर्ती समय अवधि t-1 की आय से निर्धारित होता है।

$$Y0 = Ye = Y1 = a + bY - 1 + 1 + G$$

जहाँ $Y0 = Ye = Y1 = 300$ करोड़ रूपये हैं,

एवं $S = I + G = 50$ करोड़ रूपये।

पहली समय अवधि (t) में कुल स्वायत्त सरकारी व्यय में 50 करोड़ रूपये($\Delta G = 50$) की वृद्धि हुई,

फलस्वरूप, $Y1 = 25 + 0.75\,(300) + 25 + 25 + 50 = 350$ करोड़ रूपए।

ऐसे ही $\Delta Y1 = Y1 - Y0 = 50$ करोड़ रूपए, जोकि द्वितीय समय अवधि में हमें अग्रांकित साम्य आय (forward equity income) Y_2 प्राप्त होगी।

$Y2$ = 25 + 0.75 (350) + 25 +25 +50 = 387.50 करोड़ रूपए,

अत: $\Delta Y2 = Y2 - Y1 = 37.50$ करोड़ रूपए।

ऐसे ही तीसरी और चौथी समय अवधियों में कुल आय बढ़कर क्रमशः 415.62 करोड़ रूपए एवं 436.72 करोड़ रूपए होगी। आय में यह क्रमिक वृद्धि तब तक होती रहेगी जब तक अनन्तः समय अवधि ज में कुल साम्य आय का स्तर बढ़कर 500 करोड़ रूपए नहीं हो जाता है क्योंकि आय के इस स्तर के समक्ष कुल आय एवं कुल व्यय के मध्य समानता स्थापित हो जाती है। इस स्थिति में,

$$Yt = C + I + G + \Delta G$$
$$= 25 + 0.75\,(350) + 25 + 25 + 50$$
$$= 25 + 375 + 25 + 25 + 50$$
$$Yt = Ye = 500 \text{ करोड़ रूपए}$$
$$S = I + G + \Delta G = 100 \text{ करोड़ रूपए}$$

इस प्रक्रिया को आप चित्र 3.3 के माध्यम से भी समझ सकते हैं।

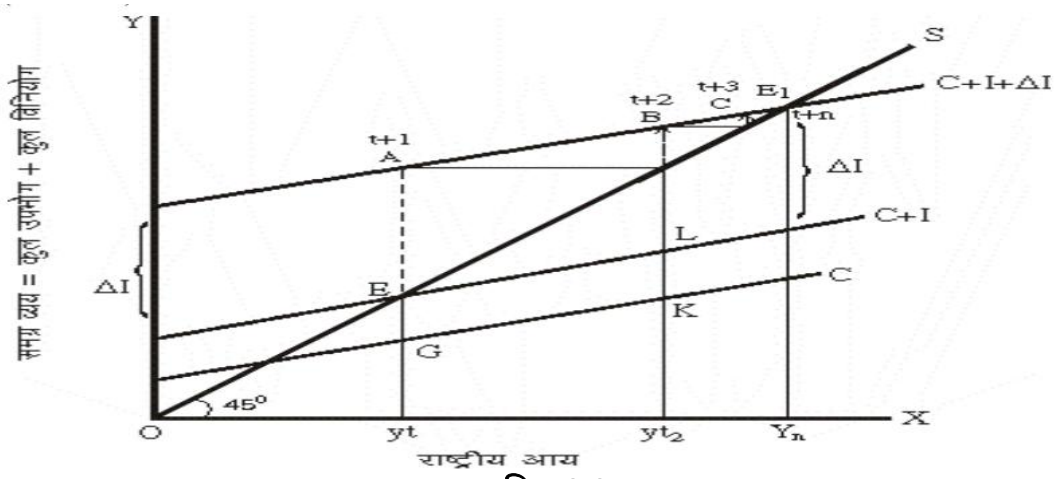

चित्र 3.3

कुल आय में सरकारी व्यय की वृद्धि राशि ΔG के बराबर होगी जिससे 50 करोड़ रुपये की वृद्धि होगी। परन्तु समय के साथ, जैसे-जैसे कुल उपभोग व्यय में प्रेरित वृद्धि धीमी होती जाएगी, आय वृद्धि की गति भी धीमी होती जाएगी। अत: जब एक निश्चित अवधि में आय वृद्धि की गति शून्य हो जाती है, तो साम्य आय 500 करोड़ रुपये तक पहुँच जाती है।

अधिक जटिल गतिशील आर्थिक प्रणालियों में, आय में परिवर्तन के परिणामस्वरूप उपभोग व्यय और निवेश व्यय दोनों में प्रेरित परिवर्तन होंगे। परिवर्तन की स्थिति में आय विस्तार का मार्ग निवेश गुणक (Investment Multiplier) और त्वरक (Accelerator) की संयुक्त क्रिया द्वारा निर्धारित किया जाएगा। निवेश गुणक तथा त्वरक की परस्पर क्रिया के संबंधी मॉडल को आप आगे की इकाईयों में पढेंगे।

3.5 समष्टि आर्थिक साम्य का महत्व (Importance of Macro Economic Equilibrium)

समष्टि आर्थिक साम्य सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की दृष्टि से एक बहुत ही उपयोगी आर्थिक विश्लेषण है। व्यष्टि अर्थशास्त्र में हम केवल व्यक्तिगत चरों का अध्ययन करते हैं परन्तु समष्टि अर्थशास्त्र में हम सम्पूर्ण आर्थिक चरों का अध्ययन करते हैं जैसे रोजगार, कुल उत्पादन, कुल बचत, कुल विनियोग आदि चर जो समग्र अर्थव्यवस्था को प्रकट करते हैं। इन चरों के निर्धारण के लिए 'साम्य' का विश्लेषण आवश्यक हैं। इस प्रकार, समष्टि आर्थिक साम्य के माध्यम से ही संपूर्ण अर्थव्यवस्था के व्यापक चरों का गहन अध्ययन संभव है। समष्टि आर्थिक साम्य के महत्व को निम्न बिंदुओं द्वारा बताया गया हैं:

1. **साम्य और आर्थिक प्रक्रिया (Equilibrium and Economic Process)-** साम्य एक महत्वपूर्ण पूर्व निर्धारित लक्ष्य है जिसे असामंजस्य (disharmony) की प्रक्रियाओं के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। साम्य आर्थिक घटनाओं के कारणों, उनकी प्रक्रिया एवं परिणामों का अध्ययन करता है। इसे अर्थशास्त्रियों का कम्पास भी कहा जाता है जो आर्थिक परिवर्तनों की पूरी प्रक्रिया को बताता है।
2. **अनुकूलतम स्थिति (Optimum Condition) -** समष्टि आर्थिक साम्य को सर्वोत्तम स्थिति भी कहा जा सकता है क्योंकि इसके प्रयोग से आर्थिक समस्याओं का उचित समाधान होता है। जैसा की हम जानते हैं असन्तुलन की दशा में ही आर्थिक समस्याओं का जन्म होता है। अतः समष्टि आर्थिक साम्य अर्थव्यवस्था में असामान्य आर्थिक समस्याओं के उतार-चढ़ाव का प्रबंधन करने में मदद करता है।
3. **अर्थव्यवस्था का सम्पूर्ण चित्र (Full Picture of Economy)-** समष्टि आर्थिक साम्य विशिष्ट समस्याओं को हल करने में व्यावहारिक रूप से उपयोगी नहीं है परन्तु फिर भी यह अर्थव्यवस्था की पूरी तस्वीर का ज्ञान देता है। समष्टि आर्थिक साम्य अर्थव्यवस्था की सामान्य संरचना एवं कार्यप्रणाली को रेखांकित करता है। साथ ही इससे हमें 'आय के चक्रीय प्रवाह' (circular flow of income) का ज्ञान मिलता है जिससे यह स्पष्ट होता है कि अर्थव्यवस्था में व्यापक आर्थिक संतुलन बनाए रखने के लिए चक्रीय प्रवाह में इंजेक्शन आवश्यक है।

4. **अन्य क्षेत्रों में महत्व (Importance in Other Areas)-** अर्थशास्त्र में अन्य क्षेत्रों के अध्ययन में भी समष्टि आर्थिक साम्य विश्लेषण मददगार साबित होता हैं। ऐसे बहुत से मॉडल हैं जिनका निर्माण समष्टि आर्थिक साम्य की सहायता से हुआ हैं, जैसे **प्रो. लियोनतीफ (Prof. Leontief)** का आदा-प्रदा विश्लेषण (Input-Output Analysis)।

3.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. साम्य की अंतिम अवस्था को .....समीकरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। ($Y = C + I$ **या** $C = bY$)
2. ..... स्थिर साम्य आय को दर्शाता हैं। (Y_t **या** Y_e)
3. *"यह मान लेने पर कि निरपेक्ष अथवा सापेक्ष तौर से शामिल आर्थिक मात्राओं में समरूपता और स्थिरता होती है, स्थैतिक अर्थशास्त्र संबंधों और प्रक्रियाओं पर विचार करता हैं।"* यह कथन .....अर्थशास्त्री ने दिया था। (पीगू **या** कुज़नेट्स)
4. तुलनात्मक स्थिर समष्टि आर्थिक मॉडल के अनुसार ..... में वृद्धि होने से आय में वृद्धि होगी। (स्वायत्त सरकारी व्यय **या** तात्कालिक गुणक)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. तुलनात्मक स्थिर समष्टि अर्थशास्त्र की एक सीमा यह है कि इस विधि का क्षेत्र सीमित है।
2. तुलनात्मक स्थिर समष्टि अर्थशास्त्र की एक सीमा यह है कि यह विश्लेषण साम्य की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुँचनें की प्रक्रिया को समझाने में समर्थ है।
3. तुलनात्मक स्थिर समष्टि अर्थशास्त्र की एक सीमा यह है कि इस विधि के अंतर्गत यह निश्चित नहीं होता कि नया साम्य कब स्थापित होगा।

3.7 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने समष्टि आर्थिक साम्य के बारे में पढ़ा और जाना की समष्टि अर्थशास्त्र में किस तरह साम्य की स्थिति बरकरार रहती हैं। इसके अंतर्गत आपने सबसे पहले साम्य के बारे में जाना और समझा की, साम्य की स्थिति में परिवर्तन की सम्भावना नहीं होती या किसी प्रकार की कोई गति नहीं होती हैं। समष्टि आर्थिक साम्य तीन भागों में विभाजित हैं पहला समष्टि स्थैतिक, दूसरा तुलनात्मक स्थिर एवं तीसरा गत्यात्मक विश्लेषण। समष्टि स्थैतिक का अर्थ जाना और समझा की यह स्थिरता की वह स्थिति होती हैं जहाँ किसी प्रकार की गति नहीं पायी जाती, अत: किसी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं होता। समष्टि आर्थिक साम्य को आपने इस समीकरण $Y = C + I$ के द्वारा समझा एवं यह भी जाना की कैसे सरकारी व्यय में वृद्धि होने से संतुलित आय में वृद्धि होती हैं, इस पूरी प्रक्रिया को आपने इस इकाई में पढ़ा, यह प्रक्रिया आपके लिए महत्वपूर्ण हैं और आगे आने वाली इकाईयों में भी पढ़ाई जाएगी। इकाई में आगे आपने गत्यात्मक विश्लेषण के बारे में पढ़ा और जाना की यह विश्लेषण संतुलित आय के स्तर में हुए परिवर्तन के मार्ग की व्याख्या करता है। यह अवधि गुणक की विधि द्वारा किसी चर में हुए परिवर्तन द्वारा उत्पन्न प्रतिक्रिया का अध्ययन करता है। यह दों या दों से ज्यादा समय अवधि के अंतर्गत आय में हुए परिवर्तन के बारे में बताता हैं। इस विधि को भी आप समीकरणों की सहायता से समझ चुके हैं। इकाई में आगे आपने जाना की व्यष्टि अर्थशास्त्र से समष्टि अर्थशास्त्र की ओर संक्रमण किस तरह हुआ, एवं कीन्स के इस संक्रमण में योगदान के बारे में भी आपने पढ़ा। कीन्स ने ही समष्टि अर्थशास्त्र के महत्व को समझा, अत: अपनी पुस्तक General Theory में इसका वर्णन किया।

इकाई में आपने समष्टि अर्थशास्त्र के महत्व के बारे में विस्तार से पढ़ा, एवं साथ ही यह भी समझा की व्यष्टि अर्थशास्त्र से समष्टि अर्थशास्त्र की ओर हमें क्यों बढ़ना पड़ा। व्यष्टि अर्थशास्त्र केवल व्यक्तिगत इकाइयों तक ही सीमित हैं परन्तु पूरी अर्थव्यवस्था के अध्ययन के लिए हमें समष्टि अर्थशास्त्र की

आवश्यकता हैं जिसके अंतर्गत हम कीमत स्तर, व्यापार चक्र और आर्थिक विकास जैसी समस्याओं के बारे में अध्ययन करते हैं।

3.8 शब्दावली (Glossary)

- **स्वायत्त निवेश (Autonomous Investment):** स्वायत्त निवेश किसी सरकार या आर्थिक विचारों से स्वतंत्र अन्य इकाई द्वारा किए गए कुल निवेश का हिस्सा है। इनमें वह निवेश शामिल होता है जो जीडीपी में बदलाव पर निर्भर नहीं करता है।
- **सरकारी व्यय (Government Expenditure):** सरकारी व्यय में सभी सरकारी उपभोग, निवेश एवं हस्तांतरण भुगतान शामिल होते हैं। राष्ट्रीय आय लेखांकन के अनुसार लोगो की व्यक्तिगत या सामूहिक आवश्यकताओं को सीधे संतुष्ट करने के लिए वर्तमान उपयोग के लिए वस्तुओं एवं सेवाओं पर किया गया व्यय सरकारी व्यय कहलाता है।
- **तात्कालिक गुणक (Instantaneous Multiplier):** तात्कालिक गुणक वह होता हैं जिसमे जैसे ही निवेश होता है आय बढ़ने लगती है। इसे 'स्थैतिक गुणक' भी कहा जाता है क्योंकि यहाँ आय और निवेश व्यय के बीच कोई अंतराल नहीं पाया जाता है।
- **सीमांत उपभोग प्रवृत्त (Marginal Propensity to Consume):** सीमांत उपभोग प्रवृत्त आय में वृद्धि के अनुपात का एक माप हैं, जिसे एक व्यक्ति या परिवार द्वारा बचत के बजाय उपभोग किया जाता हैं। इसकी गणना उपभोग में परिवर्तन को आय में परिवर्तन से विभाजित करके की जाती है।
- **इक्विटी आय (Equity Income):** इक्विटी आय से तात्पर्य उस आय से है जो स्टॉक लाभांश के माध्यम से प्राप्त होती है।
- **आय के चक्रीय प्रवाह (Circular Flow of Income):** यह अर्थव्यवस्था का एक मॉडल है जिसमें प्रमुख आदान-प्रदान को आर्थिक एजेंटों के बीच धन, वस्तुओं और सेवाओं आदि के प्रवाह के रूप में दर्शाया जाता है।
- **अनुकूलतम स्थिति (Optimum Condition) :** इसका अर्थ है किसी चीज़ की सबसे अच्छी या सबसे अनुकूल स्थिति या स्तर। उदाहरण के लिए, आप कह सकते हैं कि एक फोन इष्टतम स्थिति में है यदि इसमें इष्टतम परिचालन स्थितियों को बनाए रखने के लिए पर्याप्त मेमोरी है।
- **आदा-प्रदा विश्लेषण (Input-Output Analysis):** यह अर्थशास्त्र का एक क्षेत्र है जो वस्तुओं और सेवाओं की आपूर्ति और खपत, पूंजी निर्माण और आय और श्रम के आदान-प्रदान के रूप में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उद्योग क्षेत्रों और परिवारों के बीच संबंधों से संबंधित है।
- **कुल आय (Total Income) :** किसी व्यक्ति या संगठन द्वारा प्राप्त सभी धन का योग, जिसमें रोजगार या सेवाएं प्रदान करने से आय, बिक्री से राजस्व, पेंशन योजनाओं से भुगतान, लाभांश या अन्य स्रोतों से आय शामिल है।
- **कुल बचत (Total Saving) :** अर्थशास्त्र में इससे तात्पर्य किसी देश में निजी और सार्वजनिक बचत का योग है, और इसकी गणना उपभोग और करों पर राष्ट्रीय आय की अधिकता के रूप में की जाती है। यह राष्ट्रीय निवेश के भी बराबर है, जो उपभोग वस्तुओं और सेवाओं और सरकारी व्यय पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद की अधिकता है।
- **कुल निवेश (Total Investment) :** अर्थशास्त्र में इससे तात्पर्य किसी चीज़ के सभी भागों, या संख्या या लागत का योग है। यह किसी व्यवसाय को स्थापित करने और चलाने के लिए आवश्यक कुल धनराशि को संदर्भित कर सकता है, जिसमें नकदी, ऋण और स्टॉक शामिल हैं। यह किसी परियोजना को पूरा करने के लिए आवश्यक कुल धनराशि का भी उल्लेख कर सकता है।

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. $Y = C + I$ 2. Y_e 3. कुज़नेट्स 4. स्वायत्त सरकारी व्यय

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य

3. 10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), ***Macroeconomic Analysis***, Galgotia Publications, New Delhi

3. 11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics***, Theory and policy, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley, G. (1978), ***Macroeconomics : Theory and Policy***, Macmillan, New York

3.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. तुलनात्मक स्थिर समष्टि आर्थिक मॉडल को चित्र की सहायता से समझाइए। इस विश्लेषण के महत्व एवं सीमाओं की भी व्याख्या कीजिए।
2. गत्यात्मक विश्लेषण की समीकरण के साथ व्याख्या कीजिए।
3. व्यष्टि अर्थशास्त्र से समष्टि अर्थशास्त्र की ओर संक्रमण की जरुरत क्यों पड़ी? कीन्स इस संक्रमण के लिए कौन-कौन से तर्क दिए?

इकाई-4 राष्ट्रीय आय: अवधारणा एवं संरचना
(National Income: Concept and Structure)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)
4.2 उद्देश्य (Objectives)
4.3 राष्ट्रीय आय का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of National Income)
4.4 राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित मूल अवधारणाएँ (Basic Concepts Related to National Income)
4.5 राष्ट्रीय आय की अवधारणा (Concept of National Income)
4.6 राष्ट्रीय आय की संरचना (Structure of National Income)
4.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
4.8 सारांश (Summary)
4.9 शब्दावली (Glossary)
4.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
4.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
4.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
4.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पहले की इकाई में आपने समष्टि अर्थशास्त्र की प्रकृति, उद्देश्य और विकास के बारे में ज्ञान प्राप्त किया। समष्टि अर्थशास्त्र में राष्ट्रीय आय एक बहुत महत्वपूर्ण विषय हैं, प्रस्तुत इकाई में राष्ट्रीय आय की अवधारणा एवं संरचना के बारे में विस्तार से चर्चा कि गई है। राष्ट्रीय आय का अर्थ क्या हैं? इससे सम्बंधित अवधारणा कौन-कौन सी हैं यह सब आप इस इकाई में पढेंगे एवं समझेंगे। घरेलु आय, प्रति व्यक्ति आय, व्यय योग्य आय इन सभी चरो के बारे में भी जानेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप राष्ट्रीय आय एवं घरेलू आय में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे तथा राष्ट्रीय आय समानिकाओं को समझा सकेंगे।

4.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- ✓ राष्ट्रीय आय के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ✓ साधन लागत एवं बाजार लागत की अवधारणा से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ राष्ट्रीय आय की समानिकाओं के प्रकारों को जान सकेंगे।
- ✓ सामान्य निवासी की अवधारणा से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ घरेलु आय, प्रति व्यक्ति आय, व्यय योग्य आय इन सभी के चरों के बारे में भी जान सकेंगे।

4.3 राष्ट्रीय आय का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of National Income)

राष्ट्रीय आय का अर्थ (Meaning of National Income)

राष्ट्रीय आय से अभिप्राय एक राष्ट्र की एक वर्ष में आर्थिक क्रियाओं के फलस्वरूप उत्पादित अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के मौद्रिक मुले के योग से होता हैं। इसमें उन समस्त अंतिम वस्तों एवं सेवाओं के मूल्य को शामिल किया जाता है, जो देश के सामान्य निवासियों द्वारा सीमा में अथवा इसके बाहर रहकर उत्पादित की गई है। इसमें विदेशों से अर्जित साधन आय को भी शामिल किया जाता हैं। इसके लिए राष्ट्रीय लाभांश एवं राष्ट्रीय उत्पाद शब्द का भी प्रयोग किया जाता है।

राष्ट्रीय आय की परिभाषा (Definition of National Income)

विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने राष्ट्रीय आय की भिन्न- भिन्न परिभाषाएं दी हैं। अध्ययन की दृष्टि से राष्ट्रीय आय की परिभाषा को हम निम्नलिखित दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं

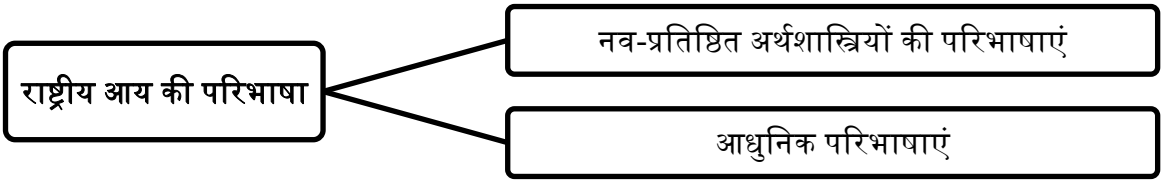

(क) नव-प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों की परिभाषाएं (Definition by Neo-Classical Economist)

नव-प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों में जहाँ **मार्शल (Marshall)** की परिभाषा उत्पादन पर आधारित है वहीं **पीगू (Pigou)** की मुद्रा पर और **फिशर (Fisher)** की उपभोग एवं कल्याण परिभाषा उत्पादन पर आधारित है।

मार्शल (Marshall) के अनुसार *"किसी देश का श्रम व पूँजी उस देश के प्राकृतिक साधनों पर कार्य करते हुए प्रति वर्ष भौतिक तथा अभौतिक वस्तुओं एवं सभी प्रकार की सेवाओं का एक विशुद्ध योग उत्पन्न करते हैं। यह किसी देश की वास्तविक विशुद्ध वार्षिक आय या आगम अथवा राष्ट्रीय लाभांश है। (The labor and capital of the country, acting on its natural resources, produce annually a certain net aggregate of commodities, material and immaterial, including services of all kinds. This is the true net annual income or revenue or national dividend of the country.)"*

पीगू (Pigou) ने अपनी पुस्तक 'The Economics of Welfare' में राष्ट्रीय आय को परिभाषित करते हुए लिखा है *"किसी समुदाय की राष्ट्रीय आय वस्तुगत आय का वह भाग है जिसमें विदेशों से प्राप्त आय शामिल होती है जिसको मुद्रा द्वारा मापा जा सकता है। (National Income is that part of the objective income of a community including income earned in foreign countries, which can be measured in Money.)"*

इरविंग फिशर (Irving Fisher) ने अपनी पुस्तक 'The Nature of Capital and Income' में राष्ट्रीय आय को परिभाषित करते हुए लिखा है *"राष्ट्रीय लाभांश या आय में केवल वहीं सेवायें सम्मिलित की जाती हैं जो अंतिम उपभोक्ताओं को प्राप्त होती हैं चाहे ये वस्तुएं भौतिक अथवा मानवीय वातावरण से प्राप्त हुई हो। (The National Dividend, or income consists solely of services as received by ultimate consumers whether from their material or from human environment..)"*

(ख) आधुनिक परिभाषा (Modern Definition)

राष्ट्रीय आय समिति (National Income Committee) के अनुसार *"राष्ट्रीय आय के अनुमान से बिना दोहरी गिनती के एक दी हुई अवधि में उत्पन्न की जाने वाली वस्तुओं एवं सेवाओं की मात्रा की माप की जा सकती हैं। (A national Income estimate measures the volume of commodities and services turned out during a given period counted without duplication.)"*

साइमन कुजनेट्स (Simon Kuznets) के अनुसार *"राष्ट्रीय आय वतुओं एवं सेवाओं की वह विशुद्ध उत्पत्ति है जो एक वर्ष की अवधि में देश की उत्पादन प्रणाली में अंतिम उपभोक्ताओं के हाथों में पहुँचती है। (National Income is the net output of commodities and services flowing during the year from the country's productive system into the hands of ultimate consumers or into net addition of the country's stock of capital goods.)"*

4.4 राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित मूल अवधारणाएँ (Basic Concepts Related to National Income)

सरल भाषा में राष्ट्रीय आय, एक देश के सामान्य निवासियों की आय का कुल जोड़ है। इस इकाई में आगे अध्ययन करने से पहले आपको समझना होगा कि सामान्य निवासी किसे कहते हैं।

सामान्य निवासी (Normal Resident):

एक सामान्य निवासी वह व्यक्ति अथवा संस्था कहलाता है जो साधारणतया एक देश में निवास करता है और जिसकी आर्थिक रुचि उसी देश में केन्द्रित होती है। सामान्य निवासी बनने के लिए निम्नलिखित बातें उल्लेखनीय है:

1. सामान्य निवासी के अन्तर्गत व्यक्ति तथा संस्था दोनों ही आते हैं।
2. वह व्यक्ति उस देश में एक वर्ष या इससे अधिक समय के लिए रहा हो।
3. उस व्यक्ति की आर्थिक रुचि का होना जरुरी है।
4. एक देश का सामान्य निवासी उस देश का नागरिक हो यह जरुरी नहीं है। उदाहरण के लिए यदि कोई भारतीय एक वर्ष से अधिक समय से न्यूजीलैण्ड में निवास कर रहा है और इसकी आर्थिक रुचि का केन्द्र भी वहीं देश है तो वह न्यूजीलैण्ड का सामान्य निवासी माना जाएगा, भले ही वह भारत का नागरिक है।
5. भारत में स्थित संगठनों जैसे विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को भारत का सामान्य निवासी नहीं माना जाएगा। यदि इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था में कोई भारतीय काम करता है तो उसे भारत का सामान्य निवासी माना जाएगा।
6. मनोरंजन, अवकाश बिताने, चिकित्सा, अध्ययन, कांफ्रेंस, खेलकूद आदि के लिए देश में आये व्यक्ति या विदेशी सैलानी साधारणतया यह सभी किसी देश की घरेलू सीमा के अन्दर एक वर्ष से कम की अवधि के लिए ठहरते हैं तथा इनकी रूचि आर्थिक नहीं होती है। इसलिए यह सामान्य निवासी नहीं हैं।

भारत के सामान्य निवासी तथा भारत के गैर निवासी को पूरी तरह से समझने के लिए इनके बीच के अन्तर को स्पष्ट करना जरुरी है। इन दोनों के बीच अन्तर नीचे तालिका में दिए हैं:

तालिका 4

भारत के सामान्य निवासी (Normal Resident of India)	भारत के गैर निवासी (Non-Resident of India)
1. अमेंरिका में भारत का राजदूत।	1. भारत में अमेंरिका का राजदूत।
2. भारत में स्थित अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं/संगठनों में काम करने वाले भारतीय।	2. भारत में स्थित अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों (W.H.O, I.M.F) में काम करने वाले विदेशी।
3. भारत में एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए रह रहे विदेशी नागरिक (अध्ययन तथा चिकित्सा के लिए आए व्यक्तियों के अतिरिक्त)।	3. एक वर्ष से कम अवधि के लिए भारत में काम कर रहे विदेशी तकनीकी विशेषज्ञ।
4. भारत में स्थित विदेशी दूतावासों में काम करने वाले भारतीय।	4. अमेंरिका में स्थित भारतीय दूतावास में काम करने वाले विदेशी।

राष्ट्रीय आय की अवधारणा को समझने के लिए आप सामान्य निवासी की अवधारणा को समझ चुके हैं परन्तु आपका यह जानना भी आवश्यक है कि राष्ट्रीय आय तब प्राप्त होती है जब घरेलू आय में विदेशी से प्राप्त शुद्ध आय को जोड़ दिया जाता है।

घरेलू आय (Domestic Income):

एक लेखा वर्ष में एक देश की घरेलू सीमा के अन्दर सृजित कारक की साधन आय को घरेलू आय अथवा घरेलू उत्पाद कहा जाता है। अतः अब हमें घरेलू क्षेत्र की अवधारणा को समझ लेना चाहिए।

घरेलू क्षेत्र (Domestic Territory):

आम बोलचाल की भाषा में एक राष्ट्र के घरेलू क्षेत्र या सीमा का अर्थ देश की राजनीतिक सीमाओं के अन्दर के भू-भाग से लिया जाता है परन्तु राष्ट्रीय लेखांकन के संदर्भ में घरेलू सीमा का अर्थ एक राष्ट्र के राजनीतिक सीमाओं के बाहर के क्षेत्र का स्वामित्व नहीं है। इसका अर्थ केवल घरेलू आय को सृजित करने वाला परिचालन क्षेत्र है। उदाहरणार्थ :-

1. अमेंरिका में भारतीय दूतावास, भारत की घरेलू सीमा का हिस्सा है तथा भारत में अमेंरिका का दूतावास अमेंरिका की घरेलू सीमा का हिस्सा है।

2. राजनीतिक सीमाओं का भू-भाग जिसमें देश की सामुद्रिक सीमा भी सम्मिलित है। उदाहरण के लिए भारतीय मछुआरों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय जल सीमा में मछली पकड़ना आदि।
3. देश के निवासियों द्वारा विश्व के विभिन्न भागों में चलाए जाने वाले वायुयान तथा जलयान। उदाहरण के लिए जापान तथा कोरिया के बीच नियमित रूप से चलाए जाने वाले भारतीय जलयान अथवा अमेंरिका व इंग्लैण्ड के बीच एयर इण्डिया द्वारा चलाए जाने वाले यात्री हवाई जहाज भी भारत के घरेलू सीमा के ही अंग है। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि राष्ट्रीय आय के अन्तर्गत तीन बातों पर ध्यान दिया जाता है, पहली एक लेखांकन वर्ष होना चाहिए, दूसरी एक सामान्य निवासी और तीसरी घरेलू सीमा।

सर्वप्रथम हम घरेलू आय का अनुमान लगाते हैं, तत्पश्चात् इसमें विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय जोड़ देते हैं, संक्षेप में,

राष्ट्रीय आय = घरेलू आय+विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय।

4.5 राष्ट्रीय आय की अवधारणा (Concept of National Income)

राष्ट्रीय आय की अवधारणा को समझने के लिए आपको समझना होगा कि वस्तुएँ एवं सेवाएं कहाँ से आती है और कहाँ को जाती है। अर्थव्यवस्था में सबसे पहले वस्तुओं का उत्पादन होता है या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि मूल्य में वृद्धि होती है (प्रथम अवस्था) इसके बाद आप सोचे कि यह उत्पादन किसके द्वारा किया जाता है। यह उत्पादन उत्पत्ति के साधनों द्वारा किया जाता है। (दूसरी अवस्था) अंतिम रुप से तैयार वस्तु जिसे अंतिम वस्तु कहते हैं। उत्पादन के बाद अंतिम वस्तुएं सेवाओं को उपभोक्ता तथा उत्पादक द्वारा खरीदी जाती है अर्थात् दोनों ही व्यय करते हैं (तीसरी अवस्था)। इस प्रकार से राष्ट्रीय आय की अवधारणा को समझने के लिए इसे तीन अवस्थाओं में बाँटा गया है-

प्रथम अवस्था:

वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन अथवा मूल्य वृद्धि के रूप में राष्ट्रीय आय एक देश की अर्थव्यवस्था के अन्दर एक वर्ष के अंतर्गत सभी वस्तुओं एवं सेवाओं का बाजार मूल्य का कुल जोड़ राष्ट्रीय आय कहलाता है। निस्संदेह राष्ट्रीय आय का आंकलन एक देश की घरेलू सीमा के अन्दर उत्पादन या मूल्य वृद्धि द्वारा होता है जिसे घरेलू उत्पाद तथा घरेलू आय कहते है। राष्ट्रीय आय ज्ञात करने के लिए घरेलू आय में विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय जोड़ दी जाती है।

द्वितीय अवस्था:

साधन या कारक आय के रुप में राष्ट्रीय आय कारक या साधन आय उसे कहते जो व्यक्तियों को जैसे भूमि का पुरस्कार लगान, मजदूर का पुरस्कार मजदूरी, पूँजी का पुरस्कार ब्याज, साहसी या उद्यमी का पुरस्कार लाभ है। कारक के रुप में राष्ट्रीय आय को हम निम्न प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं:

एक लेखा वर्ष की अवधि के दौरान एक देश को उनकी कारक सेवाओं (भूमि, श्रम, पूँजी तथा उद्यमशीलता) के बदले पुरस्कार के रुप में आय प्राप्त होती है। घरेलू सीमा के अन्दर साधनों द्वारा प्राप्त कुल पुरस्कार/आय को जोड़ देने पर घरेलू आय प्राप्त होती है। राष्ट्रीय आय ज्ञात करने के लिए घरेलू आय में विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय जोड़ी जाती है।

तृतीय अवस्था:

आय के व्यय/विन्यास के रूप में राष्ट्रीय आय अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाओं को अन्तिम प्रयोगकर्ता अर्थात् उपभोक्ताओं तथा उत्पादकों द्वारा खरीदा जाता है। उपभोक्ता के खरीद को व्यय या खर्च कहा जाता है तथा उत्पादक के व्यय को निवेश व्यय कहा जाता है। कुछ वस्तुएँ बिक नहीं पाती है क्योंकि आय का एक भाग खर्च नहीं किया जाता है जिसके कारण उत्पादकों के पास माल सूची व स्टॉक बच जाता हैं। इसका उपभोग व्यय तथा निवेश व्यय के कुल जोड़ के रुप में अनुमान लगाया जाता है। इस प्रकार कारक के रुप में राष्ट्रीय आय एक लेखा वर्ष की अवधि में अंतिम वस्तुओं तथा सेवाओं का उपभोग व्यय तथा निवेश व्यय तथा विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय का कुल जोड़ राष्ट्रीय आय कहलाती है।

4.6 राष्ट्रीय आय की संरचना (Structure of National Income)

राष्ट्रीय आय की संरचना का तात्पर्य राष्ट्रीय आय के विभिन्न समुच्चयों की संरचना एवं इनके परस्पर संबंधों से सम्बंधित लेखा-जोखा के अध्ययन से है। इन अवधारणाओं का विस्तृत वर्णन इस प्रकार है:-

1. सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product)

बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product at Market Price)

बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद से आशय एक देश की घरेलू सीमा में एक लेखा वर्ष में उत्पादित सभी अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के बाजार मूल्य के जोड़ से है। इसमें मूल्यह्रास के स्थिर पूँजी के उपभोग को शामिल किया जाता है।

मौद्रिक मूल्य पर सकल घरेलू उत्पाद = कीमत (वस्तुओं) + कीमत (सेवाओं)

GDP_{MP} = Price (Goods) + Price (Services)

साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product at Factor Cost)

साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद से तात्पर्य एक लेखा वर्ष में एक देश की घरेलू सीमा के अन्दर अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में लगे हुए उत्पत्ति के साधनों का प्रतिफल या सृजित कारक आय (लगान + ब्याज + लाभ + मजदूरी) के कुल जोड़ से है। यह कारक लागत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद के बराबर होती है जिसे संक्षेप में, 'घरेलू आय' कहते है।

साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद = शुद्ध साधन-आय (लगान+ब्याज+लाभ+मजदूरी) + मूल्यह्रास

GDP_{FC} = Net Factor Income (Rent+Interest+profit+Wages) + Depreciation

OR

साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर सकल घरेलू उत्पाद – अप्रत्यक्ष कर + सरकारी सहायता

$GDP_{FC} = GDP_{MP}$ – Indirect Taxes + Government Subsidies

2. सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product)

बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद से आशय अर्थव्यवस्था में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाओं के बाजार मूल्य से है। जिसमें विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय (Net Factor Income from Abroad) को शामिल किया जाता है।

मौद्रिक मूल्य पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर सकल घरेलू उत्पाद +विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय

$GNP_{MP} = GDP_{MP}$ + net factor income from abroad (NFIA)

विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय से तात्पर्य हमारे निवासियों द्वारा शेष विश्व से प्राप्त कारक आय (Factor Income) (लगान, ब्याज, लाभ तथा मजदूरी) तथा हमारे देश में प्राप्त गैर-निवासियों द्वारा प्राप्त कारक आय (Factor Income) का अन्तर है।

विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय = देश के सामान्य निवासियों द्वारा अन्य देशों से प्राप्त साधन आय – गैर- निवासियों द्वारा उस देश से अर्जित साधन आय

NFIA = Factor income received from other countries by ordinary residents of the country - Factor income earned in that country by non-residents

3. शुद्ध घरेलू उत्पाद (Net Domestic Product)

बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद तब प्राप्त होता है जब आप बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद में से मूल्यह्रास या स्थिर पूँजी के उपभोग को घटा देते हैं।

मौद्रिक मूल्य पर शुद्ध घरेलू उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर सकल घरेलू उत्पाद - मूल्यह्रास

$NDP_{MP} = GDP_{MP}$ - Depreciation

4. शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (Net National Product)

मौद्रिक मूल्य पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद

यह किसी देश की घरेलू सीमा में एक लेखा वर्ष में उसके सामान्य निवासियों द्वारा उत्पादित अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के शुद्ध मूल्य तथा विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय का जोड़ हैं।

मौद्रिक मूल्य पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद – मूल्यह्रास

$NNP_{MP} = GNP_{MP}$ – Depreciation

OR

मौद्रिक मूल्य पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर शुद्ध घरेलू उत्पाद + विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय

$NNP_{MP} = NDP_{MP}$ + net factor income from abroad (NFIA)

OR

मौद्रिक मूल्य पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर सकल घरेलू उत्पाद + विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय – मूल्यह्रास

$NNP_{MP} = GDP_{MP}$ + net factor income from abroad (NFIA) – Depreciation

साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद

साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद = साधन लागत पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद – मूल्यह्रास

$NNP_{FC} = GNP_{FC}$ – Depreciation

OR

साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद = साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद + विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय

$NNP_{FC} = NDP_{FC}$ + net factor income from abroad (NFIA)

OR

साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर शुद्ध घरेलू उत्पाद– अप्रत्यक्ष कर + सरकारी सहायता + विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय

$NNP_{FC} = NDP_{MP}$ – Indirect Taxes + Government Subsidies + net factor income from abroad (NFIA)

OR

साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद = मौद्रिक मूल्य पर सकल घरेलू उत्पाद – मूल्यह्रास – अप्रत्यक्ष कर + सरकारी सहायता

NNP_{FC} = GDP_{MP} – Depreciation – Indirect Taxes + Government Subsidies

5. निजी आय (Private Income)

निजी आय वह आय है जो निजी क्षेत्र के स्रोतों से प्राप्त साधन-आय तथा सरकार से प्राप्त वर्तमान हस्तांतरण और शेष विश्व से प्राप्त वर्तमान हस्तांतरण का जोड़ हैं।

निजी आय = निजी क्षेत्रक को घरेलू उत्पाद से प्राप्त आय + सरकार से वर्तमान हस्तांतरण भुगतान + शेष विश्व से शुद्ध वर्तमान हस्तांतरण + राष्ट्रीय ऋणों पर ब्याज + विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय

Private Income = Income received by the private sector from domestic product + Current transfer payments from the government + Net current transfers from the rest of the world + Interest on national debts + net factor income from abroad (NFIA)

OR

निजी आय = NDP_{FC} – सार्वजनिक क्षेत्रक को घरेलू उत्पाद से प्राप्त आय + समस्त वर्तमान हस्तांतरण + विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय

Private Income = NDP_{FC} – Public sector income from domestic product + total current transfers + NFIA

6. वैयक्तिक आय या व्यक्तिगत आय (Personal Income)

वैयक्तिक आय से तात्पर्य उस आय से है जो किसी देश में एक वर्ष की अवधि में व्यक्तियों अथवा परिवारों द्वारा सभी स्रोतों (साधन-आय तथा वर्तमान हस्तान्तरण) से प्राप्त आय का जोड़ है।

वैयक्तिक आय जानने के लिए निजी आय में से निगम बचत या अवितरित लाभ और निगम कर जो परिवारों को प्राप्त नहीं होते हैं को घटा दिया जाता है जैसे-

वैयक्तिक आय = निजी आय - निगम कर - अवितरित व्यावसायिक लाभ - सामाजिक सुरक्षा अंशदान + अन्तरण भुगतान

Personal Income = Private Income – Corporation Tax – Undistributed Business Profit – Social Security Contribution + Transfer Payment

7. प्रयोज्य या व्यय योग्य आय (Disposable Income)

व्यक्तिगत प्रयोज्य आय (Personal Disposable Income)

व्यक्तिगत आय का वह भाग, जिसे गृहस्थ अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकते हैं अथवा बचा कर रखा सकते हैं उसे व्यक्तिगत प्रयोज्य आय कहा जाता हैं।

व्यक्तिगत प्रयोज्य आय = उपभोग + बचत

Personal Disposable Income = Consumption + Saving

OR

व्यक्तिगत प्रयोज्य आय = वैयक्तिक आय – प्रत्यक्ष कर – कर्मचारियों द्वारा सामाजिक सुरक्षा में अंशदान – सरकारी प्रशासनिक विभागों की विविध प्राप्तियाँ (जैसे जुर्माना, शुल्क)

Personal Disposable Income = Personal income – Direct taxes – Contribution to social security by employees – Miscellaneous receipts of government administrative departments (e.g. fines, fees)

राष्ट्रीय प्रयोज्य या व्यय योग्य या स्वायत्त आय (National Disposable Income)

राष्ट्रीय प्रयोज्य या व्यय योग्य या स्वायत्त आय का अर्थ उस आय से है जो किसी देश या देश के निवासियों को खर्च करने के लिए उपलब्ध होती है।

राष्ट्रीय प्रयोज्य या व्यय योग्य आय = राष्ट्रीय आय + शुद्ध अप्रत्यक्ष कर + शेष विश्व से प्राप्त शुद्ध वर्तमान हस्तान्तरण

National Disposable Income = NNP_{FC} + Net indirect taxes + net current transfers from the rest of the world

8. प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income)

जब देश की राष्ट्रीय आय में देश की कुल जनसंख्या का भाग दिया जाता है तो उसे प्रति व्यक्ति आय कहते हैं।

$$\text{प्रति व्यक्ति आय} = \frac{\text{राष्ट्रीय आय}}{\text{राष्ट्र की कुल जनसंख्या}}$$

$$Per\ capita\ Income\ = \frac{\text{National Income}}{\text{Total population of the nation}}$$

9. हरित राष्ट्रीय आय (Green National Income)

हरित राष्ट्रीय आय वह राष्ट्रीय आय हैं जो शुद्ध राष्ट्रीय आय एवं प्राकृतिक साधनों के शोषणों तथा पर्यावरण दूषित होने के परिणामों को ध्यान में रखती हैं।

हरित राष्ट्रीय आय = शुद्ध राष्ट्रीय आय – प्राकृतिक पूँजी की घिसावट

Green National Income = Net National Income - Depreciation of Natural capital

4.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ..... राष्ट्रीय आय कहते हैं। (NNP_{FC} **या** NDP_{FC})
2. ..... घरेलू आय कहते है। (NDP_{FC} **या** GDP_{FC})
3. ..... भारत का सामान्य निवासी कहलाएगा। (अमेंरिका में भारत का राजदूत **या** भारत में अमेंरिका का राजदूत)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. विदेशों से प्राप्त आय कारक घरेलू आय में शामिल होता है।
2. एक लेखा वर्ष में वस्तुओं की मात्रा कारक घरेलू आय में शामिल होता है।
3. मूल्यह्रास कारक घरेलू आय में शामिल होता है।
4. राष्ट्रीय प्रयोज्य आय में राष्ट्रीय आय तथा शुद्ध अप्रत्यक्ष कर कारक शामिल हैं।
5. राष्ट्रीय प्रयोज्य आय में शेष विश्व से प्राप्त शुद्ध चालू हस्तान्तरण कारक शामिल नहीं होता हैं।

4.8 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि कुल उत्पादन का मूल्य ही राष्ट्रीय आय कहलाता है। कुल उत्पादन कुल व्यय एवं कुल आय सब एक ही होते है। साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद को ही राष्ट्रीय आय कहते है। राष्ट्रीय आय से अभिप्राय एक राष्ट्र की एक वर्ष में आर्थिक क्रियाओं के फलस्वरूप उत्पादित अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के मौद्रिक मुले के योग से होता हैं। इसमें उन समस्त अंतिम वस्तों एवं सेवाओं के मूल्य को शामिल किया जाता है, जो देश के सामान्य निवासियों द्वारा सीमा में अथवा इसके बाहर रहकर उत्पादित की गई है। इसमें विदेशों से अर्जित साधन आय को भी शामिल किया जाता हैं। इसके बाद आपने इकाई में राष्ट्रीय आय की संरचना को पढ़ा, जिसमें आपने सकल घरेलू उत्पाद, बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद, साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद, सकल राष्ट्रीय उत्पाद, शुद्ध घरेलू उत्पाद एवं शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद के बारे में भी आपने संछेप में भी पढ़ा।

इकाई में आपने निजी आय के बारे में भी जाना, जोकि निजी क्षेत्र के स्रोतों से प्राप्त साधन-आय तथा सरकार से प्राप्त वर्तमान हस्तांतरण और शेष विश्व से प्राप्त वर्तमान हस्तांतरण का जोड़ हैं। इसके बाद आपने वैयक्तिक आय के बारे में भी पढ़ा जिसका तात्पर्य उस आय से है जो किसी देश में एक वर्ष की अवधि में व्यक्तियों अथवा परिवारों द्वारा सभी स्रोतों (साधन-आय तथा वर्तमान हस्तान्तरण) से प्राप्त आय का जोड़ है। साथ ही आपने यह भी समझा की व्यक्तिगत आय का वह भाग, जिसे गृहस्थ अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकते हैं अथवा बचा कर रखा सकते हैं उसे व्यक्तिगत प्रयोज्य आय कहा जाता हैं। इकाई में आपने राष्ट्रीय प्रयोज्य या व्यय योग्य या स्वायत्त आय का अर्थ भी समझा जोकि उस आय से है जो किसी देश या देश के निवासियों को खर्च करने के लिए उपलब्ध होती है। फिर आपने प्रति व्यक्ति आय को भी संछेप में पढ़ा और जाना की जब देश की राष्ट्रीय आय में देश की कुल जनसंख्या का भाग दिया जाता है तो उसे प्रति व्यक्ति आय कहते हैं। साथ ही हरित राष्ट्रीय आय को भी समझा जोकि वह राष्ट्रीय आय हैं जो शुद्ध राष्ट्रीय आय एवं प्राकृतिक साधनों के शोषणों तथा पर्यावरण दूषित होने के परिणामों को ध्यान में रखती हैं।

4.9 शब्दावली (Glossary)

- **मूल्यह्रास (Depreciation):** उत्पादन के दौरान पूँजीगत वस्तुओं जैसे मशीन, उपकरण, फैक्ट्री इत्यादि का ह्रास होता है। एक समय अवधि के बाद इन पूँजीगत वस्तुओं का प्रतिस्थापन आवश्यक हो जाता हैं इसलिए कुल उत्पादन में से एक हिस्सा घिसावट व्यय के लिए अलग रखना होता है। इसी को मूल्यह्रास कहते हैं जो सकल घरेलू या राष्ट्रीय आय में शामिल होता है। सकल में से मूल्यह्रास को घटा देने पर शुद्ध प्राप्त होता है।
- **निगम बचत (Corporate Savings):** निगम लाभ का कुछ भाग अवितरित लाभ के रूप में फर्मों के पास रह जाता है जिसे निगम बचत कहते हैं।
- **निगम कर (Corporate Tax):** निगम लाभ के कुछ भाग पर सरकार द्वारा लगाया गया कर निगम कर कहलाता है।
- **आधार वर्ष (Base year):** आधार वर्ष तुलना का वर्ष होता है। जब विश्वास किया जाता है कि समष्टि चर (जैसे उत्पादन तथा सामान्य कीमत स्तर) उस वर्ष में सामान्य रहते हैं।
- **प्रविधि (Technology):** प्रविधि से अभिप्राय उत्पादन के साधनों के एक निश्चित सम्बन्ध से है जिससे उत्पादन के एक निश्चित स्तर को प्राप्त किया जा सकता है।
- **पूँजी सीमान्त क्षमता (Capital Marginal Efficiency):** पूँजी की सीमान्त क्षमता कटौती की वह दर है जो पूँजी परिसम्पत्ति से प्राप्त होने वाली कुल सीमान्त आय को इसकी पुन: स्थापन लागत (पूर्ति कीमत का अर्थ वर्तमान बदली लागत अथवा पुन: स्थापन लागत के बराबर कर देती है।) पूँजी की सीमान्त क्षमता का सम्बन्ध सीमान्त इकाई से उसके सम्पूर्ण जीवन काल में मिलने वाली प्राप्ति से है। सीमान्त क्षमता का सम्बन्ध केवल चालू वार्षिक लाभ से नहीं है अपितु प्रत्याशित आदि प्राप्तियों को निवेश प्रेरणा के आवश्यक तत्व के रूप में स्वीकार करना है। पूँजी की सीमान्त क्षमता को लागत के ऊपर प्राप्ति की दर भी कहा जाता है।

- **पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (Marginal Productivity of Capital):** पूँजी की सीमान्त उत्पादकता से अभिप्राय पूँजी की एक अतिरिक्त इकाई के प्रयोग से अन्य साधन स्थिर रहने पर उत्पादन में होने वाली वृद्धि है।
- **मुद्रा बाजार (Currency Market):** मुद्रा बाजार मौद्रिक नीति के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए केन्द्रीय बैंक की मौद्रिक क्रियाकलापों की धूरी है, यहाँ अल्पकालीन स्वभाव की मौद्रिक सम्पत्तियों या प्रतिभूतियाँ जिनकी परिपक्वता एक रात्रि से 1 वर्ष होती है में व्यवहार होता है।

4.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. NNP_{FC} 2. GDP_{FC} 3. अमेंरिका में भारत का राजदूत

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. असत्य 2. सत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. असत्य

4.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- जैन, के.पी.; गुप्ता के.एल. (1906) ***"अर्थशास्त्र"***, नवयुग साहित्य सदन, आगरा ।
- जैन, टी.आर.; ओहरि, बी.के. (1912-13) ***"प्रारम्भिक समष्टि अर्थशास्त्र"***, के.के. ग्लोबल पब्लिकेशन्स प्रा.लि., नई दिल्ली।
- सिंघई, जी.सी.; मिश्रा, जे.पी. (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
- लाल, एस.के.; एस.एन (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, शिव पब्लिशिंग हाऊस, इलाहाबाद।
- सिन्हा, वी.सी. (1910-11) ***"अर्थशास्त्र"***, एस.पी.डी. पब्लिशिंग हाऊस, आगरा।
- सेठी, टी.टी. (1904-05) ***"समष्टि अर्थशास्त्र"***, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
- एन.सी.ई.आर.टी. (1907) ***"व्यष्टि अर्थशास्त्र: एक परिचय"*** एन.सी.ई.आर.टी., दिल्ली।
- अग्रवाल, एम.एन. (1907), ***"भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन"***, न्यू एज इण्टरनेशनल प्रा.लि., नई दिल्ली।

4.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), ***Macroeconomic Analysis***, Galgotia Publications, New Delhi Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.

- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics, Theory and policy***, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley, G. (1978), ***Macroeconomics : Theory and Policy***, Macmillan, New York

4.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. राष्ट्रीय आय की अवधारणाओं की व्याख्या कीजिए।
2. राष्ट्रीय आय समानिकाओ की व्याख्या कीजिए।
3. 'राष्ट्रीय आय' में परिवर्तन राष्ट्रीय कल्याण को प्रभावित करती है। इस कथन की विवेचना कीजिए।
4. राष्ट्रीय आय की संरचना की चर्चा कीजिए।

इकाई-5 राष्ट्रीय आय माप एवं लेखांकन
(Measurement and Accounting of National Income)

5.1 प्रस्तावना (Introduction)
5.2 उदेश्य (Objectives)
5.3 राष्ट्रीय आय को मापने की विधियाँ (Methods of Measuring National Income)
5.3.1 उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि (Production Method or Value Addition Method)
5.3.2 आय विधि (Income Method)
5.3.3 व्यय विधि (Expenditure Method)
5.4 राष्ट्रीय आय मापने में कठिनाईयाँ (Difficulties in measuring National Income)
5.5 राष्ट्रीय आय का महत्व (Importance of National Income)
5.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
5.7 सारांश (Summary)
5.8 शब्दावली (Glossary)
5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
5.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
5.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
5.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

परिचय से सम्बन्धित यह तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाई में आपने राष्ट्रीय आय की अवधारणा एवं संरचना के बारे में पढ़ा। राष्ट्रीय आय से सम्बंधित निम्न उपकरणों के बारे में जाना एवं उन्हें समझा। प्रस्तुत इकाई में राष्ट्रीय आय की माप एवं लेखांकन के बारे में विस्तार से चर्चा कि गई है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप राष्ट्रीय आय को मापने की विधियों को समझ सकेंगे एवं इन सभी विधियों की सावधानियों के बारे में भी आप ईस इकाई में पढेंगे तथा राष्ट्रीय आय माप की आधुनिक विधि सामाजिक लेखांकन की भी व्याख्या कर सकेंगे।

5.2 उदेश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- ✓ राष्ट्रीय आय को मापने की विधियों को जान सकेंगे।
- ✓ सामाजिक लेखांकन से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ राष्ट्रीय आय लेखांकन और राष्ट्रीय आय में अन्तर समझ सकेंगे।
- ✓ हस्तान्तरण भुगतान को जान सकेंगे।
- ✓ साधन आय को समझ सकेंगे।

5.3 राष्ट्रीय आय को मापने की विधियाँ (Methods of Measuring National Income)

जैसा की हम जानते हैं कि राष्ट्रीय आय की अवधारणा को तीन दृष्टिकोण से देखा जाता है- उत्पादन, आय और व्यय। उत्पादन, आय और व्यय आर्थिक गतिविधियों के चक्रीय प्रवाह का निर्माण करते हैं। उत्पादन प्रवाह यह बताता है कि अर्थव्यवस्था के विभिन्न उत्पादक क्षेत्रों में कितनी शुद्ध वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय आय को मापने की इस विधि को **उत्पादन विधि** या **मूल्य वृद्धि विधि** भी कहते हैं। आय प्रवाह यह व्यक्त करता है कि उत्पादन के फलस्वरूप उत्पत्ति के साधनों को उत्पादन प्रक्रिया के दौरान देश की घरेलू सीमाओं में कितनी आय का सृजन होता है और विदेशों से कितनी शुद्ध आय प्राप्त होती है। राष्ट्रीय आय को मापने की इस विधि को **आय विधि** कहते हैं।

जब आय प्राप्त होती है तो इसका व्यय किया जाता है। अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र जैसे सरकार, फर्म, उपभोक्ता उत्पादक आदि राष्ट्रीय आय का उपभोग करते है। राष्ट्रीय आय को मापने की इस विधि को **व्यय विधि** कहते है। संक्षेप में आप कह सकते हैं कि उत्पादन से आय संचरित होती है, आय से व्यय संचरित होता है एवं व्यय से उत्पादन संचरित होता है। इस प्रकार उत्पादन, आय और व्यय का चक्र निरन्तर चलता रहता है जिसका सम्बन्ध क्रमश उत्पादन, आय, वितरण और व्यय से होता है। चूँकि ये तीनों एक चक्र में चलते हैं। अतः इसे चक्रीय प्रवाह भी कहते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि राष्ट्रीय आय को मापने की तीन विधियाँ हैं जो इस प्रकार है:

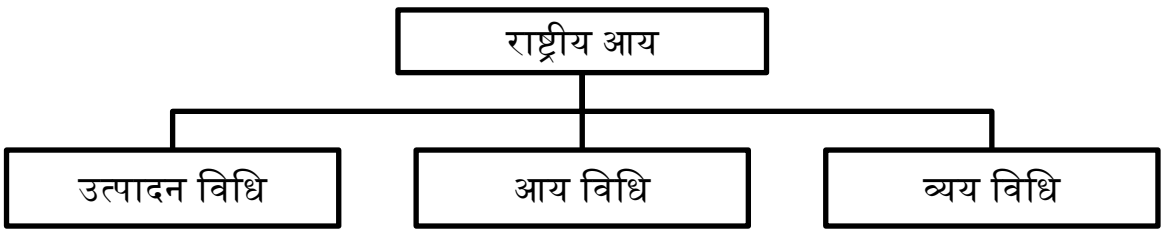

अब आप इन विधियों को एक-एक कर संक्षेप में पढेंगे।

5.3.1 उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि (Production Method or Value Addition Method)

'उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि एक लेखा वर्ष में देश की घरेलू सीमा के अन्तर्गत प्रत्येक उद्यम के उत्पादन में योगदान की गणना करके राष्ट्रीय आय मापती है।' उत्पादन से तात्पर्य कुल उत्पादन से नहीं है बल्कि शुद्ध उत्पादन से है।

$$\text{शुद्ध उत्पादन} = \text{कुल या सकल उत्पादन} - \text{ह्रास}$$

प्रो. कुजनेट्स (Prof. Kuznets) ने इस पद्धति को वस्तु सेवा पद्धति (Commodity Service Method) भी कहा है क्योंकि इसमें वस्तुओं और सेवाओं के प्रवाह का योग किया जाता है। राष्ट्रीय आय गणना की यह रीति अर्थव्यवस्था के विभिन्न वर्गों की आय का योग होती है। इसलिए इसे हम **'औद्योगिक उद्भव द्वारा राष्ट्रीय आय'** भी कहते हैं।

उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि द्वारा राष्ट्रीय मापने के लिए सामान्यतया तीन कदम का प्रयोग किया जाता हैं, ***पहला*** उत्पादक उद्यमों की पहचान तथा वर्गीकरण, ***दूसरा*** उत्पाद के मूल्य की गणना और ***तीसरा*** राष्ट्रीय आय का अनुमान।

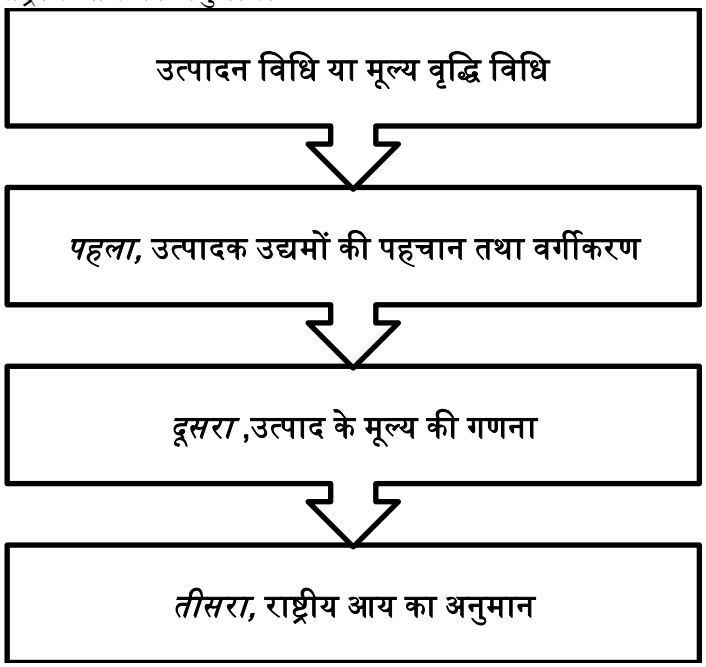

1. उत्पादक उद्यमों की पहचान तथा वर्गीकरण (Identification and Classification of Productive Enterprises):

इस विधि में सबसे पहले उन उत्पादक उद्यमों की पहचान की जाती है जो वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन करते है। उत्पादन का वर्गीकरण निम्न तीन क्षेत्रों में किया जाता है।

(क) प्राथमिक क्षेत्र या कृषि क्षेत्र: इसमें कृषि तथा कृषि से सम्बन्धित क्षेत्र, वन, मछली पालन, पशुपालन तथा खनन उद्योग सम्मिलित होते है।

(ख) द्वितीयक क्षेत्र या उद्योग क्षेत्र: इसमें निर्माण उद्योग, बिजली की आपूर्ति जल एवं गैस आदि को शामिल किया जाता है।

(ग) तृतीयक क्षेत्र या सेवा क्षेत्र: इसमें विभिन्न सेवाओं जैसे व्यापार परिवहन, बैंकिग, बीमा संचार, सामान्य प्रशासन आदि को शामिल किया जाता है।

इस विधि के अन्तर्गत वस्तुओं एवं सेवाओं की बाजार मूल्य पर गणना की जाती है इसलिए इसे **बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय उत्पादन (GNP_{MP})** भी कहा जाता है। इस विधि को निम्नलिखित सारणी संख्या 1 में स्पष्ट किया गया है-

सारिणी 1: बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद

विभिन्न क्षेत्र	उत्पादन मात्रा	कीमत (रू. में)	सकल मौद्रिक मूल्य (रू.)
1. प्राथमिक क्षेत्र	800	190	1,60,000
2. द्वितीयक क्षेत्र	600	300	1,80,000
3. तृतीयक क्षेत्र	900	500	4,50,000
बाजार कीमत पर GDP का कुल योग			7,90,000

सूत्र के रूप में, $GDP_{MP} = P \times Q$

जहाँ, P = प्रति इकाई बाजार कीमत Q = वस्तुओं एवं सेवाओं की मात्रा

2. उत्पाद के मूल्य की गणना (Calculating Product Price):

उत्पाद मूल्य की गणना की दो विधिया हैं, ***पहली*** अन्तिम उत्पाद विधि और ***दूसरी*** मूल्य वृद्धि विधि।

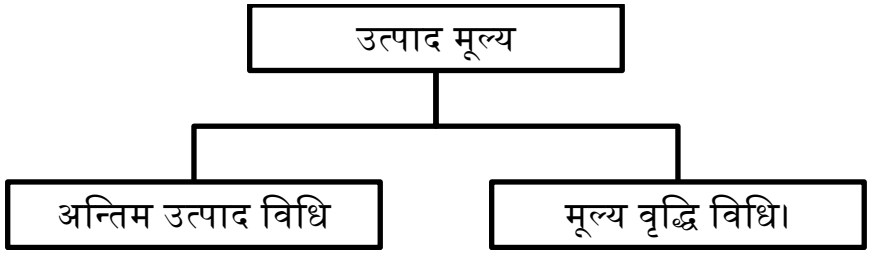

(क) अन्तिम उत्पाद विधि: इस विधि के अन्तर्गत वस्तुओं एवं सेवाओं के अन्तिम उपभोग की गणना की जाती है। वस्तुओं एवं सेवाओं का अन्तिम मूल्य निकालने के लिए इसमें से मध्यवर्ती (Intermediate) वस्तुओं और सेवाओं का मूल्य घटा दिया जाता है।

(ख) मूल्य वृद्धि विधि: तालिका 2 मूल्य वृद्धि (वर्धित मूल्य) की धारणा को स्पष्ट करती है।

सारिणी 2: मूल्य वृद्धि का आकलन

उत्पादक का नाम	उत्पादन की अवस्था	मध्यवर्ती वस्तु की लागत (रू.)	उत्पादन का मूल्य	मूल्य वृद्धि
किसान	गेहूँ	-	500	500
आटा चक्की	आटा	500	800	300
बेकर (डबलरोटी बनाने वाला)	डबलरोटी	800	1000	190
दुकानदार	विक्रय	1000	1500	500
योग		**2300**	**3800**	**1500**

उपरोक्त सारणी संख्या 2 में यह मान लिया गया है कि किसान को गेहूँ का उत्पादन करते समय कोई व्यय नहीं करना पड़ता है, वह स्वयं परिश्रम करता है तथा खाद बीज आदि पर कोई व्यय नहीं होता है। इसलिए किसान ने गेहूँ में 500 रू. की मूल्य वृद्धि की है। आटा चक्की ने 500 रू. की गेहूँ खरीदा और उससे आटा बनाकर 800 रु. में बेकर का बेंच दिया। जिससे आटा चक्की वाले ने 300 रु. (800-500) की मूल्य वृद्धि की। अब बेकर ने उस आटे से डबलरोटी बनाकर 1000 रु. में दुकानदार को बेचा जिससे बेकर ने 190 रु. (1000-800) की मूल्य वृद्धि की। दुकानदार ने ग्राहकों को डबलरोटी 1500 रु. में बेची। इस प्रकार दुकानदार ने रु. 500 (1500-1000) की मूल्य वृद्धि की। इस प्रकार कुल मूल्य वृद्धि = 500+300+190+500 = रु 1500 होगी। जबकि कुल वस्तुओं एवं सेवाओ का मूल्य रु 3800 है।

सूत्र के रुप में,

मूल्य वृद्धि = कुल उत्पादन का मूल्य − मध्यवर्ती वस्तु की कुल लागत

मूल्य वृद्धि = रु. 3800-2300 =1500

मूल्य में वृद्धि रु. 1500 है जो अन्तिम वस्तु एवं सेवा का मूल्य है।

3. राष्ट्रीय आय का अनुमान (Estimation of National Income):

एक लेखा वर्ष के दौरान किसी देश की घरेलू सीमाओं के अंदर सभी उत्पादक उद्यमियों द्वारा की गई सकल मूल्य वृद्धि को **बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (GDP_{MP})** कहा जाता है। GDP_{MP} का आकलन करने के बाद हम साधन लागत **पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP_{FC})** ज्ञात करते हैं। NNP_{FC} को ही राष्ट्रीय आय कहा जाता है। उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि का प्रयोग करते हुए राष्ट्रीय आय के मापन के चरण इस प्रकार हैं:

1. सबसे पहले हम GDP_{MP} का अनुमान लगाते हैं।
2. फिर GDP_{MP} में से मूल्यह्रास घटा देते है। जिससे बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{MP}) प्राप्त होता है।
3. शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{MP}) में से अप्रत्यक्ष कर घटा देते हैं तथा आर्थिक सहायता को जोड़ देते है। इससे साधन लागत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{FC}) प्राप्त होती है।
4. शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{FC}) में विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय को जोड़ देने से NNP_{FC} प्राप्त होता है। इसे ही राष्ट्रीय उत्पाद या राष्ट्रीय आय कहते हैं।

उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि द्वारा राष्ट्रीय आय की गणना इस प्रकार से होती है:

बाजार कीमत पर सकल मूल्य वृद्धि या घरेलू उत्पाद (GDP_{MP})
= प्राथमिक क्षेत्र का सकल मूल्य वृद्धि + द्वितीयक क्षेत्र का सकल मूल्य वृद्धि + तृतीयक क्षेत्र का सकल मूल्य वृद्धि

or

Gross Value Added or Domestic Product at Market Price (GDP_{MP})
= Gross Value Added of Primary Sector + Gross Value Added of Secondary Sector + Gross Value Added of Tertiary Sector

बाजार मूल्य पर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{MP}) = GDP_{MP} − मूल्य ह्रास

or

***Net Domestic Product at Market Price* (NDP_{MP})**
= GDP_{MP} − *Depreciation*

साधन लागतपर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{FC}) = NDP_{MP} − शुद्ध अप्रत्यक्ष कर

or

Net Domestic Product at Factor Cost* (NDP_{FC}) = NDP_{MP} − *Indirect Taxes

साधन लागतपर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP_{FC}) = NDP_{FC} + विदेश से शुद्ध कारक आय

or

***Net National Product at Factor Cost* (NNP_{FC})**
= NDP_{FC} + *Net Factor Income from abroad* ($NFIA$)

साधन लागत या कारक लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय आय (NNP_{FC}) ही राष्ट्रीय आय है।

NNP_{FC} ही राष्ट्रीय आय को दर्शाता है।

ध्यान दें,

शुद्ध अप्रत्यक्ष कर $(Net\ Indirect\ Tax)$

$=$ **अप्रत्यक्ष कर**$(Indirect\ Tax)$ $-$ **आर्थिक सहायता**$(Subsidy)$

उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि सम्बन्धी सावधानियाँ (Precautions related to Production method or Value added method)

उत्पादन विधि से राष्ट्रीय आय की गणना करते समय कुछ मदों को इसमें सम्मिलित किया जाता है और कुछ मदों की इसमें सम्मिलित नहीं किया जाता है।

अ. सम्मिलित करना चाहिए-

1. पुरानी वस्तुओं के व्यापारियों की दलाली।
2. सभी उत्पादक इकाईयों द्वारा किए गए स्वलेखा उत्पादन।
3. स्व-उपभोग के लिए उत्पादन का आरोपित मूल्य (imputed value)।
4. जिन मकानों में मालिक खुद रहते हैं उनका भी आरोपित किराया शामिल किया जाता है।

ब. सम्मिलित नहीं करना चाहिए-

1. पुरानी वस्तुओं का क्रय-विक्रय।
2. मध्यवर्ती वस्तुओं का मूल्य उत्पादन में शामिल नहीं किया जाता क्योंकि उसका मूल्य अंतिम वस्तुओं के मूल्य में शामिल होता है।
3. स्व-उपभोग सेवाओं का मूल्य।

उत्पादन विधि में विशेष ध्यान देने वाली बात यह है कि वस्तु अथवा सेवा के मूल्य की दोहरी गणना ना हो और केवल अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य को जोड़ा जाए।

5.3.2 आय विधि (Income Method)

इस विधि के अन्तर्गत एक वर्ष में उत्पादन के कारकों के स्वामित्यों (श्रमिकों, भू-स्वामियों, पूँजीपतियों तथा उद्यमियों) को उनकी सेवाओं के बदले किए गए भुगतानों (मजदूरी, लगान, ब्याज तथा लाभ) के रुप में मापा जाता है। इन सभी की आय के जोड़ का परिणाम **साधन लागत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{FC})** होता है। साधन लागत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद में विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय जोड़ देने से राष्ट्रीय आय प्राप्त होती है। चूँकि इसमें सभी साधनों की अर्जित आय को जोड़ा जाता है इसलिए इसे **कारक या साधन भुगतान विधि** भी कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, इसमें एक वर्ष में साधनों की आय के प्रवाह का प्रयोग किया जाता है, इसलिए इस विधि को **'आय प्रवाह विधि (Income Flow Income)'** भी कहते हैं। आय विधि का प्रयोग करने से पहले आपको कारक आय के वर्गीकरण के बारे में जानना जरुरी है-

कारक/साधन आय का वर्गीकरण:-

साधन या कारक आय को मुख्य रुप से निम्नलिखित भागों में बांटा जाता है:

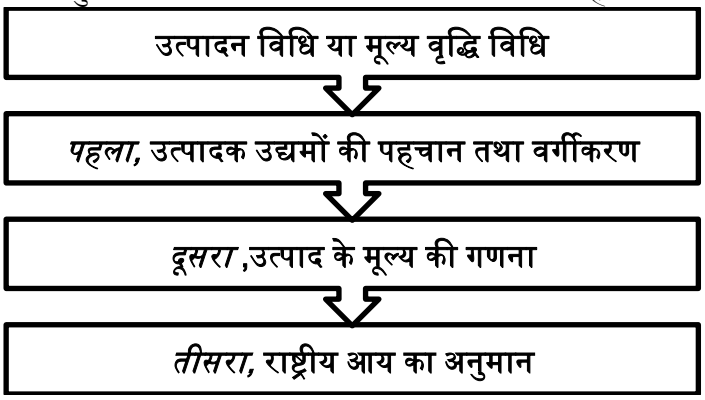

1. कर्मचारियों का पारिश्रमिक (Compensation to employees):

इसके अन्तर्गत नकद मजदूरी तथा वेतन, रुपयों के बदले माल द्वारा भुगतान और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में मालिकों के योगदान को शामिल किया जाता है।

2. प्रचालन अधिशेष (Operating Surplus):

इसके अन्तर्गत सम्पत्ति तथा उद्यमशीलता से प्राप्त आय को शामिल किया जाता है। इसमें निम्नलिखित कारक सम्मिलित है: **पहला** लगान, **दूसरा** ब्याज और **तीसरा** लाभ।

लाभ को तीन भागों में बांटा जाता है-

i. **लाभांश (Divident):** लाभ का वह भाग जिसे भागीदारों में बांटा जाता है। इसे वितरित लाभ भी कहते हैं।

ii. **निगम लाभ कर (Corporate profit tax):** निगम के लाभ का वह भाग जिसे लाभ कर के रूप में सरकार को दिया जाता है।

iii. **अवितरित लाभ (Undistributed profit):** लाभ का वह भाग है जिसे फर्में अपने पास रखती है। इसे 'निगम बचत' अथवा अवितरित लाभ भी कहते हैं।

3. मिश्रित आय (Mixed Income):

स्वरोजगार व्यक्तियों की आय को मिश्रित आय कहते हैं क्योंकि यह वो व्यक्ति होते हैं जो अपने श्रम, भूमि, पूँजी तथा उद्यमशीलता का प्रयोग करके वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन करते है। इसके बदले उन्हें आय प्राप्त होती है। यह आय मजदूरी, लगान ब्याज तथा लाभ का मिश्रण होती है। तभी इसे **मिश्रित आय** कहते हैं। आय विधि का प्रयोग करते हुए राष्ट्रीय आय का माप निम्नलिखित चार्ट से स्पष्ट किया गया है।

आय विधि का प्रयोग करते हुए राष्ट्रीय आय का माप

कारक लागत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{FC}) = **कर्मचारियों का पारिश्रमिक** + **प्रचालन अधिशेष** + **मिश्रित आय**

or,

$$\textbf{Net Domestic Product at Factor Cost } (\mathrm{NDP}_{FC}) = \textbf{Compensation of Employees} + \textbf{Operating Surplus} + \textbf{Mixed Income}$$

कारक लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद $(NNP_{FC}) = NDP_{FC} +$ **विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय**

or

$$Net\ National\ Product\ at\ Factor\ Cost\ (NNP_{FC}) = NDP_{FC} + Net\ Factor\ Income\ from\ abroad\ (NFIA)$$

आय विधि के द्वारा राष्ट्रीय आय की गणना करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाता है-

i. ऐसे भुगतानों को ही शामिल किया जाए, जिसका वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में योगदान होता है। दूसरे शब्दों में हस्तान्तरण भुगतान जैसे वृद्धावस्था की पेंशन, निर्धनों को राहत भुगतान, छात्रों की छात्रवृत्ति इत्यादि को राष्ट्रीय आय की गणना में शामिल नहीं किया जाता है।

ii. जिन वस्तुओं एवं सेवाओं का कोई नकद भुगतान नहीं किया जाता (जैसे घर की स्त्री की सेवाएँ) उन्हें राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जाता।

iii. अवितरित लाभ को राष्ट्रीय आय में शामिल किया जाता है।

iv. उत्पादन में लगे स्वयं के साधनों की आय को (बाजार कीमत पर) राष्ट्रीय आय में शामिल करना चाहिए यदि वे किसी वस्तु के उत्पादन लागत के अंग है।

आय विधि सम्बन्धी सावधानियाँ (Precautions related to Income method):

आय विधि द्वारा राष्ट्रीय आय की गणना करते समय निम्नलिखित सावधानियों पर विशेष ध्यान देना चाहिए-

1. हस्तातरित आय (transfer income) को राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जाता है।
2. गैर कानूनी तरीके से प्राप्त की गई आय को राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जाता है।
3. जिन करों का भुगतान चालू आय में से नहीं किया जाता, उन्हें राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जाता है जैसे-मृत्यु कर, आकस्मिक लाभ पर कर, उपहार कर तथा सम्पत्ति कर इत्यादि।
4. आय कर कर्मचारियों के पारिश्रमिक के माध्यम से दिया जाता है। इसे अलग से राष्ट्रीय आय में नहीं जोड़ा जाना चाहिए।
5. पुरानी वस्तुओं के विक्रय से प्राप्त आय को राष्ट्रीय में शामिल नहीं किया जाता है।
6. बॉण्ड और शेयर के विक्रय से प्राप्त आय को राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जाता है।

आय विधि द्वारा राष्ट्रीय आय की गणना में निम्नलिखित को शामिल किया जाना चाहिए।

1. पुरानी वस्तुओं की बिक्री तथा खरीद पर दिये जाने वाले कमीशन या दलाली को राष्ट्रीय आय में शामिल किया जाता हैं।
2. शेयर तथा बॉण्ड्स की बिक्री/खरीद पर दी जाने वाली दलाली।
3. जिन मकानों में मकान मालिक स्वयं रहेंगे उनके आरोपित किराए को।
4. स्व-उपभोग के लिए उत्पादन को।

इस विधि में दोहरी गणना से बचा जाना चाहिए। उदाहरण के लिए एक मालिक की आय 10,000 रूपया प्रतिमाह है, उसमें से वह अपने नौकर को 1,000 रूपये प्रतिवर्ष देता है तो यदि मालिक की आय 1,19,000 रूपये प्रतिवर्ष माप ली गयी है तो नौकर की आय पृथक से नहीं आंकी जानी चाहिए वरना दोहरी गणना हो जाएगी।

5.3.3 व्यय विधि (Expenditure Method)

अपनी आय का एक भाग लोग व्यय करते हैं तथा दूसरा शेष बचत के रुप में रखते हैं। अत: किसी देश के समस्त व्यक्तियों का कुल व्यय तथा उनकी कुल बचत दोनों मिलाकर देश के कुल आय के बराबर होगी। यह विधि इसी तथ्य पर आधारित है कि कुल बचत, कुल विनियोग के बराबर होती है, इसलिए इस विधि को **उपभोग-विनियोग विधि** (Consumption investment Method) भी कहते हैं। चूँकि इस विधि के अन्तर्गत लोगों के व्ययों की गणना की जाती है, इसलिए इसको **'व्यय गणना विधि'** भी कहते हैं। व्यय विधि के अनुसार एक लेखा वर्ष के दौरान अर्थव्यवस्था में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाओं को खरीदने के लिए किए गए व्यय के रूप में राष्ट्रीय आय को मापा जाता है क्योंकि अन्तिम व्यय में उपभोग और निवेश सम्मिलित होता है। इस कारण इसे **उपभोग-निवेश विधि** या **आय विन्यास विधि भी** कहते है। एक लेखा वर्ष के दौरान उत्पादित अन्तिम वस्तुओं (एक देश की घरेलू सीमा के अन्दर) पर किए गए व्यय का अनुमान **बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (GDP_{MP})** के बराबर होता है। इसमें विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय को जोड़कर साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय आय (NNP_{FC}) कहते है।

व्यय विधि के अनुसार राष्ट्रीय आय की गणना एक लेखा वर्ष के दौरान अतिम वस्तुओं तथा सेवाओं पर किए जाने वाले अंतिम व्यय पर आधारित है। देश की घरेलू सीमा के अन्तर्गत इन सभी आर्थिक इकाईयों द्वारा किए जाने वाले अन्तिम व्यय को मोटे तौर पर चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है, **पहली** निजी अन्तिम उपभोग व्यय, **दूसरी** सरकारी अतिम उपभोग व्यय, **तीसरी** निवेश व्यय और **चौथी** शुद्ध निर्यात (निर्यात-आयात)। इनका विस्तृत वर्णन निम्नलिखित है:

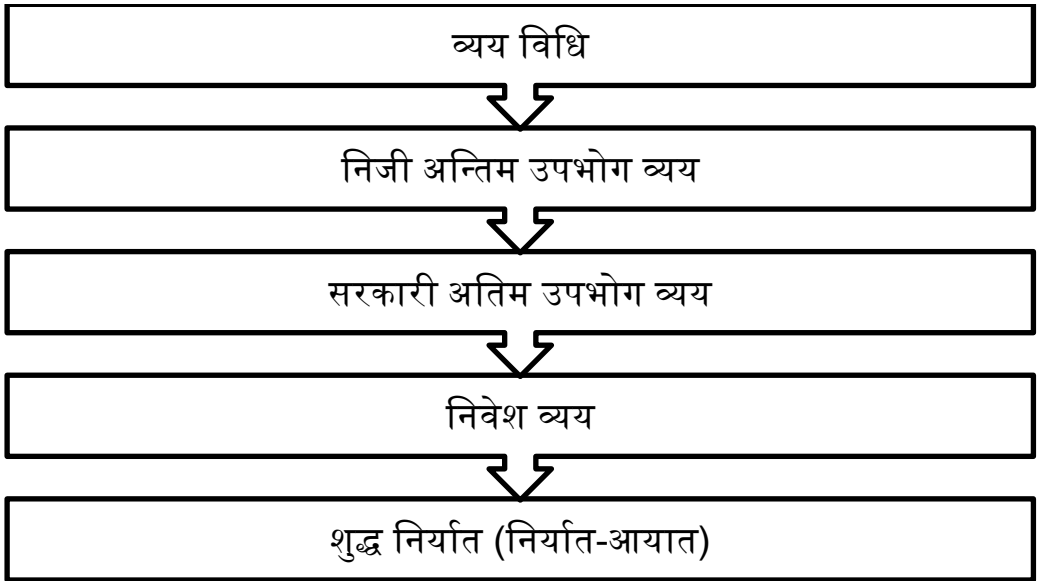

1. निजी अन्तिम उपभोग व्यय (Private Final Consumption Expenditure):

इससे अभिप्राय व्यक्तियों, परिवारों तथा गैर-लाभ वाली निजी संस्थाओं या सेवा संस्थाओं द्वारा अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाओं पर किए गए व्यय से हैं। यह व्यय तीन प्रकार का होता है,

i. **टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुएँ:** वे वस्तुएँ जिनका उपभोग कई वर्षों तक बार-बार कर सकते हैं जैसे- फर्नीचर, कालीन, वांशिग मशीन, अलमीरा, कार इत्यादि।

ii. **गैर-टिकाऊ उपभोग वस्तुएँ:** वे वस्तुएँ जो शीघ्र ही खराब हो जाती है या जिनको तुरंत इस्तेमाल करना होता हैं, जिनका बार-बार प्रयोग नहीं कर सकते जैसे- मक्खन, दुध आदि।

iii. **विभिन्न उपभोक्ता सेवाएँ:** जैसे- शिक्षण, मनोरंजन, संचार तथा परिवहन आदि।

एक देश में गैर निवासी परिवारों तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा भी व्यय किया जाता है, किन्तु इस व्यय को घरेलू निजी अन्तिम उपभोग व्यय में शामिल नहीं किया जाता है। यदि देश के नागरिकों द्वारा सीधे विदेशों से माल के क्रय पर व्यय किया जाता है तो इसे निजी अन्तिम उपभोग व्यय में शामिल किया जाता है।

2. सरकारी या शासकीय अन्तिम उपभोग व्यय (Government Final Consumption Expenditure):

इससे अभिप्राय सरकार द्वारा अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाओं पर किए जाने वाले व्यय से है। ये व्यय इस प्रकार हैं, **पहला** कर्मचारियों का पारिश्रमिक, **दूसरा** सामूहिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यय जैसे: रोड, पार्क, ब्रीज, स्ट्रीट लाइट, रक्षा, स्वास्थ्य, कानून एवं सांस्कृतिक अंग मनोरंजन आदि पर व्यय, **तीसरा** चालू खाते के अन्तर्गत सरकार द्वारा विदेशों से वस्तुओं एवं सेवाओं का प्रत्यक्ष क्रय जैसे दूतावास पर किया गया खर्च, विदेशों में भारतीय दूतावास द्वारा किया गया खर्च जैसे- पेट्रोल, संचार आदि और **चौथा** विदेशों में वस्तुओं एवं सेवाओं का शुद्ध क्रय।

3. निवेश व्यय (Investment Expenditure):

निवेश व्यय वस्तुओं के उत्पादन प्रक्रिया में आगे प्रयोग किया जाता है जिससे पूँजी का निर्माण होता है। निवेश व्यय को निम्नलिखित दो भागों में वर्गीकृत किया जाता है, पहला स्थायी निवेश और दूसरा माल-सूची निवेश।

i. **स्थायी निवेश (Permanent Investment):** स्थायी निवेश में अभिप्राय उत्पादकों द्वारा पूँजी निर्माण पर किए गए व्यय से है। एक लेखा वर्ष में उपभोग के अतिरिक्त जो उत्पादन होता है। उसे पूँजी निर्माण कहते है। पूँजी निर्माण में परिसम्पत्तियों का निर्माण होता है जो दो प्रकार की होती है: **पहली**, निर्माण से सम्बन्धित: इसमें व्यवसायिक स्थायी निवेश, परिवारों द्वारा

रिहायशी मकानों के निर्माण तथा सरकार द्वारा किया गया स्थायी निवेश जैसे- सड़कों, बांधों तथा पुलों का निर्माण आदि। **दूसरा**, मशीनें एवं उपकरण से सम्बन्धित निवेश: यह वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादक में सहायक होती है और इन्हें विनियोग में सम्मिलित किया जाता है।

ii. **माल-सूची निवेश (Inventory Investment):** माल-सूची का सम्बन्ध एक वर्ष के अन्त में **'अन्तिम स्टॉक'** तथा **'प्रारम्भिक स्टॉक'** के अन्तर से है। स्टॉक में निम्नलिखित तीन उपकरण सम्मिलित होते हैं, ***पहला*** कच्चे माल का स्टॉक, ***दूसरा*** अर्द्धनिर्मित वस्तुओं का स्टॉक तथा ***तीसरा*** निर्मित वस्तुओं का स्टॉक।

यदि वर्ष के अन्त में इस स्टॉक या माल-सूची में वृद्धि होती है तो वृद्धि के मूल्य को **माल-सूची** या **स्टॉक में विनियोग** माना जाता है। स्टॉक में परिवर्तन का अनुमान वर्ष के अन्त में अन्तिम स्टॉक में से प्रारम्भिक स्टॉक घटाकर लगाया जाता है अर्थात स्टॉक में परिवर्तन त्र अन्तिम स्टॉक-प्रारम्भिक स्टॉक।

4. शुद्ध निर्यात (Net Export):

निर्यात और आयात के अन्तर को शुद्ध निर्यात कहते है। निर्यात से अभिप्राय देश की घरेलू सीमा में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं (final goods) तथा सेवाओं पर विदेशियों द्वारा किए जाने वाले व्यय से है इसके विपरित आयात से अभिप्राय उस व्यय से है जो विदेशों में उत्पादित वस्तुओं और सेवाएँ पर किया जाता है। यदि आयात की तुलना में निर्यात अधिक होगा तो शुद्ध निर्यात धनात्मक और यदि आयात निर्यात से अधिक होगा तो शुद्ध निर्यात ऋणात्मक होगा।

एक लेखा वर्ष में घरेलू सीमा में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं पर हुए कुल व्यय के जोड़ को **बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद** कहा जाता है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर व्यय विधि के अनुसार राष्ट्रीय आय की गणना निम्नलिखित है:

$$\textbf{बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद } (\mathbf{GDP}_{MP}) = \textbf{निजी अन्तिम उपभोग व्यय} + \textbf{सरकारी अन्तिम उपभोग व्यय} + \textbf{सकल घरेलू स्थायी निर्माण} + \textbf{माल} - \textbf{सूची निवेश} + \textbf{शुद्ध निर्यात}$$

or

$$\textit{Gross Domestic Product at Market Price } (GDP_{MP}) = \textit{Private Final Consumption Expenditure} + \textit{Government Final Consumption Expenditure} + \textit{Gross Domestic Fixed Manufacturing} + \textit{Inventories Investment} + \textit{Net Exports}$$

$$\textbf{राष्ट्रीय आय } (NNP_{FC}) = GDP_{MP} - \textbf{मूल्यह्रास} - \textbf{शुद्ध अप्रत्यक्ष कर} + \textbf{विदेशों से शुद्ध साधन आय}$$

or

$$\textit{National Income } (NNP_{FC}) = GDP_{MP} - \textit{Depreciation} - \textit{Net Indirect Taxes} + \textit{Net Factor Income from abroad}$$

यहाँ कुछ बाते ध्यान देंने वाली हैं जैसे:

1. साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद ही राष्ट्रीय आय है।
2. शुद्ध अप्रत्यक्ष कर = अप्रत्यक्ष कर- आर्थिक सहायता
3. साधन लागत = बाजार कीमत-अप्रत्यक्ष कर + आर्थिक सहायता
4. बाजार कीमत = साधन/कारक लागत + अप्रत्यक्ष कर-आर्थिक सहायता

या

बाजार कीमत = कारक/साधन लागत+शुद्ध अप्रत्यक्ष कर

5. सकल घरेलू उत्पाद = बाजार कीमत (p) X उत्पादित अन्तिम वस्तुएं एवं सेवाएं (Q)

व्यय विधि सम्बन्धी सावधानियाँ (Precautions related to Expenditure method)

राष्ट्रीय आय की गणना में व्यय विधि का प्रयोग करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ आवश्यक है।

1. वस्तुओं तथा सेवाओं पर किया गया केवल अन्तिम व्यय ही राष्ट्रीय आय में शामिल करना चाहिए।
2. मध्यवर्ती वस्तुओं तथा सेवाओं पर होने वाले व्यय को राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं करना चाहिए।
3. पुरानी वस्तुओं पर किया जाने वाले व्यय राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं होता है।
4. सरकार द्वारा वृद्धावस्था पेंशन, छात्रवृत्ति, बेरोजगारी भत्ता, बीमा, आर्थिक सहायता आदि पर किया जाने वाला व्यय राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जाता है।
5. शेयरों तथा बाण्डों पर किया गया व्यय भी कुल व्यय में शामिल नहीं किया जाता है क्योंकि यह केवल कागजी दावे हैं और इनका अंतिम वस्तुओं तथा सेवाओं के प्रवाह से सम्बन्ध नहीं होता। ऐसे व्यय कोई मूल्य वृद्धि नहीं करते।

5.4 राष्ट्रीय आय मापने में कठिनाईयाँ (Difficulties in measuring National Income)

राष्ट्रीय आय की गणना में मुख्यतः दो प्रकार की समस्या आती है।

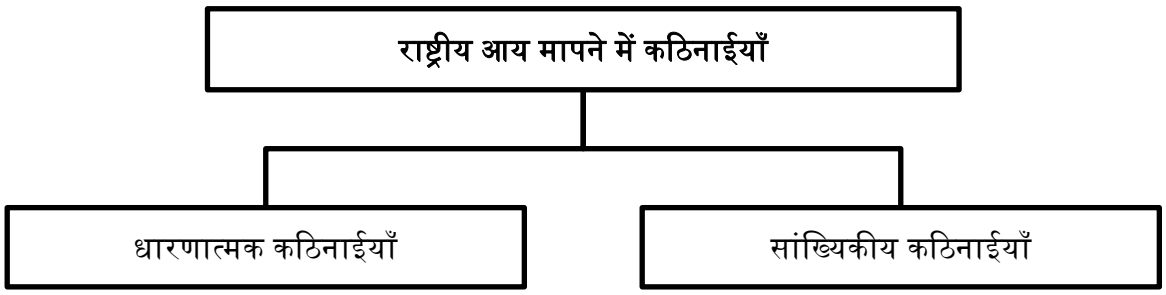

1. धारणात्मक कठिनाईयाँ (Conceptual Problems):

राष्ट्रीय आय की गणना मुद्रा में की जाती है। परन्तु उत्पादन की गई अनेक वस्तुएँ एवं सेवाएँ ऐसी होती है जिनका ना हम मुद्रा में भुगतान कर सकते है और ना ही उसे बाजार में बेच सकते है। उदारण के लिए गृह-स्वामिनी द्वारा अपने परिवार के लिए गयी सेवाएँ ऐसी होती है, जिनका ना हम मुद्रा में भुगतान कर सकते है और ना ही उसे बाजार में बेच सकते है। उदाहरण के लिए गृह-स्वामिनी द्वारा अपने परिवार के लिए की गयी सेवाएँ महत्वपूर्ण होते हुए भी मुद्रा में व्यक्त नहीं की जा सकती। शायद इसलिए गृह-स्वामिनी की सेवा की राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जा सकता है दूसरी तरफ उत्पादन एक ऐसा भाग होता है जिसका उपभोग स्वयं उत्पादक करता है जैसे किसान अपनी कृषि उपज का कुछ भाग स्वयं के उपभोग के लिए रखता है। स्व-उपभोग के लिए रखी वस्तुओं का बाजार मूल्य आंकने में कठिनाईयाँ होती है।

सरकार द्वारा उपलब्ध करायी गयी प्रशासनिक सुरक्षा तथा न्याय आदि से सम्बन्धित सेवाओं का भी बाजार मूल्य निर्धारित नहीं किया जा सकता है इसलिए इन सेवाओं का मूल्य साधन लागत

(अर्थात वेतन आदि के रूप में किए गये व्यय) के आधार पर लगाया जाता है और इसे अन्तिम उपभोग मानकर राष्ट्रीय आय में सम्मिलित कर लिया जाता है।

2. सांख्यिकीय कठिनाईयाँ (Statistical Problems):

उत्पादकों के पास रखे माल-सूची निवेश को राष्ट्रीय आय में सम्मिलित किया जाता है। कीमत में परिवर्तन होने पर माल-सूची निवेश में परिवर्तन हो जाता है। स्टॉक के मूल्य में परिवर्तन से यही नहीं पता चल पाता कि वास्तव में कितनी मात्रा में परिवर्तन हुआ हैं जिससे राष्ट्रीय आय के अनुमान प्रभावित हुए है। विभिन्न वर्षों की राष्ट्रीय आय की तुलना में परिवर्तन का समायोजन करना पड़ता है। इसके लिए **मूल्य निर्देशांकों (Price Index)** का प्रयोग किया जाता है। परन्तु मूल्य-निर्देशांक प्रायः सही नहीं होते है क्योंकि कीमत निर्देशांक तैयार करने के लिए यह निर्णय करना होगा कि कौन-कौन सी वस्तुएँ सम्मिलित की जाए, उनको कितना महत्व या भार दिया जाए, किस प्रकार की कीमतें ली जाए। इन सब का निर्णय लेना ही बहुत कठिन है। कहीं भी भूल होने पर गलत परिणाम सामने आयेंगे और इनका राष्ट्रीय आय सम्बन्धी अनुमानों पर प्रभाव पड़ेगा।

5.5 राष्ट्रीय आय का महत्व (Importance of National Income)

राष्ट्रीय आय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की गतिविधियों को बताती है और इस प्रकार यह एक देश की आर्थिक नाड़ी की गति की जानकारी देती है। इसका महत्त्व निम्नलिखित हैः

1. राष्ट्रीय आय के आधार पर प्रति व्यक्ति आय का औसत अनुमान लगाया जाता है और लोगों के जीवन स्तर के बारे में अनुमान प्राप्त किए जा सकते है।
2. राष्ट्रीय आय आर्थिक नीति के निर्धारण में सहायक होती है।
3. राष्ट्रीय आय आर्थिक प्रवृत्तियों को दिशा निर्देशन देती है। स्थायित्वपूर्ण विकास के लिए विनियोग की आवश्यकता है। इसी के अनुसार आर्थिक प्रवृत्तियाँ प्रभावित होती है तथा विशिष्ट वित्तीय, मौद्रिक और मजदूरी एवं रोजगार सम्बन्धी नीतियाँ अपनायी जाती है।
4. राष्ट्रीय आय सम्बन्धी आँकड़े आर्थिक उन्नति का तुलनात्मक अध्ययन करने में मदद करते है।
5. आर्थिक योजनाओं में लक्ष्यों का निर्धारण, बच्चों की प्राप्ति तथा नियोजन की सफलता का अनुमान राष्ट्रीय आय तथा उसके अंगों की मात्राओं में परिवर्तन के आधार पर लगाया जाता है।
6. राष्ट्रीय आय के आँकड़े देश की अर्थव्यवस्था के ढाँचे अर्थात उसके विभिन्न अंगों (जैसे प्राथमिक क्षेत्र, द्वितीयक क्षेत्र तथा सेवा क्षेत्र) की स्थिति पर प्रकाश डालते है।
7. राष्ट्रीय आय के आंकड़ें उत्पादन के साधन आय (जैसे लगान, मजदूरी, ब्याज और लाभ) की वितरण की जानकारी देते है। इसके आधार पर असमानता को दूर करने में सरकार को मदद करती है।
8. राष्ट्रीय आय वास्तविक वृद्धि देश के आर्थिक कल्याण का सूचक है।
9. राष्ट्रीय आय पूँजी निर्माण में मदद करती है।
10. आर्थिक, सामाजिक एवं वाणिज्यिक विषयों के शोधरत छात्रों के लिए राष्ट्रीय आय के आंकड़े उपयोगी होते हैं।

5.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. राष्ट्रीय आय वास्तविक वृद्धि देश के .....का सूचक है। (आर्थिक कल्याण **या** व्यक्तिगत कल्याण)
2. राष्ट्रीय आय की गणना में मुख्यत: ..... और सांख्यिकीय प्रकार की कठिनाईयाँ आती है। (अधारणात्मक **या** धारणात्मक)

3. एक लेखा वर्ष के दौरान किसी देश की घरेलू सीमाओं के अंदर सभी उत्पादक उद्यमियों द्वारा की गई सकल मूल्य वृद्धि को ..... कहा जाता है। (बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (GDP_{MP}) **या** बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP_{MP}))

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि द्वारा राष्ट्रीय आय के आकलन में स्व उपभोग सेवाओं का मूल्य वृद्धि को शामिल नहीं किया जाता है।
2. एक लेखा वर्ष के दौरान अर्थव्यवस्था में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाआं के बाजार मूल्य को वैयक्तिक आय कहते हैं।
3. घरेलू मूल्य और राष्ट्रीय मूल्य में जो अन्तर होता है, वह विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय के बराबर होता है।
4. राष्ट्रीय स्थायी निवेश में व्यावसायिक स्थायी निवेश, परिवारों द्वारा रिहायशी मकानों के निर्माण पर किया गया स्थायी निवेश तथा सार्वजनिक या सरकार द्वारा किया गया स्थायी निवेश सम्मिलित होता हैं।

5.7 सारांश (Summary)

इस इकाई में आपने राष्ट्रीय आय की अवधारणा को तीन दृष्टिकोण से देखा- उत्पादन, आय और व्यय। आपने जाना की राष्ट्रीय आय को मापने की यह तीन विधियाँ हैं। ***"उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि एक लेखा वर्ष में देश की घरेलू सीमा के अन्तर्गत प्रत्येक उद्यम के उत्पादन में योगदान की गणना करके राष्ट्रीय आय मापती है।"*** उत्पादन से तात्पर्य कुल उत्पादन से नहीं है बल्कि शुद्ध उत्पादन से है।

उत्पादन विधि या मूल्य वृद्धि विधि द्वारा राष्ट्रीय मापने के लिए सामान्यतया तीन कदम का प्रयोग किया जाता हैं, पहला उत्पादक उद्यमों की पहचान तथा वर्गीकरण, दूसरा उत्पाद के मूल्य की गणना और तीसरा राष्ट्रीय आय का अनुमान। आपने साथ ही विधि को समझा और सूत्र को भी गौर से पढ़ा। उत्पादन विधि की सीमओं के बारे में भी आपने जाना और समझा की इस विधि से राष्ट्रीय आय का अनुमान लगाते समय किन-किन बातो को ध्यान में रखना हैं जैसे पहली वस्तु अथवा सेवा के मूल्य की दोहरी गणना ना हो। और दूसरी केवल अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य को जोड़ा जाता है। इसके बाद आपने आय विधि के बारे में पढ़ा और जाना की आय विधि के अन्तर्गत एक वर्ष में उत्पादन के कारकों के स्वामित्यों (श्रमिकों, भू-स्वामियों, पूँजीपतियों तथा उद्यमियों) को उनकी सेवाओं के बदले किए गए भुगतानों (मजदूरी, लगान, ब्याज तथा लाभ) के रुप में मापा जाता है। इस विधि की सावधानियों के बारे में आपने गौर से पढ़ा।

राष्ट्रीय आय को मापने वाली तीसरी विधि हैं व्यय विधि जिसके अनुसार एक लेखा वर्ष के दौरान अर्थव्यवस्था में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाओं को खरीदने के लिए किए गए व्यय के रूप में राष्ट्रीय आय को मापा जाता है क्योंकि अन्तिम व्यय में उपभोग और निवेश सम्मिलित होता है। इस कारण इसे उपभोग-निवेश विधि या आय विन्यास विधि भी कहते है। आपने इस इकाई में इन तीनों विधियों के सूत्र को भी समझा और जाना की इनकी सावधानिया क्या-क्या हैं अर्थात किन बातो को ध्यान में रख कर यह विधियाँ उपयोग में लायी जा सकती हैं। इसके साथ ही आपने राष्ट्रीय आय को मापने में आने वाली दो कठिनाईयों को भी जाना पहली धारणात्मक कठिनाईयाँ और दूसरी सांख्यिकीय कठिनाईयाँ। साथ ही राष्ट्रीय आय का महत्व क्या हैं आपने यह भी समझा।

5.8 शब्दावली (Glossary)

- **मूल्य वृद्धि (Price Hike):** मूल्य वृद्धि किसी उद्यम के उत्पाद के मूल्य तथा इसके मध्यवर्ती उपभोग के मूल्य का अन्तर है।

- **विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय (Net factor income from abroad):** विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय से अभिप्राय अपने निवासियों द्वारा शेष विश्व से अर्जित कारक आय (लगान, मजदूरी, ब्याज तथा लाभ) तथा गैर निवासियों द्वारा देश में अर्जित कारक आय के अन्तर से है।
- **आरोपित मूल्य (Imputed Value):** उत्पादन का वह भाग जो स्वयं के प्रयोग या उपभोग के लिए रखा जाता है। इन वस्तुओं का आरोपित मूल्य को राष्ट्रीय आय में शामिल करते हैं। आरोपित मूल्य उन वस्तुओं का अनुमान मूल्य है जिसका उत्पादन होता है परन्तु बाजार में नहीं बेचा जाता है। दूसरे शब्दों में जहाँ बाजार मूल्य निर्धारित नहीं किया जा सकता, वहाँ अनुमानित मूल्य ले लिया जाता है जैसे यदि मकान मालिक स्वयं अपने मकान में रहता है तो मकान का किराया मूल्य बाजार मूल्य पर ही आकलन लिया जाता है।
- **हस्तान्तरण भुगतान (Transfer Payment):** हस्तान्तरण भुगतान के अन्तर्गत वे सब भुगतान आते है। जिनका उत्पादन क्रिया से कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं रहता और जिनको प्राप्त करने वाले बदले में कुछ नहीं देते है।
- **पूँजीगत लाभ (Capital gains):** बाजार की कीमतों में वृद्धि के परिणामस्वरुप परिसम्पत्तियों के मुद्रा मूल्य में हुई वृद्धि पूँजीगत लाभ कहलाती है।

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. आर्थिक कल्याण 2. धारणात्मक 3. बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (GDP_{MP})

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य

5.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- जैन, के.पी.; गुप्ता के.एल. (1906) ***"अर्थशास्त्र"***, नवयुग साहित्य सदन, आगरा ।
- जैन, टी.आर.; ओहरि, बी.के. (1912-13) ***"प्रारम्भिक समष्टि अर्थशास्त्र"***, के.के. ग्लोबल पब्लिकेशन्स प्रा.लि., नई दिल्ली।
- सिंघई, जी.सी.; मिश्रा, जे.पी. (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
- लाल, एस.के.; एस.एन (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, शिव पब्लिशिंग हाऊस, इलाहाबाद।
- सिन्हा, वी.सी. (1910-11) ***"अर्थशास्त्र"***, एस.पी.डी. पब्लिशिंग हाऊस, आगरा।
- सेठी, टी.टी. (1904-05) ***"समष्टि अर्थशास्त्र"***, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
- एन.सी.ई.आर.टी. (1907) ***"व्यष्टि अर्थशास्त्र: एक परिचय"*** एन.सी.ई.आर.टी., दिल्ली।
- अग्रवाल, एम. एन. (1907), ***"भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन"***, न्यू एज इण्टरनेशनल प्रा.लि., नई दिल्ली।

5.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), *Macroeconomics and the Real World* (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), *Macroeconomic Theory and Policy*, (3rd Edition), Harper and Row, New York

- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), ***Macroeconomic Analysis***, Galgotia Publications, New Delhi Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics, Theory and policy***, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley, G. (1978), ***Macroeconomics : Theory and Policy***, Macmillan, New York

5.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. राष्ट्रीय आय के माप की क्या-क्या विधियाँ है? इन विधियों में कौन सी कठिनाईयाँ होती हैं।
2. राष्ट्रीय आय की माप की विभिन्न विधियों की व्याख्या कीजिए।
3. राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित समुच्चय की व्याख्या कीजिए।

इकाई 6 प्रतिष्ठित सिद्धान्त
(Classical Theory)

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

6.2 उदेश्य (Objectives)

6.3 'से' का बाज़ार नियम (Say's Law of Market)

6.3.1 'से' के बाज़ार के नियम की व्याख्या (Explanation of Say's Law of Market)

6.3.2 'से' के बाज़ार के नियम का मौद्रिक अर्थ (Monetary Meaning of Say's Law of Market)

6.3.3 'से' के बाज़ार के नियम की मुख्य बातें (Key Points of Say's Law of Market)

6.3.4 'से' के बाज़ार के नियम की मान्यताएँ (Assumptions of Say's Law of Market)

6.4 रोजगार का प्रतिष्ठित सिद्धान्त (Classical Theory of Employment)

6.4.1 रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की मुख्य विशेषताओं की व्याख्या (Explanation of Key Features of Classical Theory of Employment)

6.4.2 रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की आलोचनाएं (Criticism of the Classical Theory of Employment)

6.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

6.6 सारांश (Summary)

6.7 शब्दावली (Glossary)

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

6.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

6.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

6.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

इस इकाई के अंतर्गत आप रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त के बारे में पढेंगे। जे. बी. से के सिद्धान्त और प्रतिष्ठित सिद्धान्त की विशेषताओं के बारे में भी इस इकाई में पढेंगे साथ ही प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के दृष्टिकोण को भी समझेंगे। रोजगार का सिद्धान्त उन सभी तत्वों की उचित व्याख्या करता है जिससे एक अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार अथवा 'साधनों का पूर्ण प्रयोग' (full utilization of resources) निर्धारित होता है।

एडम स्मिथ, जे. एस. मिल, जे. बी. से, रिकार्डो, मार्शल, पीगू अर्थशास्त्रियों को प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के नाम से जाना जाता है। इन्हीं प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के विचारों का सम्मिश्रण करने से रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त (Classical Theory of Employment) की रचना होती है।

6.2 उदेश्य (Objectives)

इस इकाई को पढने के बाद आप-

- ✓ जे. बी. से के बाज़ार नियम को समझ सकेंगे।
- ✓ यह भी समझेंगे कि जे. बी. से का बाज़ार नियम किन मान्यताओं पर आधारित हैं।
- ✓ प्रतिष्ठित सिद्धान्त से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ प्रतिष्ठित सिद्धान्त की विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।
- ✓ प्रतिष्ठित सिद्धान्त की कीन्स द्वारा की गई आलोचनाओं को भी समझ सकेंगे।

6.3 'से' का बाज़ार नियम (Say's Law of Market)

रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त को पढ़ने से पहले आपको **जे. बी. से (J. B. Say)** के नियम को समझना आवश्यक हैं। प्रसिद्ध फ्रेंच अर्थशास्त्री **जीन बैप्टिस्ट से (Jean Baptiste Say)** ने अपनी पुस्तक **'A Treatise on Political Economy (राजनीतिक अर्थव्यवस्था पर एक ग्रंथ)'** में बाजार सम्बन्धी एक संक्षिप्त नियम का प्रतिपादन किया था। इसे **'से' का बाजार नियम (Say's Law of Market)** कहा जाता है।

जे. बी. से ने यह धारणा व्यक्त कि थी की ***"पूर्ति स्वयं अपनी माँग का पैदा करती है" (Supply creates its own demand)*** जिसके कारण अर्थव्यवस्था में अत्यधिक उत्पादन और बेरोजगारी की समस्या पैदा नहीं होती है और यदि किसी कारणवश अत्यधिक उत्पादन उत्पादित होता भी हैं तो श्रमिकों को हटा दिया जाता है और अर्थव्यवस्था में माँग एवं पूर्ति एक दूसरे के समान हो जाते है जिससे संतुलन की अवस्था बनी रहती हैं।

'से' के शब्दों में, ***"उत्पादन ही वस्तुओं के लिए बाजार पैदा करता है। जिस क्षण से किसी वस्तु का उत्पादन होता है, वह अपने मूल्य की पूरी सीमा तक अन्य वस्तुओं के लिए एक बाजार बनाता है। किसी वस्तु की आपूर्ति उस वस्तु की माँग से अधिक नहीं होती है।"(It is production which creates market for goods. A product is no sooner created than it, from that instant, create a market for other products of the full extend of own value. Nothing is more favourable to the demand of a product than the supply of another.)***

संक्षेप में कहें तो 'से' के नियम के अनुसार देश में सामान्य अति-उत्पादन एवं सामान्य बेरोजगारी की स्थितियाँ उत्पन्न नहीं हो सकती क्योंकि जो कुछ भी उत्पादित होता है उसका उपभोग अवश्य होता है।

'से' के अनुसार-***"पूर्ति सदैव अपनी माँग का स्वयं सृजन करती है" (Supply always creates its own demand)*** तथा, ***"यह उत्पादन ही है जो वस्तुओं के बाजार का सृजन करता है" (It is production which creates market for goods)***

6.3.1 'से' के बाज़ार के नियम की व्याख्या (Explanation of Say's Law of Market)

उपरोक्त कथनों का तात्पर्य यह है कि बाज़ार स्वयं उत्पादन उत्पन्न करता है। उनके अनुसार माँग का मुख्य स्रोत उत्पादन के विभिन्न साधनों से प्राप्त आय है और यह आय उत्पादन की प्रक्रिया से स्वत: उत्पन्न होती है। जब भी उत्पादन की कोई नई प्रक्रिया शुरू की जाती है और परिणामस्वरूप कोई निश्चित उत्पाद उपलब्ध होता है तो उत्पादन के साथ-साथ माँग भी बढ़ जाती है जिसके परिणामस्वरूप उत्पादित सभी वस्तुएं स्वतः ही बिक जाती हैं। 'से' के अनुसार, ***"यह उत्पादन ही है जिसके द्वारा वस्तु के लिए बाजार उत्पन्न की जाती है" (It is production which creates market for goods.)***

6.3.2 'से' के बाज़ार के नियम का मौद्रिक अर्थ (Monetary Meaning of Say's Law of Market)

प्रणाली में गतिविधि को निम्नलिखित तरीके से व्यक्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए आप मान लीजिए कि प्रथम वर्ष में अर्थव्यवस्था में 50 करोड़ रुपए का उत्पादन होता है जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन के साधनों की आय में 50 करोड़ रुपये की वृद्धि होगी। वह 50 करोड़ रुपए की आय को कुछ इस प्रकार खर्च करेंगे की बाज़ार में कुल आपूर्ति बिक जाए। इस प्रकार कुल माँग में 50 करोड़ रुपए की वृद्धि होगी। अत: कुल पूर्ति अपनी माँग का स्वयं निर्माण कर लेगी। कुल माँग के कारण राष्ट्रीय आय फिर से उत्पादकों के पास पहुँच जाएगी जिससे वह दूसरे वर्ष फिर 50 करोड़ रुपये का उत्पादन कर सकेंगे। इस प्रकार यह चक्रीय प्रवाह जारी रहेगा और किसी भी प्रकार की सामान्य बेरोजगारी या अतिउत्पादन की कोई विश्वसनीयता नहीं रहेगी।

6.3.3 'से' के बाज़ार के नियम की मुख्य बातें (Key Points of Say's Law of Market)

1. अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार के स्तर पर संचालित होती है।
2. अर्थव्यवस्था में स्व-समायोजन की क्षमता होती है इसलिए अर्थव्यवस्था में जो कुछ भी उत्पादित होता है उसका उपभोग किया जाता है।
3. अति-उत्पादन असंभव है क्योंकि प्रत्येक अतिरिक्त उत्पादन समाज की बढ़ी हुई आय के माध्यम से अतिरिक्त क्रय शक्ति को जन्म देता है जिसके परिणामस्वरूप कुल आय, कुल व्यय के बराबर होती है।
4. अधिक उत्पादन असंभव है इसलिए 'सामान्य बेरोजगारी' भी संभव नहीं है।
5. ब्याज दर का लचीलापन अर्थव्यवस्था में हमेशा बचत और निवेश को एक सामान रखता है।
6. पूर्ण प्रतिस्पर्धा की स्थिति में वेतन में कटौती करके पूर्ण रोजगार स्थापित किया जा सकता है।
7. बेरोजगारी की स्थिति तभी उत्पन्न होती है जब मजदूरी दरों, ब्याज और अन्य कीमतों में अपरिवर्तनीयता या एकरूपता होती है या फिर सरकार और श्रमिक-संघ बाजार शक्तियों के स्वतंत्र कामकाज में हस्तक्षेप करते हैं।

6.3.4 'से' के बाज़ार के नियम की मान्यताएँ (Assumptions of Say's Law of Market)

'से' के सिद्धान्त की प्रमुख मान्यताएँ निम्नलिखित हैं:

1. **पूर्ण प्रगतियोगिता (Perfect Competition) -** श्रम बाजार तथा उत्पाद बाजार (Product Market) में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति पाई जाती है।
2. **पूर्ण रोजगार की प्रकृति (Nature of Full Employment) -** किसी भी मुक्त बाज़ार अर्थव्यवस्था में सदैव पूर्ण रोज़गार की स्थिति प्राप्त करने की प्रवृत्ति होती है अर्थात पूर्ण रोज़गार की सामान्य स्थिति पायी जाती है।
3. **हस्तक्षेप ना करने की नीति (Laissez-faire Policy) -** सरकार आर्थिक शक्तियों के कामकाज में कोई बाधा नहीं डालती।
4. **बंद अर्थव्यवस्था (Closed Economy) -** इस सिद्धान्त की एक मान्यता यह भी है कि अर्थव्यवस्था में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नहीं होगा।
5. **लोचशीलता (Flexibility) -** इस सिद्धान्त की एक अत्यंत महत्वपूर्ण धारणा यह है कि कीमतों, मजदूरी दरों और ब्याज दरों में लोच होती है जिसके परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था में स्वत: प्रेरित संतुलन (self induced balance) की स्थिति प्राप्त करना संभव हो जाता है।
6. **मुद्रा की सीमित भूमिका (Limited Role of Money) -** अर्थव्यवस्था में धन की एक सीमित भूमिका होती है अर्थात यह केवल विनिमय के माध्यम (medium of exchange) के रूप में कार्य करता है और अर्थव्यवस्था के वास्तविक संतुलन को प्रभावित नहीं करता है।
7. **संग्रह का अभाव (No Hoarding)-** 'से' के नियम की एक और धारणा यह है कि सम्पूर्ण आय स्वचालित रूप से उपभोग और निवेश पर खर्च हो जाती है और अर्थव्यवस्था में धन का संचय नहीं होता है।
8. **बाज़ार का विस्तृत विस्तार (Wide Extent of Market) -** अर्थव्यवस्था में बाजार के विस्तार होने की सम्भावना हो सकती है।
9. **दीर्घकाल (Long run) -** 'से' का नियम दीर्घकालीन पूर्ण रोजगार की धारणा पर आधारित है। अल्पकाल में किसी विशेष वस्तु का अधिक उत्पादन संभव हो सकता है जोकि दीर्घकाल में स्वत: ही समाप्त हो जाता है।

6.4 रोजगार का प्रतिष्ठित सिद्धान्त (Classical Theory of Employment)

लॉर्ड कीन्स (Keynes), एडम स्मिथ (Adam Smith), रिकार्डो (Ricardo), जे. बी. से (J. B. Say), मार्शल (Marshall) व पीगू (Pigou) आदि के रोजगार सम्बंधित विचारों के लिए प्रतिष्ठित सिद्धान्त शब्द का उपयोग किया है।

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों की मान्यता यह है कि 'पूर्ण रोजगार' की दशा एक साधारण या सामान्य दशा है। उसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन असाधारण दशा का सूचक है। यदि कभी किसी समय रोजगार, पूर्ण रोजगार स्थिति से कम होता भी है तो उनके विचार के अनुसार इसके लिए सरकारी हस्तक्षेप अथवा सरकारी एकाधिकार या ऐसे ही अन्य कारण दोषी होते है जोकि माँग और पूर्ति के स्वतन्त्र क्रियान्वयन में बाधा पैदा कर देते हैं। इन अर्थशास्त्रियों का विचार यह था कि यदि माँग एवं पूर्ति की शक्तियों को स्वतन्त्र छोड़ दिया जाए तो पूर्ण रोजगार की स्थिति की स्थापना स्वत: ही हो जाएगी। इसी आधार पर प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का मत यह था कि श्रम व अन्य साधनों के पूर्ण रोजगार प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि सरकार आर्थिक क्षेत्र में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप ना करे। यदि किसी समय पूर्ण रोजगार की कोई वास्तविक स्थिति नहीं है तो प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार पूर्ण रोजगार की प्रवृत्ति अंतत: एक समय के बाद अस्तित्व में रहेगी।

इस प्रकार प्रख्यात अर्थशास्त्रियों ने पूर्ण रोजगार के सामान्य सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है और एक प्रतिमान या मॉडल बनाया है जिसमें आय का संतुलन स्तर पूर्ण रोजगार के स्तर पर रहता है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का यह दृष्टिकोण मुख्यत: तीन बातों पर आधारित है- ***प्रथम***, पूर्ण रोजगार स्तर पर श्रम बाजार

(Labor Market) में सन्तुलन की स्थिति तब होती है जब पूर्ण रोजगार स्तर पर श्रम की माँग (Demand of labour) श्रम की पूर्ति (Supply of labour) के बराबर होती हैं। ***द्वितीय***, ना केवल श्रम बाजार सन्तुलन की स्थिति में होता है बल्कि उसके द्वारा उत्पादित सम्पूर्ण वस्तुएं बिक भी जाती है अर्थात् अर्थव्यवस्था में उत्पादित वस्तु की माँग उसकी पूर्ति के बराबर होनी चाहिए, ऐसा नहीं होने की स्थिति में या तो अति-उत्पादन होगा और ना ही अल्प-उत्पादन होगा। इस स्थिति में वस्तु बाजार (Product Market) सन्तुलन की स्थिति में होगा। ***तृतीय***, ब्याज-दर तंत्र (Interest rate mechanism) के लचीलेपन और स्वतंत्र कामकाज के कारण ही कुल निवेश, कुल बचत के बराबर होगा और परिणामस्वरूप पूंजी बाजार में संतुलन होगा।

इस प्रकार प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार एक अर्थव्यवस्था में तीन प्रकार के बाजार होते है, ***पहला*** श्रम बाजार, ***दूसरा*** वस्तु बाजार और ***तीसरा*** पूँजी बाजार। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का यह दृढ़ विश्वास था कि माँग व पूर्ति की शक्तियाँ इन तीनों प्रकार के बाजारों में पूर्ण रोजगार को स्थापित करती है।

6.4.1 रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की मुख्य विशेषताओं की व्याख्या (Explanation of Key Features of Classical Theory of Employment)

आप रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त के बारे में जान चुके हैं लेकिन रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं भी हैं जिनके बारे में जानना आपके लिए आवश्यक हैं। रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

1. रोजगार का स्थापित सिद्धान्त पूर्ण प्रतियोगिता के सिद्धान्त पर आधारित है। यह सिद्धान्त यह भी मानता है कि अर्थव्यवस्था प्रकृति में पूंजीवादी है जोकि सरकारी हस्तक्षेप से मुक्त है।
2. यह सिद्धान्त मानता है कि श्रम और उत्पादन के अन्य साधन पूरी तरह से नियोजित हैं। यह इस बात को मानता है कि बेरोजगारी की स्थिति अस्थायी (temporarily) रूप से उत्पन्न हो सकती है परन्तु दीर्घकाल में आर्थिक शक्तियों के स्वत: समायोजन प्रक्रिया के फलस्वरूप पूर्ण रोजगार स्थापित हो जाता है अथवा अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार स्थापित करने की प्रवृत्ति सदैव विद्यमान रहती है। इस सिद्धान्त के अनुसार पूर्ण रोजगार की स्थिति एक सामान्य अवस्था (normal situation) है। वास्तव में, यह सिद्धान्त पूर्ण रोजगार के निर्धारकों की स्पष्ट व्याख्या नहीं करता है बल्कि यह दी गई पूर्ण रोजगार की स्थिति को स्वीकार करता है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के इस विश्वास के आधार तथा कारणों की व्याख्या की हैं।
3. प्रतिष्ठित फ्रेंच अर्थशास्त्री जे. बी. से (1767-1832) द्वारा प्रतिपादित 'से' का बाज़ार नियम के आधार पर वह पूर्ण रोजगार की मान्यता को उचित ठहराते है। चूंकि यह नियम **'से' (Say)** ने बनाया हैं अत: इसे 'से के बाजार नियम' (Say's Law of Market) के नाम से जाना जाता है। यह नियम रोजगार के स्थापित सिद्धान्त का सार या आधार (Core and foundation) है। यह नियम हर एक अर्थव्यवस्था में लागू होता हैं, चाहे वो वस्तु-विनिमय प्रणाली (Barter System) हो या फिर 'मुद्रा-प्रयोग' करने वाली अर्थव्यवस्था (Money using Economy), दोनों में ही यह नियम लागू होता है।

   'से के नियम' का कथन इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है की ***"पूर्ति स्वयं अपनी माँग का पैदा करती है" (Supply creates its own demand)*** **जे. बी. से** के शब्दों में, ***यह उत्पादन ही है जो वस्तुओं के बाजार का सृजन करता है" (It is production which creates market for goods)*** इन सबका अर्थ यह है कि एक वस्तु का उत्पादन अथवा उसकी पूर्ति किसी अन्य वस्तु या वस्तुओं के लिए भी माँग उत्पन्न कर देती है। अब आप वस्तु-विनिमय अर्थव्यवस्था एवं मुद्रा-प्रयोग अर्थव्यवस्था दोनों में ही इस नियम को समझेंगे।

वस्तु विनिमय अर्थव्यवस्था में, एक व्यक्ति ना केवल अपने लिए वस्तु का उत्पादन करता है बल्कि वह विनिमय के लिए भी उस वस्तु का उत्पादन करता है। अत: किसी वस्तु का उत्पादन या आपूर्ति ना केवल एक वस्तु की आपूर्ति को इंगित करती है बल्कि किसी अन्य वस्तु की माँग की उपस्थिति को भी इंगित करती है। इस प्रकार वस्तु विनिमय अर्थव्यवस्था में पूर्ति स्वयं अपनी माँग को उत्पन्न करती है।

मुद्रा का प्रयोग करने वाली अर्थव्यवस्था (Money using Economy), में भी इसी प्रकार की स्थिति होती है। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में मुद्रा केवल 'विनिमय के माध्यम' (medium of exchange) के रूप में प्रयोग होकर वस्तुओं के विनिमय की प्रक्रिया को सुविधापूर्वक बना देती हैं। इस प्रकार मुद्रा स्वतंत्र रूप से कोई सक्रिय भूमिका नहीं निभाती है। जब किसी नई वस्तु का उत्पादन शुरू होता है तो कुछ संसाधनों को नियोजित किया जाता है और उन्हें मजदूरी या वेतन, ब्याज या मुनाफे के रूप में धन आय (Money income) प्राप्त होती है। इन साधनों के स्वामी इस प्राप्त हुई आय को इसी वस्तु या किसी अन्य वस्तु अथवा कई वस्तुओं को खरीदने में प्रयोग करते है। दूसरे शब्दों में, माँग उत्पन्न होने का मुख्य कारण साधनों को प्राप्त हुई आय ही है। **ए. एच. हैन्सन (A. H. Hansen)** के शब्दों में, ***"एक नई उत्पादन प्रक्रिया के प्रारम्भ होने पर साधनों की आय प्राप्त होती है जो तुरन्त ही माँग के चक्र को चला देती है तथा पूर्ति में वृद्धि के साथ-साथ बढ़ती जाती है।"*** इस प्रकार मुद्रा-प्रयोग अर्थव्यवस्था में उत्पादन अथवा पूर्ति की प्रत्येक क्रिया अपनी माँग स्वयं उत्पन्न करती है और 'से का नियम' यहाँ भी लागू होता हैं।

आपूर्ति ना केवल माँग उत्पन्न करती है बल्कि यह उसकी कीमत के बराबर माँग उत्पन्न करती है। दूसरे शब्दों में, अर्थव्यवस्था में वस्तुओं की कुल आपूर्ति वस्तुओं की कुल माँग के बिल्कुल बराबर होगी। अत: किसी भी अर्थव्यवस्था में माँग, पूर्ति की अपेक्षा कभी कम नहीं हो सकती और सामान्य अति-उत्पादन (general over-production) की स्थिति भी नहीं हो सकती। इसलिए 'से' नियम के अनुसार बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न नहीं हो सकती है।

4. पीगू का दृष्टिकोण (Pigou's Version) इस बारे में यह है कि पूर्ण रोजगार की स्थिति, मौद्रिक मजदूरी की परिवर्तनशीलता या लोच से निर्धारित होती है। यदि किसी विशेष समय पर उत्पादन कुल आपूर्ति से कम भी हो जाए तो ऐसी स्थिति में श्रमिक बेरोजगार हो जाएगा लेकिन यह केवल एक अस्थायी स्थिति (temporary situation) होगी। यदि मौद्रिक मजदूरी प्रभावी या पूर्णतया लोचदार (perfectly elastic) है तो बेरोजगारी की स्थिति जल्द ही गायब हो जाएगी। यदि यह मान लिया जाए कि कुछ श्रमिक बेरोजगार हैं तो इसका मतलब यह है कि प्रचलित मजदूरी दरें केवल उन्हीं तक सीमित हैं जिनकी माँग अधिक है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार, प्रचलित मजदूरी और सरकार की अहस्तक्षेप नीति के कारण मौद्रिक मजदूरी तेजी से घटती है और कम मजदूरी के कारण श्रम की माँग बढ़ जाती है और कुछ बेरोजगार श्रमिकों को रोजगार मिल जाता है। यह मजदूरी की दर तब तक गिरती रहेगी जब तक सभी श्रमिकों को रोजगार नहीं मिल जाता है अर्थात् अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति फिर से प्राप्त नहीं हो जाती।

कुछ श्रमिक इस प्रचलित कम मजदूरी दर पर कार्य करने को तैयार नहीं होते हैं, इस स्थिति में 'स्वेच्छापूर्ण बेरोजगारी' (voluntary unemployment) होगी, किन्तु इसे अनिच्छापूर्ण बेरोजगारी (involuntary unemployment) नहीं कहा जा सकता क्योंकि चाहे मजदूरी दर कम हैं परन्तु सभी श्रमिकों को रोजगार प्राप्त हो सकता है। एक रोजगार से दूसरे रोजगार में जाने के फलस्वरूप अस्थायी रूप से उत्पन्न होने वाली कुछ 'घर्षणात्मक

बेरोजगारी' (frictional unemployment) का अर्थव्यवस्था में पाया जाना सम्भव है क्योंकि तुरंत मजदूरी मिलना मुश्किल है और एक साथ समायोजन (adjustment) नहीं हो पाता। दूसरे शब्दों में, मजदूरी को समायोजित या सुसंगत होने में कुछ समय लग सकता है परन्तु दीर्घकाल में घर्षणात्मक बेरोजगारी मौजूद नहीं रह सकती क्योंकि मजदूरी समायोजित हो जाती है, यानी मजदूरी दर गिर जाती है और सभी बेरोजगार श्रमिकों को कम मजदूरी दर पर रोजगार मिल जाता है। इसी प्रकार तकनीकी कारणों (technical reasons) जैसे, मशीनों का समायोजन तथा उनकी मरम्मतएवं तकनीक में सुधार, के परिणामस्वरूप श्रमिकों को एक मशीन से दूसरी मशीन पर हस्तान्तरित (transfer) किया जा सकता है, जिसके कारण 'तकनीकी बेरोजगारी' (technological unemployment) भी अल्पकाल में हो सकती है परन्तु दीर्घकाल में यह भी गायब हो जाती है। इस प्रकार, भले ही अर्थव्यवस्था में कुछ स्वैच्छिक, घर्षणात्मक और तकनीकी बेरोजगारी मौजूद हो परन्तु इसे पूर्ण रोजगार की स्थिति ही कहा जाएगा।

बचत (savings) भी खर्च का एक रूप है, दूसरे शब्दों में, बचत स्वचालित (automatically) रूप से निवेश वस्तुओं या पूंजीगत वस्तुओं जैसे मशीनों, उपकरणों आदि पर खर्च की जाती है। इस प्रकार, बचत भी व्यय का ही रूप होती हैं अथवा बचत, निवेश (investment) के बराबर होगी। इस प्रकार, सम्पूर्ण आय आंशिक रूप से उपभोग वस्तुओं पर और आंशिक रूप से निवेश वस्तुओं पर खर्च की जाती है। अत: आय के प्रवाह में कोई रिसाव (leakage) नहीं होता है और कुल आपूर्ति हमेशा कुल योग के बराबर होती है। यानी माँग में कोई कमी नहीं होती है इसलिए बेरोजगारी की स्थिति भी उत्पन्न नहीं होती है। 'से' के शब्दों में, आपूर्ति अपनी माँग स्वयं बनाती है (supply creates its own demand).

5. ब्याज-दर की लोचशीलता (Flexibility of interest rate) होती हैं। ब्याज दर (interest rate) बचत और निवेश के बीच समानता लाती है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने माना कि अर्थव्यवस्था में यह भी संभव है कि बचत और निवेश बराबर ना हो, यानी बचत और निवेश के बीच असंतुलन हो सकता है। परन्तु प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का कहना यह था की यदि बचत तथा निवेश में अस्थायी अन्तर या असन्तुलन है भी तो वह ब्याज की दर के माध्यम से समाप्त हो जाएगा।

   यहाँ केवल दो ही संभावित स्थितियाँ हो सकती हैं या तो बचत में वृद्धि, निवेश से अधिक हो, या निवेश बचत से अधिक। यदि किसी भी समय बचत, निवेश से अधिक हो जाती है तो बचत के अधिशेष (surplus) के कारण ब्याज-दर गिर जाएगी। ब्याज-दर में गिरावट से बचत की माँग बढ़ेगी और बचत की माँग बढ़ने की प्रकिया तब तक चलेगी जब तक कि बचत और निवेश बराबर नहीं हो जाते। इसी प्रकार यदि किसी समय बचत, निवेश से कम हो जाती है तो बचत की इस कमी से ब्याज की दर में वृद्धि होगी और इसके परिणामस्वरूप बचत की पूर्ति में वृद्धि होगी और यह वृद्धि तब तक होगी जब तक कि बचत, निवेश के बराबर ना आ जाए।

6. केवल वस्तुओं की कीमत में गिरावट की लोच ही पूर्ण रोजगार की स्थिति को बनाए रखती हैं। (only The Elasticity of Fall in price of commodities will maintain full employment)- किसी विशेष उद्योग में किसी विशेष वस्तु के संबंध में अति-उत्पादन की स्थिति हो सकती है हालाँकि यह स्थिति एक अस्थायी स्थिति (temporarily situation) होगी। इसे अस्थायी स्थिति इसलिए कहा गया हैं क्योंकि अति-उत्पादन होने से उस वस्तु विशेष की कीमत में गिरावट आएगी जिससे उसकी माँग बढ़ जाएगी ऐसा होने से वस्तु की

संपूर्ण आपूर्ति बिक जाएगी। अत: इस विशेष उद्योग में अति-उत्पादन (और इसलिए बेरोजगारी) समाप्त हो जाएगी।

7. रोजगार के प्रतिष्ठित सिधन्त के नीतिगत अभिप्राय (Policy Implications of Classical Theory of Employment)- बेरोजगारी की स्थिति तभी उत्पन्न होती है जब मजदूरी दरों, ब्याज और अन्य कीमतों में कठोरता (rigidity) या अनम्यता (inflexibility) होती है और जब बाजार शक्तियों के स्वतंत्र कामकाज में सरकार और श्रमिक संघों द्वारा हस्तक्षेप होता है। किसी अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति तभी हो सकती है जब अर्थव्यवस्था में पूर्ण प्रतियोगिता हो और साथ ही मजदूरी, ब्याज और अन्य कीमतों में परिवर्तन या लोच या फिर किसी प्रकार का हस्तक्षेप ना हो। दूसरे शब्दों में, ऐसी अहस्तक्षेप अर्थव्यवस्था (laissez-faire economy) हो जिसमें बाजार की शक्तियां बिना किसी बाधा के स्वतन्त्र रूप से कार्य करने में सक्षम हो। अत: आर्थिक शक्तियों के स्वत: समायोजन (automatic adjustment) से पूर्ण रोजगार की स्थिति बनी रहेगी।

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार पूर्ण रोजगार एक सामान्य स्थिति है। पूर्ण रोजगार की स्थिति 'से का बाजार नियम' एवं साथ ही मजदूरी, ब्याज और अन्य कीमतों में परिवर्तनों या लोचशीलता के कारण स्थापित होती है। दूसरे शब्दों में, बाज़ार में कीमतों में अपरिवर्तनशीलता (rigidity) से ही बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न होती है।

6.4.2 रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की आलोचनाएं (Criticism of the Classical Theory of Employment)

रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की **प्रो. जे. एम. कीन्स (Prof. J. M. Keynes)** ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **'जनरल थ्योरी' (General Theory)** में आलोचना बहुत प्रकार से की है जिसमें से कुछ मुख्य आलोचनाए नीचे दी हुई हैं-

1. प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो द्वारा दिया हुआ रोजगार का प्रतिष्ठित सिद्धान्त पूर्ण प्रतियोगिता की अवास्तविक धारणा पर आधारित है लेकिन वास्तव में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति पाई ही जाती हैं, बल्कि बाज़ार में अपूर्ण प्रतियोगिता पाई जाती है।
2. कीन्स ने 'से के बाजार नियम' में कार्य-प्रणाली की भी आलोचना की हैं। कीन्स का यह मानना था कि उत्पादन की प्रक्रिया में, उत्पादन के साधनों के मालिक आय अर्जित करते हैं परन्तु यह आवश्यक नहीं है की वह इस आय को उत्पादित वस्तुओं को खरीदने में पूरी तरह से खर्च करें, ऐसा भी हो सकता हैं की वह प्राप्त की गई आय का एक हिस्सा बचा ले। अत: बचत, कुल आय में से एक रिसाव (leakage) है और इससे माँग में कमी आती है जिसके परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था में अति-उत्पादन और साथ ही बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न होती है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का यह मानना की बचत स्वयं ही निवेश में परिवर्तित (automatically invest) हो जाती है पूर्णतया गलत हैं।

   कीन्स का कहना था की यह आवश्यक नहीं हैं की बचत और निवेश बराबर हो इनमे अन्तर या असन्तुलन की स्थिति भी हो सकती हैं जिसके दो कारण हो सकते हैं। ***पहला***, अर्थव्यवस्था में बचत और निवेश व्यक्तिगत व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों द्वारा किया जाता है। ***दूसरा***, बचतकर्ताओं और निवेशकर्ताओं के अलग-अलग उद्देश्य होते हैं एवं बचत और निवेश के निर्धारक तत्व भी भिन्न होते हैं। बचतकर्ता बच्चों की शिक्षा, विवाह, बीमारी या वृद्धावस्था के प्रबन्ध के कारण बचत करते हैं। आय के स्तर से बचत निर्धारित होती है। इसके विपरीत, उद्यमियों द्वारा निवेश लाभ की अपेक्षित दर (expected rate of profit) यानी पूंजी की

सीमांत दक्षता (marginal efficiency of capital) और ब्याज दर पर और लंबे समय में तकनीकी कारणों, जनसंख्या की वृद्धि आदि पर निर्भर करता है।

3. ब्याज दर की लोच, निवेश और बचत के बीच समानता स्थापित नहीं करती है। कीन्स के अनुसार आय के स्तर में परिवर्तन के कारण निवेश तथा बचत में समानता आती है ना कि ब्याज दर में परिवर्तन के कारण। कीन्स का मानना था कि बचत मुख्य रूप से आय के स्तर पर निर्भर करती है और अल्पावधि में, निवेश, मुख्य रूप से लाभ की अपेक्षित दर (expected rate of profit) यानी पूंजी की सीमांत दक्षता (marginal efficiency of capital) पर निर्भर करता है। यदि व्यापारिक वर्ग (business cycle) में लाभ की प्रत्याशित दर कम है तो केवल यह ब्याज की कम दर से निवेश की मात्रा में वृद्धि नहीं हो सकती। साथ ही यदि किसी अर्थव्यवस्था में किसी कारण से बचत निवेश से अधिक है तो इसका यह अर्थ है कि अर्थव्यवस्था में व्यक्तियों का उपभोग व्यय (consumption expenditure) कम है। अतः ऐसा होने से कुल माँग घटती है जिसके परिणामस्वरूप निवेश, उत्पादन और आय तीनों भी घट जाते है। आय में कमी होने से बचत भी घट जाएगी और बचत तब तक घटती रहेगी जब तक बचत निवेश के समान ना आ जाए। आपको यहाँ ध्यान रखना है कि यह समानता आय के निचले स्तर पर होगी। अतः कीन्स के अनुसार आय के स्तर में परिवर्तनशीलता के कारण ही बचत तथा निवेश में समानता आती है, ना की ब्याज की दर में परिवर्तनशीलता के कारण।
4. कीन्स के अनुसार पीगू का यह मानना कि मजदूरी में सामान्य कटौती से रोजगार का स्तर बढ़ता है तब तक उचित नहीं है जब तक कि पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त ना हो जाए। इस सन्दर्भ में कीन्स ने निम्न तर्क दिए हैं कि अगर उत्पादक द्वारा मजदूरी में सामान्य कमी (general reduction) की जाए तो इससे उत्पादन लागत कम हो जाएगी, जिससे श्रमिक वर्ग की अतिरिक्त आय में कमी आएगी। अत: आय में कमी होने से अर्थव्यवस्था में कुल माँग में भी कमी आएगी, जिससे अंत में रोजगार का स्तर भी घट जाएगा। अत: इस प्रकार किसी भी अर्थव्यवस्था में, पूर्ण रोजगार मजदूरी में सामान्य कटौती द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता बल्कि ऐसा करने से बेरोजगारी और बढ़ेगी एवं वर्तमान में अब बहुत से प्रभावशाली श्रमिक संघ (trade union) मौजूद हैं जो मजदूरी में कटौती को स्वीकार नहीं करेंगे और ना ही कटौती होने देंगे। इसके साथ ही सरकार का हस्तक्षेप (intervention) भी अर्थव्यवस्था में सभी जगह होता हैं। अत: सैद्धान्तिक रूप से मजदूरी-कटौती नीति (wage cut policy) कमजोर हैं एवं यह वास्तविक जीवन में भी असंभव है।
5. कीन्स का कहना था कि प्रतिष्ठित सिद्धान्त रोजगार के स्तर को निर्धारित करने वाले तथ्यों की व्याख्या नहीं करता बल्कि यह सिद्धान्त पूर्ण रोजगार को पहले से दी हुई एक स्थिति एवं सामान्य अवस्था मानकर चलता है। प्रतिष्ठित सिद्धान्त केवल पूर्ण रोजगार की स्थिति में केवल उन तथ्यो की व्याख्या करता है जिनमें अस्थायी विचलन (temporary deviations) देखने को मिलते हैं। यह उन तरीकों की बात करता हैं जो अस्थायी विचलनों के बाद, पूर्ण रोजगार की सामान्य स्थिति को पुन: स्थापित करते हैं।
6. प्रतिष्ठित सिद्धान्त ने केवल दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य लिया और अल्पकालिक परिप्रेक्ष्य को नजर अंदाज कर दिया। (Classical theory only adopted the long-term viewpoint and neglected short term) परन्तु कीन्स ने अल्पकालीन विश्लेषण पर विशेष जोर दिया, इसका कारण 1930 के दशक की महामंदी है जिसमें कीन्स को दुखद अनुभव झेलना पड़ा। कीन्स के अनुसार, हमें अल्पकालिक विश्लेषण को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए जैसा कि प्रतिष्ठित

अर्थशास्त्रियों ने किया। अल्पकालिक विश्लेषण ही महत्वपूर्ण है क्योंकि दीर्घावधि में हम सभी मर जायेंगे।

7. जैसा कि प्रख्यात अर्थशास्त्रियों का मानना था, अर्थव्यवस्था पूरी तरह से स्व-समायोजित नहीं है। (Economic system is not fully self-adjusting as considered by classical economist) कीन्स का मानना यह था की कोई भी अर्थव्यवस्था पूरी तरह से स्व-समायोजित नहीं होती हैं। अत: किसी भी अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति को स्थापित करने अथवा उसे बनाए रखने के लिए सरकारी हस्तक्षेप (government intervention) आवश्यक है। पूर्ण रोजगार को स्थापित करने के लिए अथवा उसे बनाए रखने के लिए निवेश की बहुत बड़ी भूमिका होती हैं। कोई भी निजी निवेशक इतना निवेश नहीं कर पाता की वह सम्पूर्ण देश में पूर्ण रोजगार को स्थापित कर सके। यह काम केवल सरकार ही कर सकती हैं, सरकार या तो आर्थिक गतिविधियों को तेज़ करने के लिए सीधे निवेश करती है या निजी क्षेत्र में निवेश की कमी की भरपाई के लिए काम करती है। कीन्स ने आय एवं रोजगार के स्तर को बनाए रखने एवं स्थिर रखने में सरकार की भूमिका पर जोर दिया हैं। सरकार या तो राजकोषीय नीति (fiscal policy) या फिर मौद्रिक नीति (monetary policy) के द्वारा ही अर्थव्यवस्था में आय एवं रोजगार के स्तर को बरक़रार रखती हैं।

6.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. पूर्ति अपनी माँग स्वयं पैदा करती है, यह कथन ..... का है। (पीगू **या** जे. बी. से)
2. ..... 'से' के बाजार नियम की मान्यता नहीं है। (अल्पकाल **या** बंद अर्थव्यवस्था)
3. 'से' के बाजार नियम के प्रमुख प्रालोचक अर्थशास्त्री ..... है। (कीन्स **या** माल्थस)
4. मन्दीकाल में बेरोजगारी दूर करने के लिए पीगू मजदूरी को .....का परामर्श देते है। (बढ़ाने **या** घटाने)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. से' के बाजार नियम की क्रियाशीलता का एक कारण एक व्यक्ति का व्यय दूसरे व्यक्ति की आय है।
2. 'से' के बाजार नियम की क्रियाशीलता का एक कारण अलोचपूर्ण मजदूरी है।
3. से' के बाजार नियम की क्रियाशीलता का एक कारण लोचपूर्ण ब्याज की दर है।

6.6 सारांश (Summary)

इस इकाई के अंतर्गत आपने रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त को जाना जिसका प्रतिपादन लॉर्ड कीन्स (Keynes), एडम स्मिथ (Adam Smith), रिकार्डो (Ricardo), जे. बी. से (J. B. Say) मार्शल (Marshall) व पीगू (Pigou) आदि अर्थशास्त्रियो ने किया हैं। आपने इस इकाई में सबसे पहले जे. बी. से (J. B. Say) के बाज़ार नियम के बारे में पढ़ा और समझा की 'से' का बाज़ार नियम यह धारणा व्यक्त करता हैं की, 'पूर्ति स्वयं अपनी माँग का निर्माण करती है' जिसके कारण अर्थव्यवस्था में अत्यधिक उत्पादन और बेरोजगारी की समस्या पैदा नहीं होती। यदि किसी कारण अत्यधिक उत्पादन होता भी हैं तो श्रमिकों को हटा दिया जाता है और अर्थव्यवस्था में माँग एवं पूर्ति एक दूसरे के समान हो जाते है जिससे संतुलन की अवस्था बनी रहती हैं। 'से' के बाज़ार नियम की मुख्य बातों को भी आपने पढ़ा और साथ ही उसकी मान्यताओं के बारे में भी जाना जो की इस प्रकार हैं, पहली पूर्ण प्रगतियोगिता, दूसरी पूर्ण रोजगार की प्रकृति, तीसरी हस्ताक्षेप ना करने की नीति, चौथी बंद अर्थव्यवस्था, पाँचवी लोचशीलता, छठवी मुद्रा की सीमित भूमिका, सातवीं संग्रह का अभाव, आठवीं विस्तृत बाजार और नवी दीर्घकाल।

इकाई में आगे आपने रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त के बारे में पढ़ा जोकि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों की इस मान्यता पर आधारित हैं कि 'पूर्ण रोजगार' की दशा एक साधारण या सामान्य दशा है। उसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन असाधारण दशा का सूचक है। उनके अनुसार यदि रोजगार, पूर्ण रोजगार स्थिति से कम होता भी है तो इसके लिए सरकारी हस्तक्षेप अथवा सरकारी एकाधिकार या ऐसे ही अन्य कारण दोषी होते है जोकि माँग और पूर्ति की स्वतन्त्र कार्यप्रणाली में बाधा पैदा कर देते हैं। इसके बाद आगे इकाई में आपने यह समझा की प्रतिष्ठित सिद्धान्त एवं प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार एक अर्थव्यवस्था में तीन प्रकार के बाजार होते है, ***पहला*** श्रम बाजार, ***दूसरा*** वस्तु बाजार और ***तीसरा*** पूँजी बाजार। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का यह दृढ़ विश्वास था कि माँग व पूर्ति की शक्तियाँ इन तीनों प्रकार के बाजारों में पूर्ण रोजगार स्थापित करती है। इसके साथ ही आपने कीन्स द्वारा की गई रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की आलोचनाओं के बारे में विस्तार से पढ़ा जिसमे मुख्य आलोचनाए निम्न हैं, ***पहली*** पूर्ण प्रतियोगिता की अवास्तविक धारणा, ***दूसरी*** ब्याज दर की लोच निवेश और बचत के बीच समानता करती हैं, ***तीसरी*** सामान्य कटौती से रोजगार का स्तर बढ़ता है, ***चौथी*** प्रतिष्ठित सिद्धान्त केवल दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य और ***पाँचवी*** अर्थव्यवस्था स्व-समायोजित है।

6.7 शब्दावली (Glossary)

- **अहस्ताक्षेप नीति (Laissez-faire Policy) :** यह व्यक्तियों और समाज के आर्थिक मामलों में न्यूनतम सरकारी हस्तक्षेप की नीति है।
- **तकनीकी बेरोजगारी (technological unemployment) :** जब तकनीक बदलने से लोग अपनी नौकरी खो दे तो उसे तकनीकी बेरोजगारी कहते हैं।
- **पूर्णतया लोचदार (Perfectly Elastic) :** यदि किसी वस्तु की कीमत में थोड़े से परिवर्तन के कारण उसकी मांग या आपूर्ति में महत्वपूर्ण परिवर्तन होने की संभावना है तो उस वस्तु की मांग या आपूर्ति पूर्णतया लोचदार कहलाती है।
- **बंद अर्थव्यवस्था (Closed Economy) :** एक बंद अर्थव्यवस्था एक ऐसा देश है जो अन्य देशों के साथ व्यापार नहीं करता है और इसके बजाय आत्मनिर्भर होने का लक्ष्य रखता है और अपने नागरिकों को अपनी सीमाओं के भीतर से उनकी ज़रूरत की हर चीज़ उपलब्ध कराता है। ।

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. जे. बी. से 2. अल्पकाल 3. कीन्स 4. घटाने

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य

6.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- जैन, के.पी.; गुप्ता के.एल. (1906) ***"अर्थशास्त्र"***, नवयुग साहित्य सदन, आगरा ।
- जैन, टी.आर.; ओहरि, बी.के. (1912-13) ***"प्रारम्भिक समष्टि अर्थशास्त्र"***, के.के. ग्लोबल पब्लिकेशन्स प्रा.लि., नई दिल्ली।
- सिंघई, जी.सी.; मिश्रा, जे.पी. (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
- लाल, एस.के.; एस.एन (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, शिव पब्लिशिंग हाऊस, इलाहाबाद।
- सिन्हा, वी.सी. (1910-11) ***"अर्थशास्त्र"***, एस.पी.डी. पब्लिशिंग हाऊस, आगरा।

- सेठी, टी.टी. (1904-05) ***"समष्टि अर्थशास्त्र"***, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
- एन.सी.ई.आर.टी. (1907) ***"व्यष्टि अर्थशास्त्र: एक परिचय"*** एन.सी.ई.आर.टी., दिल्ली।
- अग्रवाल, एम.एन. (1907), ***"भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन"***, न्यू एज इण्टरनेशनल प्रा.लि., नई दिल्ली।

6.10 उपयोगी पाठ्य पुस्तक (Helpful Text)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), ***Macroeconomic Analysis***, Galgotia Publications, New Delhi Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics, Theory and policy***, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley, G. (1978), ***Macroeconomics : Theory and Policy***, Macmillan, New York

6.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. 'से' के नियम से क्या अभिप्राय है? 'से' के बाज़ार नियम की मान्यताओं की व्याख्या कीजिए।
2. रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए। कीन्स ने इसकी आलोचना किन आधारों पर की थी?
3. रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की आलोचना कीजिए।

इकाई 7 केन्सीयन सिद्धान्त
(Keynesian Theory)

7.1 प्रस्तावना (Introduction)
7.2 उद्देश्य (Objectives)
7.3 केन्सीयन आय एवं रोजगार सिद्धान्त (Keynesian Theory of Income and Employment)
7.4 समग्र माँग की अवधारणा (The Concept of Aggregate Demand)
7.4.1 समग्र माँग के घटक (Components of Aggregate Demand)
7.5 समग्र आपूर्ति की अवधारणा (The Concept of Aggregate Supply)
7.6 कीन्स के सिद्धान्त में आय एवं रोजगार के संतुलन स्तर का निर्धारण (Determination of Equilibrium Level of Income and Employment in Keynes' Theory)
7.7 कीन्स के सिद्धान्त का महत्व (Importance of Keynes' Theory)
7.8 कीन्स के रोजगार सिद्धान्त का आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation of Keynes' Employment Theory)
7.9 प्रतिष्ठित तथा केन्सियन सिद्धान्त की तुलना (Comparison of Classical and Keynesian Theory)
7.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
7.11 सारांश (Summary)
7.12 शब्दावली (Glossary)
7.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
7.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
7.15 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
7.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पहले की इकाई में आपने जे.बी. से के सिद्धान्त के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत इकाई में आप कीन्स के सिद्धान्त के बारे में जानेंगे। अर्थव्यवस्था में आय निर्धारण को समझाने के लिए कीन्स ने आय निर्धारण सिद्धान्त दिया हैं जिसे आप समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति के द्वारा समझेगे। कीन्स ने आय निर्धारण सिद्धान्त को चित्र एवं समीकरण की सहायता से विस्तार से पढेंगे और समझेंगे की अर्थव्यवस्था में अलग-अलग स्तर पर आय निर्धारण किस प्रकार किया जाता हैं। इकाई में आप कीन्स के सिद्धान्त का प्रतिष्ठित सिद्धान्त के साथ तुलनात्मक अध्ययन के साथ उसका आलोचनात्मक अध्ययन करेंगे।

7.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- ✓ समग्र माँग की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- ✓ समग्र माँग के घटकों को जान सकेंगे।
- ✓ समग्र आपूर्ति की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- ✓ कीन्स के सिद्धान्त में आय एवं रोजगार के संतुलन स्तर का निर्धारण किस तरह होता हैं इसे चित्र एवं समीकरण की सहायता से समझ सकेंगे।
- ✓ प्रतिष्ठित तथा केन्सियन सिद्धान्त की तुलना कर सकेंगे।

7.3 केन्सीयन आय एवं रोजगार सिद्धान्त (Keynesian Theory of Income and Employment)

जॉन मेनार्ड कीन्स (John Manyard Keynes) की सुप्रसिद्ध पुस्तक **'The General Theory of Employment, Interest and Money'** वर्ष 1936 में प्रकाशित हुई। इस पुस्तक ने अर्थशास्त्र के अध्ययन को नई दिशा प्रदान की जिससे इस पुस्तक को **केन्सीयन क्रान्ति (Keynesian Revolution)** के नाम से भी जाना जाता है। इस पुस्तक में कीन्स ने आय तथा रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धान्त की कटु आलोचना की और इस संबंध में एक नया सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

कीन्स के अनुसार समग्र माँग सदैव समग्र आपूर्ति के बराबर नहीं होती। समग्र माँग समग्र आपूर्ति से अधिक भी हो सकती है और कम भी हो सकती है। समग्र माँग जब समग्र आपूर्ति की तुलना में कम होती है तो ऐसी स्थिति में अति-उत्पादन तथा बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होती है और कीमतों में कमी आ जाती है। वहीं जब दूसरी ओर समग्र माँग, समग्र आपूर्ति से अधिक होती है तो अर्थव्यवस्था में मुद्रा स्फीति (Inflation) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कीन्स ने प्रतिष्ठित सिद्धान्त के आधार **'से के बाजार नियम'** को चुनौती दी। कीन्स के अनुसार, यह पूर्ति नहीं जो माँग उत्पन्न करती है बल्कि यह माँग है जो पूर्ति को उत्पन्न करती है। (It is not supply which creates demand, but it is demand which creates supply.)। वे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों की इस विचारधारा से सहमत नहीं थे कि समग्र माँग व समग्र आपूर्ति तथा बचत व निवेश सदैव पूर्ण रोजगार स्तर पर समान होते हैं। उन्होंने अपने सिद्धान्त में बताया कि सामान्यत: अर्थव्यवस्था में अल्प-रोजगार की स्थिति पाई जाती है। अर्थात् अर्थव्यवस्था में समग्र माँग, पूर्ण रोजगार स्तर के लिए आवश्यक माँग से कम रहती है और एक पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार स्तर से पूर्व संतुलन में बने रहने की प्रवृत्ति होती है, जिसको उन्होंने अल्प-रोजगार संतुलन (Under-Employment Equilibrium) कहा।

कीन्स के अनुसार, आय एवं रोजगार का संतुलन स्तर उस बिन्दु पर होता है जहाँ पर समग्र माँग (Aggregate Demand-AD) तथा समग्र आपूर्ति (Aggregate Supply-AS) एक-दूसरे के बराबर होते हैं परन्तु अर्थव्यवस्था में ऐसा कोई स्वचालित यंत्र नहीं है जोकि समग्र माँग (AD) तथा समग्र आपूर्ति (AS) इन दोनों में स्वत: ही समानता उत्पन्न कर दे। समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति और साथ ही बचत और निवेश में समानता स्थापित करने के लिए सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। कीन्स के सिद्धान्त में यह बात उल्लेखनीय है कि समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति में संतुलन अनिवार्य रूप सें पूर्ण रोजगार स्तर पर स्थापित नहीं होगा। उनके अनुसार संतुलन की निम्नलिखित तीन अवस्थाएँ हो सकती हैं। जोकि इस प्रकार है-

1. **पूर्ण रोजगार संतुलन (Full Employment Equilibrium)** - जहाँ पूर्ण रोजगार स्तर पर समग्र माँग तथा समग्र आपूर्ति बराबर होती है।
2. **अपूर्ण रोजगार संतुलन (Under-Employment Equilibrium)** - जहाँ पूर्ण रोजगार स्तर से पहले ही समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति बराबर होती है।
3. **अति पूर्ण-रोजगार संतुलन (Over Employment Equilibrium)** - यह वह अवस्था है, जब पूर्ण रोजगार के स्तर के बाद में समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति बराबर होती है।

कीन्स के अनुसार अर्थव्यवस्था में प्राय: पूर्ण रोजगार स्तर से पूर्व संतुलन स्थापित होने की संभावना रहती है।

कीन्स के अनुसार एक अर्थव्यवस्था में आय तथा रोजगार का निर्धारण किस प्रकार होता है, इससे पूर्व आपको उनके द्वारा प्रतिपादित समग्र माँग (Aggregate Demand-AD) तथा समग्र आपूर्ति (Aggregate Supply-AS) की अवधारणाओं को स्पष्ट रूप से समझ लेना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। आईये इसको जानते है

7.4 समग्र माँग की अवधारणा (The Concept of Aggregate Demand)

समग्र माँग से अभिप्राय एक अर्थव्यवस्था में एक वर्ष में वस्तुओं एवं सेवाओं की माँगी गई कुल मात्रा से है। दूसरे शब्दों में, समग्र माँग से तात्पर्य उस राशि से होता है जो उत्पादक रोजगार के एक निश्चित स्तर पर उत्पादित वस्तुओं की बिक्री से प्राप्त होने की आशा करते हैं। कुल व्यय का योग ही समग्र माँग होता है क्योंकि व्यय करने से ही माँग उत्पन्न होती है तथा लोगों के द्वारा किया गया व्यय ही उत्पादकों के लिए आय होती है।

परिवारों, फर्मों तथा सरकार द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग की जाती है। परिवारों के द्वारा उपभोक्ता वस्तुओं जैसे- कपड़ा, चीनी, गेहूँ, दूध, परिवहन, मनोरंजन तथा डॉक्टर की सेवाओं आदि की माँग की जाती है जिसे **निजी उपभोग (Private Consumption)** कहा जाता है। उपभोक्ता वस्तुओं की माँग सरकार द्वारा भी की जाती है जिन्हें **सरकारी उपभोग (Public Consumption)** कहते हैं। वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग निवेश हेतु भी की जाती है। इस प्रकार की वस्तुओं की माँग, फर्मों तथा सरकार द्वारा की जाती है। निजी फर्मों के द्वारा पूँजीगत वस्तुओं (Capital Goods) के लिए की गई माँग को **निजी निवेश (Private Investment)** तथा सरकार द्वारा की गई ऐसी वस्तुओं की माँग को सरकारी निवेश (Public Investment) कहते हैं। इसके अतिरिक्त वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग शेष विश्व (Rest of the World) द्वारा भी की जाती है।

समग्र माँग को उस राशि के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो एक निश्चित समयावधि में परिवार, फर्में तथा सरकार अर्थव्यवस्था में हुए उत्पादन के लिए अदा करने के लिए तैयार हैं। (Aggregate

demand may be defined as the total amount of money which the households, firms and government are willing to pay for the output of the economy during a year.)

समग्र माँग के कुछ घटक हैं आईये इसको जानते है

7.4.1 समग्र माँग के घटक (Components of Aggregate Demand)

समग्र माँग के मुख्य रूप से चार घटक हैं। ***पहला***, निजी उपभोग माँग दूसरा, निजी निवेश माँग ***तीसरा***, सरकार द्वारा वस्तुओं और सेवाओं की माँग, तथा ***चौथा*** शुद्ध निर्यात।

आईये अब दिये गए इन घटकों का हम संक्षेप में अध्ययन करें-

1. निजी उपभोग व्यय (Private Consumption Demand)

निजी उपभोग व्यय समग्र माँग का एक महत्त्वपूर्ण घटक (Component) है। इसका अर्थ है परिवारों द्वारा अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए वस्तुओं और सेवाओं पर किए जाने वाले खर्च से होता है। कीन्स के अनुसार, उपभोग-व्यय मुख्यत परिवारों की प्रयोज्य आय (Disposable Income) तथा उपभोग प्रवृत्ति (Propensity to Consume) पर निर्भर करता है। इनके विषय में आप आगामी अध्याय में विस्तार से जानेगें।

2. निजी निवेश व्यय (Private Investment Expenditure)

निजी निवेश माँग अथवा व्यय से तात्पर्य निजी फर्मों द्वारा पूँजीगत परिसम्पत्तियों के निर्माण पर किए गए कुल व्यय से है। कीन्स के विश्लेषण में निवेश से अभिप्राय नई परिसम्पत्तियों (मशीनों, औजारों, इमारतों आदि) के निर्माण से है जोकि उत्पादन में सहायक होती हैं। आप याद रखिएगा कि अंश-पत्र, बाण्ड अथवा ऋण-पत्रों की खरीद को कीन्स, निवेश नहीं मानते क्योंकि ये तो विद्यमान परिसम्पत्तियों का हस्तांतरण मात्र होता है। कीन्स ने निजी निवेश को दो भागों में बाँटा है- ***पहला***, स्वतंत्र निवेश (Autonomous Investment) और ***दूसरा*** प्रेरित निवेश (Induced Investment)। स्वतंत्र निवेश आय तथा ब्याज से प्रेरित ना होकर स्वतंत्र कारकों (जनसंख्या में वृद्धि तथा नए-नए आविष्कारों) से प्रभावित होता है जबकि प्रेरित निवेश आय पर निर्भर करता है। कीन्स के अनुसार, किसी अर्थव्यवस्था में निजी निवेश दो कारकों पर निर्भर करता है- ***पहला*** पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (Marginal Efficiency of Capital) पर, तथा ***दूसरा*** ब्याज की दर (Rate of Interest) पर। पूँजी की सीमान्त उत्पादकता से आशय नई परिसम्पत्तियों (New Capital Assets) से प्राप्त होने वाले लाभ की अनुमानित दर (Expected rate of return) से होता है। प्रत्येक उद्यमी लाभ कमाने के उद्देश्य से ही उत्पादन कार्य करता है इसीलिए वह निवेश करने से पूर्व लाभ की अनुमानित दर की तुलना ब्याज की दर से करता है। वह उस समय तक ही निवेश करता है जब तक कि पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (अर्थात् लाभ की अनुमानित दर) ब्याज दर के बराबर ना हो जाए।

उदाहरण के लिए, यदि लाभ की अनुमानित दर (MEC) 20 प्रतिशत है जबकि ब्याज दर (r) 5 प्रतिशत है तो उद्यमी निवेश में वृद्धि तब तक करता जाएगा जब तक कि ये दोनों बराबर (r=MEC) नहीं हो जाते। इनके विषय में आप आगामी अध्याय में विस्तार से जानेगें।

3. सरकारी माँग या व्यय (Government Demand or Purchases)

जैसा कि आप जानते ही है कि सरकार द्वारा भी वस्तुओं एवं सेवाओं को खरीदा जाता है लेकिन सरकार द्वारा की गई माँग निजी निवेश माँग की भान्ति लाभ-उद्देश्य के लिए नहीं होती। सरकार लोक-

कल्याण के लिए उत्पादन करती है। उत्पादक के रूप में सरकार वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग सड़कों, इमारतों, स्कूलों, अस्पतालों, रेलों आदि के निर्माण हेतु करती है, जोकि लाभ या ब्याज की दर से प्रेरित नहीं होती है। वहीं दूसरी ओर, सरकारी व्यय अर्थव्यवस्था में सामूहिक माँग को पूरा करने के लिए संचार, शान्ति, सुरक्षा एवं कानून व्यवस्था तथा दूसरे सामाजिक एवं आर्थिक कारकों पर निर्भर करता है।

4. शुद्ध निर्यात (Net Exports)

शुद्ध निर्यात से आशय एक देश में एक निश्चित अवधि में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं की शुद्ध विदेशी माँग से है। अन्य शब्दों में, एक देश के निर्यात तथा आयात के अंतर को **शुद्ध निर्यात** कहते हैं। यदि किसी देश के निर्यात उसके आयात से अधिक हैं तो निर्यात तथा आयात का अंतर समग्र माँग को बढ़ा देगा। इसके विपरीत, यदि निर्यात अपेक्षाकृत कम है तो समग्र माँग कम हो जाएगी। किसी देश के निर्यात तथा आयात कई तत्त्वों पर निर्भर करते हैं, जैसे-विदेशी विनिमय दर, व्यापार की शर्तें, सरकार की व्यापारिक नीतियाँ, वस्तुओं की तुलनात्मक कीमतें, आदि। अधिकांश देशों में शुद्ध विदेशी माँग अर्थात् शुद्ध निर्यात अर्थव्यवस्था की समग्र माँग का छोटा-सा अंश होने के कारण आय-निर्धारण के विश्लेषण में कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता।

उपर्युक्त विवरण से आपको स्पष्ट हो गया होगा है कि समग्र माँग के चार घटक हैं। कीन्स ने अपने आय तथा रोजगार सिद्धान्त में विश्लेषण को सरल व सुविधाजनक बनाने हेतु समग्र माँग के इन चार घटकों को लेकिन दो भागों में वर्गीकृत किया है। ***पहला*** हैं उपभोग माँग और ***दूसरा*** हैं निवेश माँग।

इस प्रकार

समग्र माँग = उपभोग + निवेश

Aggregate Demand = Consumption + Investment

समग्र माँग की अवधारणा को निम्न तालिका व चित्र की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है:

तालिका 7.1 समग्र माँग अनुसूची

आय (करोड़ रु.)	उपभोग	निवेश	समग्र माँग
0	100	100	200
100	150	100	250
200	200	100	300
300	250	100	350
400	300	100	400
500	350	100	450
600	400	100	500

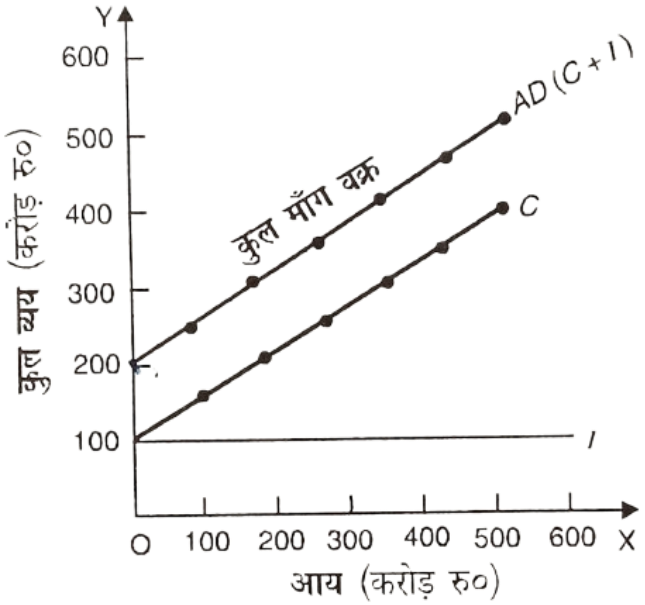

चित्र 7.1 समग्र माँग-वक्र

चित्र 7.1 में, उपभोग व्यय को CC वक्र द्वारा प्रकट किया गया है जबकि C+I वक्र कुल व्यय अर्थात् समग्र माँग को दर्शाता है। समग्र माँग (AD) वक्र उपभोग व्यय तथा निवेश व्यय को जोड़कर प्राप्त किया गया है।

उपरोक्त तालिका व चित्र से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि जैसे-जैसे आय का स्तर बढ़ता है वैसे वैसे समग्र माँग भी बढ़ती जाती है। जब हम समग्र माँग अनुसूची को चित्र के रूप में दिखाते हैं तो हमें समग्र माँग-वक्र (Aggregate Demand Curve) प्राप्त होता है। चित्र 7.1 में समग्र माँग-वक्र (AD=C+I) वक्र, समग्र माँग को प्रकट करता है।

समग्र माँग से संबंधित दो उल्लेखनीय बातें कुल माँग के व्यवहार के संबंध में निम्नलिखित दो बातें महत्वपूर्ण हैं :

1. कुल माँग, आय के स्तर पर निर्भर करती है अर्थात् आय में वृद्धि होने पर समग्र माँग में वृद्धि तथा आय में कमी होने से कुल माँग में कमी होती है लेकिन आय के शून्य स्तर होने पर भी कुल माँग अपने न्यूनतम स्तर पर बनी रहती है। जैसा कि तालिका व चित्र से स्पष्ट है कि आय के शून्य होने पर भी समग्र माँग का स्तर 20 करोड़ रुपये है। इसका कारण यह है कि जीवित रहने के लिए हमें कुछ अनिवार्य वस्तुओं (भोजन, वस्त्र) की माँग अवश्य करनी पड़ती है।
2. जब आय में वृद्धि होती है तो कुल व्यय (अथवा समग्र माँग) बढ़ता है लेकिन समग्र माँग में होने वाली वृद्धि, आय में होने वाली वृद्धि से कम होती है। इसका कारण है लोग अपनी आय का कुछ भाग बचा लेते हैं। जिसको आप बचत के नाम से जानते हैं।

7.5 समग्र आपूर्ति की अवधारणा (The Concept of Aggregate Supply)

समग्र आपूर्ति एक निश्चित समय में अर्थव्यवस्था में बिक्री के लिए उपलब्ध उत्पादन का कुल मूल्य बताती है। समग्र आपूर्ति, एक देश की राष्ट्रीय आय के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अन्य शब्दों में, समग्र आपूर्ति से आशय एक अर्थव्यवस्था में उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की कुल मात्रा से है।

उत्पादकों को उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की कीमत कम से कम उसकी लागत के बराबर अवश्य मिलनी चाहिए, तभी वह वस्तुओं एवं सेवाओं को उत्पादित करेंगे। यदि उन्हें यह न्यूनतम कीमत प्राप्त नहीं होती तो वे वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन नहीं करेंगे। इस प्रकार समग्र आपूर्ति से तात्पर्य उत्पादन की कुल लागत

से है जो उत्पादन के विभिन्न साधनों को लगान, मजदूरी, ब्याज तथा लाभ के रूप में दी जाती है। लेकिन साधनों को किये गये भुगतान का योग (लगान+ब्याज+मजदूरी+लाभ) किसी अर्थव्यवस्था की साधन-लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP) है। अत: हम कह सकते हैं कि समग्र आपूर्ति तथा शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद दोनों समान हैं। राष्ट्रीय आय का बड़ा भाग उपभोग पर खर्च कर दिया जाता है तथा शेष भाग बचा लिया जाता है। अत: राष्ट्रीय आय अर्थात् समग्र आपूर्ति उपभोग-व्यय तथा बचत का योग है।
समीकरण के रूप में

समग्र आपूर्ति = उपभोग + बचत

Aggregate Supply= Consumption + Investment

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि समग्र आपूर्ति राष्ट्रीय आय के बराबर होती है। अत: समग्र आपूर्ति-वक्र 45^0 का कोण बनाती हुई ऊपर को दायीं ओर जाती है जैसा कि चित्र 7.2 में दर्शाया गया है। इसे तालिका 7.2 में भी दिखाया गया है कि कुल उपभोग-व्यय अर्थव्यवस्था में 100 करोड़ रूपये के आय स्तर से अधिक है। इस प्रकार यहाँ अर्थव्यवस्था में अबचतें (Dissavings) हो रही हैं। लेकिन 200 करोड़ रूपये के आय-स्तर के पश्चात् आय तथा रोजगार के बढ़ने के साथ-साथ उपभोग तथा बचतें दोनों में वृद्धि हो रही है।

<u>तालिका 7.2 समग्र आपूर्ति अनुसूची</u>

(करोड़ रूपये में)

आय (करोड़ रु.)	रोजगार	उपभोग	बचत	समग्र आपूर्ति
0	0	100	200	0
100	10,00,000	150	250	100
200	20,00,000	200	300	200
300	30,00,000	250	350	300
400	40,00,000	300	400	400
500	50,00,000	350	450	500
600	60,00,000	400	500	600

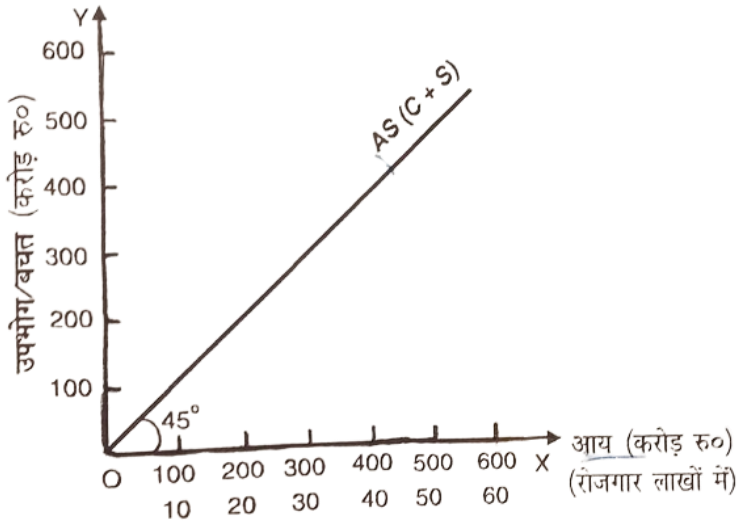

चित्र 7.2 समग्र आपूर्ति-वक्र

कुल-पूर्ति के संबंध में उल्लेखनीय बातें किसी अर्थव्यवस्था में कुल-पूर्ति (अर्थात् वस्तुओं एवं सेवाओं के प्रवाह) में वृद्धि दो प्रकार से की जा सकती है। एक संसाधनों के पूर्ण उपयोग से तथा दूसरे उत्पादन की तकनीकी में सुधार करके किन्तु कीन्स का विश्लेषण एक अल्पकालीन विश्लेषण है और अल्पकाल में उत्पादन तकनीक स्थिर रहती है। अतएव वर्तमान संसाधनों (विशेष तौर पर श्रम) का पूर्ण उपयोग करके ही उत्पादन की मात्रा में वृद्धि सम्भव है। कीन्स के अनुसार, अर्थव्यवस्था में जब तक पूर्ण रोजगार का स्तर नहीं प्राप्त कर लिया जाता तब तक रोजगार तथा आय में प्रत्यक्ष संबंध पाया जाता है अर्थात् उत्पादन में वृद्धि उसी दर से होती है, जिस दर से रोजगार में वृद्धि होती है। चित्र 7.2 में आपूर्ति-वक्र मूल बिन्दु 0 से 45^0 का कोण बनाती है जिससे यह सिद्ध होता है कि रोजगार तथा आपूर्ति में प्रत्यक्ष व आनुपातिक संबंध है।

7.6 कीन्स के सिद्धान्त में आय एवं रोजगार के संतुलन स्तर का निर्धारण (Determination of Equilibrium Level of Income and Employment in Keynes' Theory)

समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति की विभिन्न अवधारणाओं का अध्ययन करने के पश्चात् अब हम कीन्स के आय संतुलन-स्तर के निर्धारण का अध्ययन करेंगे। कीन्स के अनुसार, आय तथा रोजगार के संतुलन स्तर का निर्धारण यहाँ होता है जहाँ पर समग्र माँग तया समग्र आपूर्ति बराबर होते हैं। आय के संतुलन-स्तर के निर्धारण की व्याख्या समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति की एक काल्पनिक अनुसूची की सहायता से की जा सकती है।

आय तथा रोजगार के संतुलन स्तर का निर्धारण उस बिन्दु पर होगा जहाँ समग्र माँग व समग्र आपूर्ति बराबर है। तालिका व चित्र 7.3 में राष्ट्रीय आय के 400 करोड़ रूपये के स्तर पर समग्र माँग तथा समग्र आपूर्ति बराबर हैं।

तालिका 7.3

आय (करोड़ रु.)	रोजगार	उपभोग	निवेश	बचत	समग्र माँग	समग्र आपूर्ति	विवरण
0	0	100	100	200	200	0	AD>AS
100	10,00,000	150	100	250	250	100	
200	20,00,000	200	100	300	300	200	
300	30,00,000	250	100	350	350	300	
400	40,00,000	300	100	400	400	400	AD=AS
500	50,00,000	350	100	450	450	500	AD<AS
600	60,00,000	400	100	500	500	600	

दोनों 400 करोड़ रुपये के स्तर पर हैं। संतुलन स्तर पर 40 लाख लोगों को रोजगार प्राप्त होगा। इस संतुलन स्तर पर बचत भी निवेश के बराबर है। इस संतुलन स्तर में किसी भी प्रकार का परिवर्तन स्थायी नहीं होगा। उदाहरण के लिए, 400 करोड़ के आय-स्तर से पूर्व कोई भी आय अथवा रोजगार स्तर है तो समग्र माँग समग्र आपूर्ति से अधिक होगी। जिसका अर्थ यह है कि उद्यमी को अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए उत्पादन के साधनों को अधिक रोजगार देंगे तथा उत्पादन का स्तर बढ़ाएँगे, जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय आय भी बढ़ेगी। और यह तब तक बढ़ती रहेगी जब तक कि आय के संतुलन स्तर तक ना पहुँच जाए। इसके विपरीत, यदि आय-स्तर 400 करोड़ रूपये से अधिक है तो लोग उद्यमियों को प्राप्त होने वाली न्यूनतम राशि से कम व्यय करने को तैयार हैं अर्थात् समग्र माँग समग्र आपूर्ति से कम होगी। इस स्थिति में उद्यमियों

को हानि उठानी होगी क्योंकि उनके द्वारा उत्पादित उत्पादन की बिक्री पूरी नहीं हुई हैं। ऐसी स्थिति में आय तथा रोजगार का संतुलन उस बिन्दु पर निर्धारित होगा जहाँ पर समग्र माँग तथा समग्र आपूर्ति एक-दूसरे के बराबर होंगी।

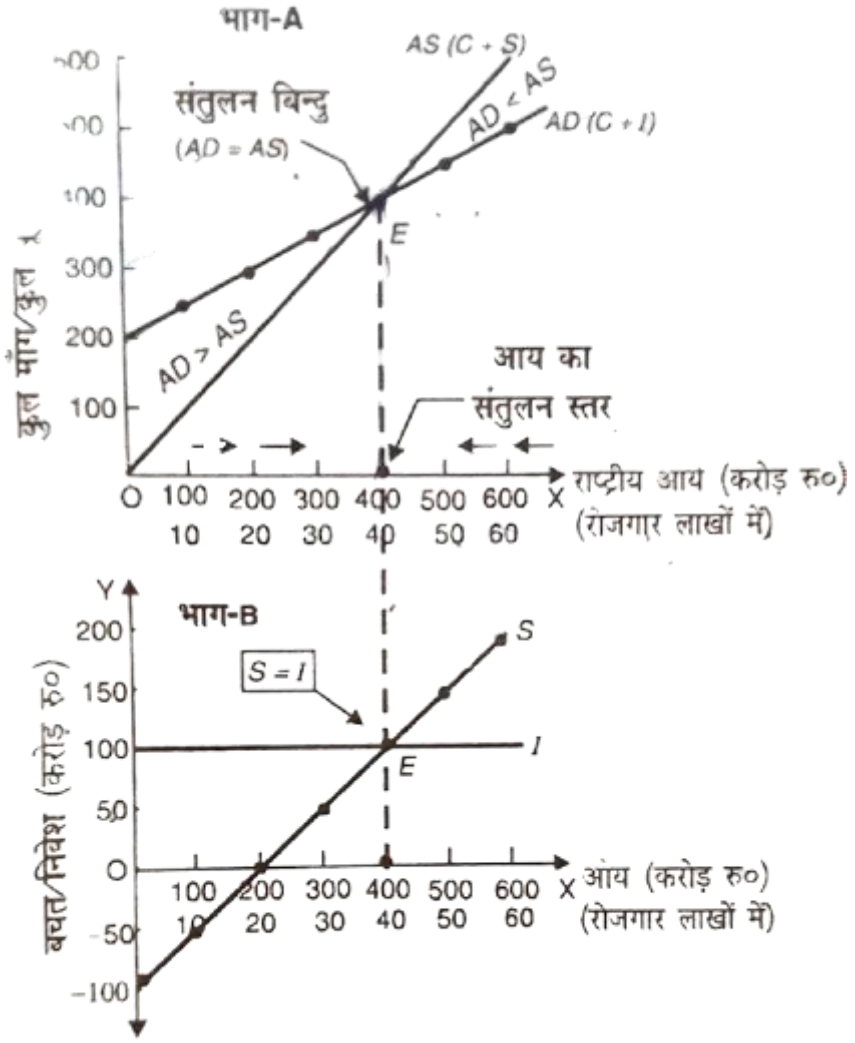

चित्र 7.4 (भाग-A) में समग्र माँग-वक्र, आपूर्ति-वक्र को बिन्दु E पर काटता है। इस बिन्दु पर आय का संतुलन-स्तर 400 करोड़ रूपये निर्धारित होता है और 40 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त है। आय में हुए किसी प्रकार के परिवर्तन की आय के संतुलन-स्तर की ओर आने की प्रवृत्ति होगी। चित्र 7.4 का निचला भाग (भाग-B) आय के इसी स्तर पर बचत और निवेश को दर्शाता है। आय के संतुलन स्तर पर बचत और निवेश एक-दूसरे के बराबर होते हैं। आय के संतुलन-स्तर पर समग्र माँग (कुल वास्तविक व्यय) की मात्रा को **कीन्स** ने **प्रभावी माँग (Effective Demand)** कहा है। कीन्स के अनुसार, ***"समग्र माँग-वक्र के जिस बिन्दु पर समग्र आपूर्ति-वक्र उसे काटता है, उस बिन्दु का मूल्य ही प्रभावी माँग कहलाएगा।"***

कीन्स के अनुसार, संतुलन के लिए पूर्ण रोजगार का होना आवश्यक नहीं है। उनके अनुसार, संतुलन का निर्धारण पूर्ण रोजगार स्तर या फिर पूर्ण रोजगार से पूर्व या बाद में भी हो सकता है। यदि संतुलन पूर्ण रोजगार से पूर्व स्थापित होता है तो उसे उन्होंने **अपूर्ण रोजगार संतुलन** कहा है। पूर्व रोजगार स्तर पर संतुलन को **पूर्ण रोजगार संतुलन** कहा है जोकि अर्थव्यवस्था की एक आदर्श तथा विशेष स्थिति होती है।

7.7 कीन्स के सिद्धान्त का महत्व (Importance of Keynes' Theory)

कीन्स का सिद्धान्त सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों पहलू से महत्वपूर्ण है।

(अ) सैद्धान्तिक महत्व

1. कीन्स ने व्यापक दृष्टिकोण अपनाकर अर्थशास्त्र को एक नया रूप दिया।
2. कीन्स ने साबित किया कि आय तथा रोजगार का सन्तुलन पूर्ण रोजगार के स्तर से कम पर स्थापित होता है।
3. कीन्स ने प्रावैगिक तत्व का उपयोग करके आधुनिक आर्थिक सिद्धान्तों के विकास में सहायता प्रदान की।
4. कीन्स ने नवीन आर्थिक सैद्धान्तिक अवधारणाओं को विकसित कर एक व्यवस्थित तथा समन्वित सिद्धान्त के रूप में संयोजित किया।
5. कीन्स ने निवेश को रोजगार के स्तर का एक महत्वपूर्ण निर्धारक के रूप में लिया और उपभोग तथा आय के बीच के अन्तर को समाप्त करने में निवेश की वृद्धि के महत्व को दर्शाया।
6. कीन्स का सिद्धान्त एक सामान्य सिद्धान्त है जोकि अर्थव्यवस्था की सभी स्थितियों पर लागू होता है।

(ब) व्यवहारिक महत्व

1. कीन्स ने प्रभावपूर्ण माँग बढ़ाने के लिए सरकारी हस्तक्षेप के औचित्य को समझाया फलत: अबन्ध नीति को प्रभावहीन बताया।
2. कीन्स ने परिस्थिति अनुसार घाटे के बजट को लाभप्रद बताया।
3. कीन्स ने मौद्रिक नीति की सीमाओं को बताते हुए राजकोषीय नीति के महत्व को समझाया।
4. कीन्स ने हीनार्थ प्रबन्धन की नीति को दृष्टिपात किया।
5. कीन्स ने मजदूरी दरों को कम करके रोजगार बढ़ाने की प्रवृत्ति का खण्डन किया।
6. कीन्स की अवधारणाओं राष्ट्रीय आय, राष्ट्रीय उपभोग, बचत तथा निवेश के माध्यम से सभी देशों को सामाजिक लेखे तैयार करने में सहायता मिलती है।

7.8 कीन्स के रोजगार सिद्धान्त का आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation of Keynes' Employment Theory)

कीन्स का सामान्य रोजगार का सिद्धान्त अर्थशास्त्र के अध्ययन में कई प्रकार से महत्वपूर्ण है किन्तु इसकी कुछ कमियाँ भी हैं।

1. कीन्स का सिद्धान्त मुद्रास्फीति और अपस्फीति की स्थितियों पर लागू होगा लेकिन यह संरचनात्मक और तकनीकी बेरोजगारी की व्याख्या नहीं करता है।
2. कीन्स के रोजगार सिद्धान्त को सामान्य सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह सभी अर्थव्यवस्थाओं पर लागू नहीं होगा जैसे कि साम्यवादी अर्थव्यवस्था, अल्पविकसित और विकासशील अर्थव्यवस्था पर यह लागू नहीं होता क्योंकि इनकी परिस्थितियाँ अलग हैं।
3. यह सिद्धान्त पूर्ण प्रतियोगिता की अवास्तविक मान्यता पर आधारित है।
4. उपभोग प्रवृत्ति की व्याख्या सन्तोषजनक नहीं है।
5. रोजगार वृद्धि के लिए केवल निवेश प्रेरणा पर पूर्णत: निर्भर रहना उचित नहीं है।

6. दीर्घकाल की अवहेलना की गई है।
7. अत्यधिक समग्रित सिद्धान्त है जो मैक्रो दृष्टिकोण से ही प्रतिपादित किया गया है।
8. विदेशी व्यापार के प्रभाव पर ध्यान नहीं दिया गया।
9. राजकोषीय नीति को मौद्रिक नीति की अपेक्षा अधिक महत्व देना उचित नही है। सरकार द्वारा अधिक निवेश करने पर निजी निवेश में कमी होती है। कीन्स ने निवेश के नियोजन की ओर ध्यान नहीं दिया है।
10. कीन्स ने अपने सिद्धान्त में त्वरक की धारणा को सम्मिलित नहीं किया।

7.9 प्रतिष्ठित तथा केन्सियन सिद्धान्त की तुलना (Comparison of Classical and Keynesian Theory)

1. प्रतिष्ठित सिद्धान्त में **मूल्य पूर्णतया परिवर्तन** या लोचशील है जबकि केन्सियन सिद्धान्त में यह स्थिर या अलोचशील है। अगर परिवर्तनीय है तो ऊपर की ओर ही परिवर्तनीय है। जिसका अर्थ है कि यदि मूल्य में वृद्धि होगी तो हो सकती है किन्तु गिरावट नहीं हो सकती।
2. प्रतिष्ठित मॉडल में रोजगार तथा आय के स्तर का निर्धारण केवल समग्र पूर्ति के द्वारा होता है, प्रतिष्ठित सिद्धान्त में समग्र माँग केवल मूल्य स्तर निर्धारित करती है। इसके विपरीत सरल केन्सियन सिद्धान्त में **आय तथा रोजगार का निर्धारण** समग्र माँग के द्वारा ही होता है, मूल्य स्तर तथा समग्र पूर्ति विश्लेषण में नहीं आते।
3. प्रतिष्ठित सिद्धान्त में **हमेशा पूर्ण रोजगार की स्थिति** पायी जाती है, केन्सियन सिद्धान्त में सामान्यता पूर्ण रोजगार से कम की स्थिति पायी जाती है और यह स्थिति मुख्यतया समग्र माँग में कमी के कारण होगी।
4. प्रतिष्ठित सिद्धान्त में **संस्थिति** पूर्ण रोजगार स्तर पर होगी, अत: अनैच्छिक बेरोजगारी का सवाल नहीं उठता। केन्सियन सिद्धान्त में सामान्यतया संस्थिति की स्थिति पूर्ण रोजगार स्तर से नीचे या कम स्तर पर होगी, अत: संस्थिति के साथ अनैच्छिक बेरोजगारी की स्थिति विद्यमान होगी।

7.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. .....की पुस्तक 'The General Theory of Employment, Interest and Money' वर्ष 1936 में प्रकाशित हुई। (जॉन मेनार्ड कीन्स **या** जे.बी.से)
2. समग्र ..... एक निश्चित समय में अर्थव्यवस्था में बिक्री के लिए उपलब्ध उत्पादन का कुल मूल्य बताती है। (माँग **या** आपूर्ति)
3. जहाँ पूर्ण रोजगार स्तर पर समग्र माँग तथा समग्र आपूर्ति बराबर होती उसे ..... रोजगार संतुलन कहते है। (पूर्ण **या** अपूर्ण)
4. कीन्स के अनुसार संतुलन की ..... अवस्थाएँ होती हैं। (दो **या** तीन)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. जॉन मेनार्ड कीन्स (John Manyard Keynes) की पुस्तक 'The General Theory of Employment, Interest and Money' वर्ष 1964 में प्रकाशित हुई।
2. समग्र माँग के मुख्य रूप से चार घटक हैं।

3. समग्र आपूर्ति से अभिप्राय एक अर्थव्यवस्था में एक वर्ष में वस्तुओं एवं सेवाओं की माँगी गई कुल मात्रा से है।

7.11 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने कीन्स के सिद्धान्त के बारे में जाना कि कीन्स के अनुसार समग्र माँग सदैव समग्र आपूर्ति के बराबर नहीं होती। समग्र माँग, समग्र आपूर्ति से अधिक भी हो सकती है और कम भी हो सकती है। समग्र माँग जब समग्र आपूर्ति की तुलना में कम होती है तो ऐसी स्थिति में अति-उत्पादन तथा बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होती है और कीमतों में कमी आ जाती है। कीन्स के अनुसार, आय एवं रोजगार का संतुलन स्तर उस बिन्दु पर होता है जहाँ पर समग्र माँग तथा समग्र आपूर्ति एक-दूसरे के बराबर होते हैं परन्तु अर्थव्यवस्था में ऐसा कोई स्वचालित यंत्र नहीं है जोकि समग्र माँग समग्र आपूर्ति इन दोनों में स्वत: ही समानता उत्पन्न कर दे। समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति और साथ ही बचत और निवेश में समानता स्थापित करने के लिए सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। आय के संतुलन-स्तर पर समग्र माँग (कुल वास्तविक व्यय) की मात्रा को कीन्स ने ***प्रभावी माँग*** कहा है। आपने कीन्स के आय निर्धारण सिद्धान्त को चित्र एवं समीकरण की सहायता से विस्तार से पढ़ा और समझा कि अर्थव्यवस्था में अलग-अलग स्तर पर आय निर्धारण किस प्रकार किया जाता हैं।

समग्र माँग से अभिप्राय एक अर्थव्यवस्था में एक वर्ष में वस्तुओं एवं सेवाओं की माँगी गई कुल मात्रा से है। दूसरे शब्दों में, समग्र माँग से तात्पर्य उस राशि से होता है जो उत्पादक रोजगार के एक निश्चित स्तर पर उत्पादित वस्तुओं की बिक्री से प्राप्त होने की आशा करते हैं। कुल व्यय का योग ही समग्र माँग होता है क्योंकि व्यय करने से ही माँग उत्पन्न होती है तथा लोगों के द्वारा किया गया व्यय ही उत्पादकों के लिए आय होती है। समग्र माँग के मुख्य रूप से चार घटक हैं। ***पहला***, निजी उपभोग माँग ***दूसरा***, निजी निवेश माँग ***तीसरा***, सरकार द्वारा वस्तुओं और सेवाओं की माँग, तथा ***चौथा*** शुद्ध निर्यात।

समग्र आपूर्ति एक निश्चित समय में अर्थव्यवस्था में बिक्री के लिए उपलब्ध उत्पादन का कुल मूल्य बताती है। समग्र आपूर्ति, एक देश की राष्ट्रीय आय के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अन्य शब्दों में, समग्र आपूर्ति से आशय एक अर्थव्यवस्था में उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की कुल मात्रा से है। अध्याय के अंतिम भाग में आपने कीन्स के सिद्धान्त की सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों पहलू के महत्व एवं कमियों को भी जाना। और साथ ही आपने कीन्स के सिद्धान्त का प्रतिष्ठित सिद्धान्त के साथ तुलनात्मक अध्ययन किया।

7.12 शब्दावली (Glossary)

- **शुद्ध निर्यात (Net Exports) :** शुद्ध निर्यात से आशय एक देश में एक निश्चित अवधि में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं की शुद्ध विदेशी माँग से है।
- **पूर्ण रोजगार संतुलन (Full Employment Equilibrium) :** जहाँ पूर्ण रोजगार स्तर पर समग्र माँग तथा समग्र आपूर्ति बराबर होती है।
- **अपूर्ण रोजगार संतुलन (Under-Employment Equilibrium)** : जहाँ पूर्ण रोजगार स्तर से पहले ही समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति बराबर होती है।
- **अति पूर्ण-रोजगार संतुलन (Over Employment Equilibrium) :** यह वह अवस्था है, जब पूर्ण रोजगार के स्तर के बाद में समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति बराबर होती है।
- **अन्तरण भुगतान (Transfer Payments) :** सरकार द्वारा किए गए भुगतान जिनके लिए कोई सेवा प्रदान नहीं की जाती है उसे अन्तरण भुगतान कहते हैं जैसे छात्रवृत्ति, बाकी दुनिया से उपहार, भूकंप-बाढ़ पीड़ितों पर खर्च, महंगाई भत्ता, बेरोजगारी भत्ता, आदि।

- **सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume) :** सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति आय में वृद्धि का वह भाग है जो उपभोग पर खर्च किया जाता है। आम तौर पर अधिक आय के उच्च स्तर पर सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति कम होती है।
- **वैयक्तिक आय (Personal Income) :** इसका तात्पर्य उस आय से है जोकि किसी व्यक्ति को मजदूरी, निवेश उद्यमों और अन्य उपक्रमों द्वारा प्राप्त हुई हो।
- **स्वायत्त निवेश (Autonomous Investment) :** स्वायत्त निवेश से तात्पर्य किसी देश की अर्थव्यवस्था को बनाए रखने या बढ़ाने में मदद के लिए सरकार द्वारा किए गए निवेश से है।

7.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. जॉन मेनार्ड कीन्स 2. आपूर्ति 3. पूर्ण 4. तीन

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य

7.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- जैन, के.पी.; गुप्ता के.एल. (1906) ***"अर्थशास्त्र"***, नवयुग साहित्य सदन, आगरा ।
- जैन, टी.आर.; ओहरि, बी.के. (1912-13) ***"प्रारम्भिक समष्टि अर्थशास्त्र"***, के.के. ग्लोबल पब्लिकेशन्स प्रा.लि., नई दिल्ली।
- सिंघई, जी.सी.; मिश्रा, जे.पी. (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
- लाल, एस.के.; एस.एन (1910) ***"अर्थशास्त्र"***, शिव पब्लिशिंग हाऊस, इलाहाबाद।
- सिन्हा, वी.सी. (1910-11) ***"अर्थशास्त्र"***, एस.पी.डी. पब्लिशिंग हाऊस, आगरा।
- सेठी, टी.टी. (1904-05) ***"समष्टि अर्थशास्त्र"***, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
- एन.सी.ई.आर.टी. (1907) ***"व्यष्टि अर्थशास्त्र: एक परिचय"*** एन.सी.ई.आर.टी., दिल्ली।
- अग्रवाल, एम.एन. (1907), ***"भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन"***, न्यू एज इण्टरनेशनल प्रा.लि., नई दिल्ली।

7.15 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York

- Shapiro, E. (1996), *Macroeconomic Analysis*, Galgotia Publications, New Delhi Dwivedi, D.N. (2008) *Macro-Economics*, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) *Macro Economics*, Theory and policy, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) *Economics*, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), *Principles of Macro Economics*, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley, G. (1978), *Macroeconomics : Theory and Policy*, Macmillan, New York

7.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. कीन्स के आय एवं रोजगार निर्धारण सिद्धान्त को विस्तार से समझाइए।
2. समग्र माँग एवं समग्र आपूर्ति के द्वारा आय का संतुलन स्तर किस प्रकार निर्धारित होता है, एक रेखाचित्र की सहायता से समझाइए।

इकाई 8 उपभोग फलन
(Consumption Function)

8.1 प्रस्तावना (Introduction)
8.2 उद्देश्य (Objectives)
8.3 उपभोग फलन का परिचय (Introduction of Consumption Function)
8.3.1 उपभोग फलन का अर्थ (Meaning of Consumption Function)
8.3.2 उपभोग फलन की परिभाषाएं (Definitions of Consumption Function)
8.3.3 उपभोग फलन अनुसूची (Consumption Function Schedule)
8.3.4 उपभोग फलन के रूप (Forms of Consumption Function)
8.3.5 उपभोग फलन का महत्व (Importance of Consumption Function)
8.3.6 उपभोग फलन की आलोचनाएँ (Criticism of Consumption Function)
8.4 उपभोग प्रवृत्ति (Consumption Propensity)
8.4.1 उपभोग प्रवृत्ति का अर्थ (Meaning of Consumption Propensity)
8.4.2 उपभोग प्रवृत्ति की परिभाषाएं (Definitions of Consumption Propensity)
8.4.3 उपभोग प्रवृत्ति के प्रकार (Types of Consumption Propensity)
8.4.4 उपभोग प्रवृत्ति के निर्धारक तत्व (Determinants of Propensity to Consume)
8.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
8.6 सारांश (Summary)
8.7 शब्दावली (Glossary)
8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
8.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
8.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

उपभोग फलन से सम्बंधित यह पहली इकाई हैं, इससे पहले की इकाई में आप प्रतिष्ठित सिद्धांत एवं केन्सीयन सिद्धांत के बारे में पढ़ चुके हैं और समझ चुके हैं की प्रतिष्ठित सिद्धांत एवं केन्सीयन सिद्धांत किस प्रकार एक दुसरे से भिन्न हैं। प्रस्तुत इकाई में आप उपभोग फलन के बारे में पढेंगे एवं साथ ही इसके महत्व एवं आलोचनाओं को भी जानेंगे। इकाई में आप उपभोग के विभिन्न रूप से भी परिचित होंगे एवं उपभोग की प्रवृत्ति के बारे में भी जानेंगे। आप सभी यह तो जानते ही हैं कि उपभोग, आय पर निर्भर करता हैं परन्तु उपभोग एवं आय के मध्य किस प्रकार का सम्बन्ध हैं इसके बारे में आप इस इकाई में विस्तार से जानेगें और साथ ही आप पढेंगे कि उपभोग, आय के अलावा अन्य किन तत्वों पर निर्भर करता हैं।

8.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढने के बाद आप:

- ✓ उपभोग फलन के अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- ✓ उपभोग फलन के विभिन्न रूपों से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ उपभोग फलन की औसत एवं सीमांत प्रवृत्ति को समझ सकेंगे।
- ✓ उपभोग की औसत प्रवृत्ति एवं सीमान्त प्रवृत्ति के बीच के सम्बन्ध से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ उपभोग फलन को प्रभावित करने वाले तत्वों को जानेंगे।
- ✓ उपभोग फलन के महत्व एवं आलोचनाओं को भी समझ सकेंगे।

8.3 उपभोग फलन का परिचय (Introduction of Consumption Function)

आईए सबसे पहले उपभोग फलन को समझे।

8.3.1 उपभोग फलन का अर्थ (Meaning of Consumption Function)

उपभोग फलन, उपभोग एवं आय के बीच के सम्बन्ध को दर्शाता हैं। अत: राष्ट्रीय आय एवं कुल उपभोग-व्यय या उपभोग के बीच पाए जाने वाले फलनात्मक सम्बन्ध को ही उपभोग फलन कहा जाता हैं। कीन्स का मत है कि किसी अर्थव्यवस्था का कुल उपभोग व्यय मुख्य रूप से आय पर निर्भर करता है। इसलिए उपभोग, आय का फलन है अर्थात्

$$C = f\ (Y)$$

जहाँ C उपभोग हैं अथवा Y आय और f इन दोनों के बीच सम्बन्ध को बताता हैं। समीकरण में उपभोग (C) निर्भर चर हैं अथवा आय (Y) स्वतंत्र चर है, अत: उपभोग आय पर निर्भर करता हैं।

राष्ट्रीय आय का वह भाग जिसे वस्तु व सेवाओं पर व्यय किया जाता है उसे उपभोग-व्यय या उपभोग कहते हैं। उपभोग व्यय कई तत्वों पर निर्भर करता है। उपभोग को प्रभावित करने वाले विभिन्न चरों जैसे - व्यय योग्य आय (Yd), मूल्य स्तर (P), जीवन-निर्वाह का स्तर (S), ब्याज की दर (r), सम्पत्तियों के वास्तविक मूल्य (W) तथा आय-वितरण (d) आदि के बीच पाये जाने वाले फलनात्मक सम्बन्ध को उपभोग-फलन कहते हैं अर्थात-

$$\mathrm{C} = \mathrm{f}\,(\mathrm{Yd}, \mathrm{P}, \mathrm{S}, \mathrm{r}, \mathrm{W}, \mathrm{d})$$

प्रस्तुत इकाई में आप सिर्फ आय एवं उपभोग के बीच सम्बन्ध को पढेंगे, बाकि तत्व स्थिर रहेंगे। अत: इनमें कोई परिवर्तन नहीं होगा क्योंकि बाकि तत्व स्थिर हैं तो केवल आय के बढ़ने या घटने से ही उपभोग बढेगा या घटेगा।

8.3.2 उपभोग फलन की परिभाषाएं (Definitions of Consumption Function)

बूमैन (Brooman) के अनुसार, *'उपभोग फलन यह बताता है कि उपभोक्ता आय के प्रत्येक सम्भव स्तर पर उपभोग पदार्थों पर कितना खर्च करना चाहेंगे। (Consumption function shows what expenditure consumers will wish to make an consumer's goods and services at each possible level of income.)'*

पीटरसन (Peterson) के अनुसार, *'उपभोग फलन की परिभाषा एक अनुसूची के रूप में दी जा सकती है जो कि विभिन्न आय स्तरों पर, उपभोग पदार्थों और सेवाओं पर दिये गये व्यय की मात्रा को बताती है। (Consumption function may be defined as a schedule showing amount that will be spent for consumer goods and services at different income levels.)'*

8.3.3 उपभोग फलन अनुसूची (Consumption Function Schedule)

यहाँ ध्यान देने वाली बात यह हैं की आय शून्य हो सकती हैं परन्तु उपभोग-व्यय या उपभोग कभी भी शून्य नहीं होता हैं क्योंकि आय के शून्य होने पर भी उपभोक्ता उपभोग-व्यय या उपभोग करना बंद नहीं करता हैं ऐसे में वह अपनी बचत का इस्तेमाल करके उपभोग-व्यय या उपभोग करता हैं। आइये इसे अनुसूची एवं तालिका की सहायता से समझते हैं।

तालिका 8.1 से आप समझ सकते हैं की किस प्रकार आय में परिवर्तन आने से उपभोग-व्यय या उपभोग में परिवर्तन आता हैं। आय के शून्य होने पर भी उपभोग-व्यय या उपभोग शून्य नहीं होता हैं, ऐसे में उपभोक्ता बचत का इस्तेमाल करता हैं जिसकी वजह से बचत नकारात्मक हो जाती हैं परन्तु आय के बढ़ने के साथ साथ बचत भी बढती हैं।

तालिका 8.1 उपभोग प्रवृत्ति सारिणी (आय उपभोग सम्भव)

(करोड़ रू. में)

आय (Y)	0	60	120	180	240	300	360
उपभोग ($C = f\ (Y)$)	20	70	120	170	220	270	320
बचत (S)	-20	-10	0	10	20	30	40

आय के भिन्न-भिन्न स्तरों पर कुल आय तथा उपभोग व्यय के बीच फलनीय सम्बन्ध को व्यक्त करने वाला वितरण 'उपभोग प्रवृत्ति अनुसूची' कहलाता है। सारिणी-8.1 में उपभोग प्रवृत्ति अनुसूची का उदाहरण दिया गया है। ऊपर दी गयी सारिणी से स्पष्ट है कि-

1. आय में होने वाली प्रत्येक वृद्धि के साथ-साथ उपभोग भी बढ़ रहा है।
2. जब आय शून्य होती है तो भी लोग 20 करोड़ रूपये का व्यय उपभोग पर कर रहे हैं। यह उपभोग पर व्यय लोग अपनी पिछली बचत से कर रहे हैं। इसे 'विसंचय' (Dis-saving) कहते हैं।
3. जब आय 120 करोड़ रूपये हो जाती है तो उपभोग पर व्यय भी 120 रूपये हो जाता है। जिस आय स्तर पर उपभोग व्यय आय के बराबर होता है तब इसे 'अन्तराल शून्य बिन्दु' कहते हैं।
4. जब आय 120 करोड़ रूपये से अधिक बढ़ती है तो उपभोग भी बढ़ रहा है परन्तु उपभोग में होने वाली वृद्धि आय में होने वाली वृद्धि की तुलना में कम है।

इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि उपभोक्ता द्वारा वस्तुओं तथा सेवाओं पर किया गया व्यय उपभोक्ता की समग्र आय या समग्र व्यय योग्य आय का एक स्थिर फलन है। **व्यय योग्य आय** में परिवर्तन के साथ-साथ उपभोग व्यय में कितना परिवर्तन होगा। इसको **कीन्स** ने अपने उपभोग के **आधारभूत मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त** में प्रतिपादित किया है। इसके अनुसार जैसे-जैसे लोगों की आय में वृद्धि होती है वैसे-वैसे वे सिद्धान्तत: औसतन रूप से अपने उपभोग में वृद्धि लाते हैं पर यह वृद्धि उतनी नहीं होती जितनी कि आय में वृद्धि होती है। इस प्रकार कीन्स ने उपभोग-फलन की जो व्यवस्था की है उससे निम्नांकित तथ्य सामने आते हैं-

1. उपभोग व्यय व्यययोग्य आय का फलन होगा जैसे-जैसे आय में वृद्धि होगी समग्र उपभोग व्यय में वृद्धि होगी।
2. आय की वृद्धि के साथ उपभोग व्यय में तो वृद्धि होगी परन्तु यह वृद्धि आय की वृद्धि के बराबर नहीं होगी बल्कि कम होगी। इस प्रकार से आय की वृद्धि का कुछ भाग तो उपभोग व्यय के रूप में होगा तथा शेष बचत के रूप में होगा। इस प्रकार यदि Y = व्यय योग्य आय, C = उपभोग तथा S = बचत हो तो

$$\Delta Y = \Delta C + \Delta S \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots (i)$$

$$\Delta C < \Delta Y \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots (ii)$$

$$\text{चूँकि } \frac{\Delta C}{\Delta Y} + \frac{\Delta S}{\Delta Y} = 1 \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots (iii)$$

इसलिए $\Delta C/\Delta Y \leq 1$ (अर्थात C/Y इकाई से कम होगा या बराबर होगा)

3. आय की वृद्धि के साथ उपभोग में वृद्धि तो होगी पर उपभोग की ये वृद्धि घटती हुई दर से होगी अर्थात् बढ़ी आय का कम हिस्सा उपभोग व्यय पर होगा और अधिक भाग बचत के रूप में होगा ।

8.3.4 उपभोग फलन के रूप (Forms of Consumption Function)

A. समय पश्चता की दृष्टि से उपभोग फलन

समय पश्चता की दृष्टि से उपभोग फलन के दो रूप हो सकते हैं। ***पहला*** समयपश्चता विहीन उपभोग फलन (Consumption function without timelag) और ***दूसरा*** समय पश्चता युक्त उपभोग-फलन (Consumption function with timelag)।

उपभोग फलन समयपश्चता विहीन तब कहा जाएगा जब किसी समयावधि में होने वाला उपभोग उसी समयावधि की आय पर निर्भर हो। इसे हम इस रूप में व्यक्त करते हैं।

$$Ct = f(x)$$

t अवधि में उपभोग अवधि, आय से सम्बन्धित है। यदि किसी अवधि में उपभोग उससे पहली अवधि की आय से सम्बन्धित हो तो उपभोग-फलन ***'समय पश्चतायुक्त उपभोग-फलन'*** कहलाएगा।

B. आकृति की दृष्टि से उपभोग फलन

आकृति की दृष्टि से उपभोग फलन के दो रूप हो सकते हैं, ***पहला रैखिक*** (linear) और ***दूसरा गैर रैखिक*** (non linear)

रैखिक उपभोग फलन (Linear Consumption Function) -

यदि आय के प्रत्येक स्तर पर MPC स्थिर हो अर्थात् आय के सापेक्ष उपभोग व्यय में होने वाले परिवर्तन की दर स्थित रहे तो उपभोग-फलन **रैखिक** होगा और उसे प्रदर्शित करने वाला उपभोग वक्र एक सीधी रेखा के रूप में होगा।

रैखिक उपभोग-फलन निम्नांकित समीकरण द्वारा व्यक्त होगा-

$$C = Co + cY$$

जिसमें Co स्वायत उपभोग या न्यूनतम उपभोग प्रदर्शित करता है। इसका सम्बन्ध आय के स्तर से नहीं है। आय के शून्य होने पर भी Co की मात्रा धनातमक होगी। c उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति है। रैखिक उपभोग-फलन CC चित्र 8.1 में प्रदर्शित है ।

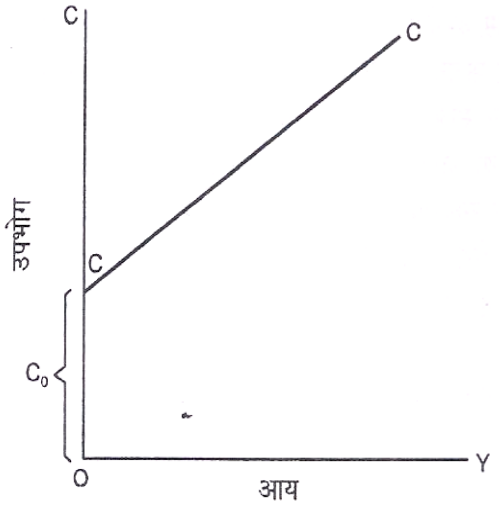

चित्र 8.1

चित्र 8.2 में रैखिक उपभोग-फलन के आधार पर उपभोग की औसत तथा सीमान्त प्रवृत्ति की गणना की गई है।

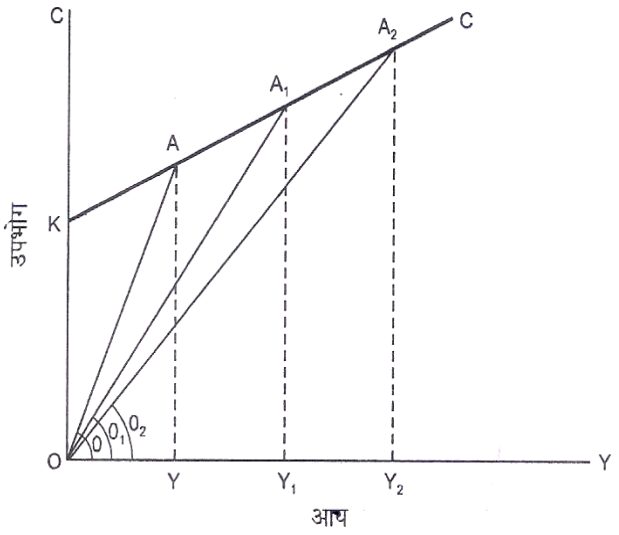

चित्र 8.2

चित्र में CK रैखिक उपभोग फलन है। यह इस मान्यता पर खींचा गया है कि आय के शून्य होने पर भी उपभोग व्यय शून्य से अधिक होता है अर्थात् $C > 0$ जब $Y = 0$, OK स्वायत्त उपभोग है अर्थात् आय का स्तर शून्य होने पर भी उपभोग व्यय धनात्मक होगा $(OK > 0)$ रहेगा। दिये हुए रैखिक उपभोग-फलन के आधार पर हम देखेंगे कि औसत उपभोग प्रवृत्ति, आय के स्तर में वृद्धि के साथ घटेगी पर सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति स्थिर रहेगी। हम जानते हैं कि उपभोग की औसत प्रवृत्ति C/Y होती है उपभोग-फलन के विभिन्न बिन्दुओं A, A_1 और A_2पर उपभोग की मात्रा क्रमशः YA, Y_1A_1, Y_2A_2 है तथा सम्बन्धित आय के

स्तर OY, OY_1 तथा OY_2 हैं इन बिन्दुओं पर उपभोग की औसत प्रवृत्ति $\frac{AY}{OY}$, $\frac{A_1Y_1}{OY_1}$, $\frac{A_2Y_2}{OY_2}$ ज्ञात की जा सकती है। यह क्रमश: घटती हुई है। जिन्हें गणित का थोड़ा भी ज्ञान हैं वे कह सकते हैं कि C रेखा के विभिन्न बिन्दुओं को O से जोड़ने वाली रेखाओं के ढाल ही औसत उपभोग प्रवृत्ति को प्रदर्शित करेंगे। अर्थात् A, A_1 और A_2 बिन्दुओं पर उपभोग की औसत प्रवृत्ति क्रमश: OA, OA_1 और OA_2 रेखाओं के ढाल के बराबर होगी- जो कि क्रमश: $\tan\theta$, $\tan\theta 1$, $\tan\theta 2$ के बराबर होंगे अर्थात् जैसे-जैसे हम उपभोग वक्र पर दाहिनी ओर अग्रसर होंगे वैसे-वैसे उपभोग की औसत प्रवृत्ति घटती जायेगी। चूँकि उपभोग-फलन का ढाल ही उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति प्रदर्शित करता है इसलिए CC रेखा का ढाल सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति प्रदर्शित करेगा। इस रेखा के प्रत्येक बिन्दु पर ढाल एक ही है इसलिए इस स्थिति में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति, आय के प्रत्येक स्तर पर स्थिर है।

गैर रैखिक उपभोग फलन (Non- Linear Consumption Function) -

कीन्स ने गैर रैखिक उपभोग-फलन की बात की क्योंकि उन्होंने यह प्रदर्शित किया कि आय की उत्तरोत्तर वृद्धि की अपेक्षा उपभोग में गिरती हुई दर से वृद्धि होगी। अर्थात् उपयोग की सीमान्त प्रवृत्ति, आय की वृद्धि के साथ घटेगी। अन्य शब्दों में आय की वृद्धि के फलस्वरूप उपभोग फलन का ढाल घटेगा तथा उपभोग-फलन गैर रैखिक होगा। गैर रैखिक उपभोग-फलन CC के विभिन्न बिन्दुओं पर औसत तथा सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति कैसे हो इसे चित्र 8.3 में प्रदर्शित किया गया है ।

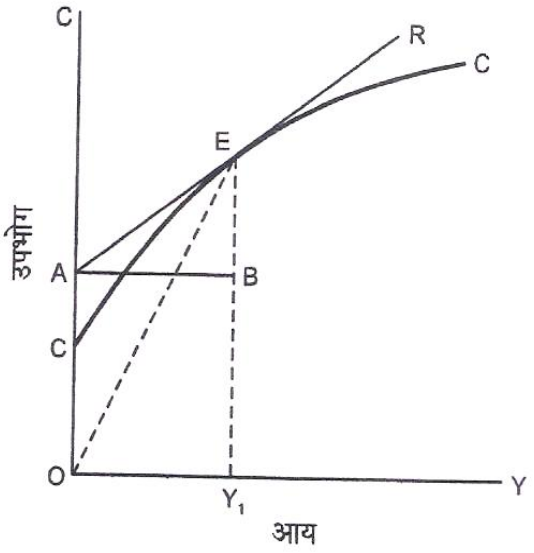

चित्र 8.3

मान लीजिए हम E बिन्दु पर उपभोग की औसत तथा सीमान्त प्रवृत्ति को ज्ञात करना चाहते हैं। E बिन्दु को मूल बिन्दु (O) से मिलाया गया है औसत उपभोग प्रवृति (APC) EO रेखा के ढाल के बराबर अर्थात् $\frac{EY_1}{OY_1}$ होगी जो आय स्तर की वृद्धि के साथ घटती जायेगी। इसी बिन्दु पर सीमान्त उपभोग वृत्ति ज्ञात करने के लिए E न्दु पर CC की स्पर्श रेखा AR खींची गयी है। E बिन्दु पर उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति स्पर्श रेखा AR के ढाल अर्थात् $\tan < EAB$ के बराबर होगी।

अन्य शब्दों में E बिन्दु पर उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति का निर्धारण सम्बन्धित स्पर्श रेखा AR द्वारा लम्ब अक्ष के साथ बनाए गए कोण $< EBA$ के टैनेजेन्ट tangent ($\tan < EAB$) के द्वारा होगा। चित्र से स्पष्ट है कि आय वृद्धि के साथ स्पर्श रेखाओं द्वारा लम्ब अक्ष के साथ बनाए गये कोण लगातार घटते जायेंगे जिसके फलस्वरूप कोणों के Tangent भी लगातार घटते जायेंगे अर्थात् उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति निरन्तर घटती जायेगी।

C. समय अवधि की दृष्टि से उपभोग फलन

अल्पकालीन उपभोग व्यय-

अल्पकाल में उपभोग व्यय, स्वतंत्र उपभोग (Autonomus Consumption) तथा सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) पर निर्भर करता है। स्वतंत्र उपभोग से आशय ऐसे उपभोग से है जो व्यक्ति को प्रत्येक दशा में करना ही पड़ता है चाहे आय शून्य ही क्यों न हो। अल्पकाल में आये बढ़ने पर उपभोग व्यय आय की तुलना में कम बढ़ता है। अर्थात् $C = Co + bY$

(यहाँ C= उपभोग व्यय, Co= स्वतंत्र उपभोग, b= सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति, Y= आय)

दीर्घकालीन उपभोग व्यय-

दीर्घकालीन समय में उपभोग व्यय पूर्ण रूप से सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) पर निर्भर करता है। यह इस कारण से क्योंकि दीर्घकालीन समय में व्यक्ति बिना आय के व्यय नहीं कर सकता। इस कारण से दीर्घकालीन समय मे स्वतंत्र उपभोग नहीं होता है। अर्थात् $C = bY$ दीर्घकालीन समय में उपभोग प्रवृत्ति बढ़ती हुई आय के साथ गिरती नहीं है। यह स्थिर रहती है।

8.3.5 उपभोग फलन का महत्व (Importance of Consumption Function)

1. कीन्स ने अपने उपभोग-फलन सम्बन्धी विश्लेषण के द्वारा क्लासिकल अर्थशास्त्रियों के आधारभूत **जे. बी. से** के सिद्धान्त को चुनौती दी। कीन्स के अनुसार आय की वृद्धि के अनुपात में उपभोग में वृद्धि चूँकि कम होती है इसलिए 'से' का यह कहना गलत हो जाता है कि पूर्ति हमेशा माँग के बराबर होगी।
2. उपभोग-फलन के ही विश्लेषण के आधार पर कीन्स ने सर्वप्रथम व्यापार चक्रों के ऊपरी तथा निचले मोड़ बिन्दुओं की सन्तोषजनक व्यवस्था की।
3. औसत उपभोग प्रवृत्ति तथा औसत बचत प्रवृत्ति की गणना से यह ज्ञात किया जा सकता है कि एक नियोजित रोजगार से प्राप्त निश्चित उत्पादन में से कितना भाग उपभोग वस्तुओं के बेचने से प्राप्त होगा एवं कितना भाग विनियोग वस्तुओं के बेचने से। इससे यह भी जाना जा सकता है कि किसी भी अर्थव्यवस्था में उपभोग वस्तुओं के उद्योगों तथा पूँजीगत वस्तुओं के उद्योगों को किस अनुपात में विकसित किया जाना चाहिए क्योंकि औसत उपभोग प्रवृत्ति का सम्बन्ध उपभोग वस्तुओं से है जबकि औसत बचत प्रवृत्ति का सम्बन्ध पूँजीगत वस्तुओं से है।
4. कीन्स का यह सिद्धान्त पूर्ण रोजगार और आर्थिक स्थिरता के लिए आर्थिक नियम बनाने में सहायक होगा। बेरोजगारी की स्थिति में सरकार को प्रभावपूर्ण माँग (Effective Demand) में वृद्धि करने के लिए ऐसी नीति अपनाई जानी चाहिए जिससे आय का हस्तांतरण धनी वर्गों से निर्धन वर्गों की ओर हो सके, जिसके परिणामस्वरूप प्रभावपूर्ण माँग आय में वृद्धि होगी क्योंकि निर्धन वर्गों की सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति धनी वर्गों की अपेक्षा अधिक होती है।

5. कीन्स का उपभोग का सिद्धान्त दीर्घकालीन स्थिर मन्दी को स्पष्ट करता है। उपभोग प्रवृत्ति के स्थिर होने के कारण विनियोग के अवसर सीमित होते हैं और बचत बढ़ती जाती है इसलिए विकसित अर्थव्यवस्था में एक ऐसा समय आ जाता है जब वह अर्थव्यवस्था अपनी अति-बचतों (Over-Savings) को विनियोग करने में असमर्थ हो जाती है। इसी स्थिति को **मन्दी** कहते हैं।
6. यह सिद्धान्त पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (MEC) के गिरने की प्रवृत्ति की व्याख्या करने में सहायक है। जब उपभोग में वृद्धि, आय में वृद्धि की तुलना में धीमी गति से होता है तो कुल आय में कमी होती है जिसके कारण बाजार में वस्तुओं का आधिक्य (excess) हो जाता है। इस कारण से उत्पादक, उत्पादन घटाने लगते हैं जिससे भविष्य में पूँजीगत वस्तुओं की माँग कम हो जाती है और साथ ही पूँजी की सीमान्त उत्पादकता भी कम हो जाती है।
7. कीन्स के सिद्धांत का यह प्रस्ताव कि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति सकारात्मक होगी परन्तु एक से कम होगी। यह विश्लेषणात्मक और व्यावहारिक महत्व रखता है क्योंकि यह हमें बताता है कि उपभोग आय का एक बढ़ता हुआ फलन है परन्तु यह आय में वृद्धि के सौ प्रतिशत से भी कम बढ़ता है। **के. के. कुरिहारा (K.K Kurihara)** का यह मत है कि दो तथ्यों की व्याख्या करने में इसका विशेष महत्व है: ***पहली*** अपूर्ण रोजगार स्तर पर संस्थिति की सैद्धान्तिक स्थिति पर विचार करने में एवं ***दूसरी*** अत्यधिक विकसित अर्थव्यवस्थाओं में अपेक्षाकृत अधिक अस्थिरता पर विचार करने में।

8.3.6 उपभोग फलन की आलोचनाएँ (Criticism of Consumption Function)

1. **प्रो. हैजलिट (Prof. Hazllit)** ने कीन्स द्वारा प्रवृत्ति शब्द के अनुचित प्रयोग पर आपत्ति जताई है। प्रवृत्ति का अर्थ है झुकाव जबकि कीन्स ने प्रवृत्ति शब्द को आय के एक निश्चित भाग को व्यक्त करने के लिए उपयोग किया है। इसके साथ ही उपभोग प्रवृत्ति से यह पता नहीं चलता कि आय में से कितनी राशि खर्च की जायेगी।
2. इस नियम की आलोचना इस आधार पर भी की जाती है कि यह केवल अल्पकालीन नियम है क्योंकि दीर्घकाल में मनोवैज्ञानिक और संस्थागत तथ्यों में परिवर्तन हो जाने के कारण उपभोग प्रवृत्ति में भी परिवर्तन हो जाता है।
3. उपभोग केवल चालू आय (Current Income) के द्वारा ही प्रभावित नहीं होता। इस पर भूतकाल की आय, भविष्य में आय की प्राप्ति की सम्भावनाओं तथा सापेक्ष आय में अन्तरों का भी प्रभाव पड़ता है।
4. उपभोग व्यय का सम्बन्ध केवल आय से नहीं बल्कि धन के आकार अथवा आय और धन के बीच अनुपात से भी होता है।
5. कीन्स की उपभोग प्रकृति की व्याख्या को व्यावहारिक अथवा सांख्यिकीय प्रमाणों द्वारा सिद्ध नहीं किया जा सका है।
6. उपभोग की व्याख्या परिमाणात्मक दृष्टिकोण से की गयी है जबकि इसमें गुणात्मक पहलू पर विचार नहीं किया गया है।
7. **प्रो. गार्डनर एक्ले (Prof. Gardner Ackley)** के अनुसार कीन्स की व्याख्या ना तो आगमन (Indective) और ना ही निगमन (Dedective) तर्क का एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करती है।

8.4 उपभोग प्रवृत्ति (Consumption Propensity)

सबसे पहले आपने उपभोग फलन को समझ आईए अब इसकी प्रवृत्ति को समझते हैं।

8.4.1 उपभोग प्रवृत्ति का अर्थ (Meaning of Consumption Propensity)

कीन्स ने उपभोग फलन के लिए उपभोग प्रवृत्ति शब्द का प्रयोग किया हैं। अत: आय में परिवर्तन के कारण उपभोग में होने वाले परिवर्तन के सम्बन्ध को उपभोग प्रवृत्ति कहते हैं।

8.4.2 उपभोग प्रवृत्ति की परिभाषाएं (Definitions of Consumption Propensity)

प्रो.कुरिहारा (Kuriharu) के शब्दों में, ***'आय के एक निश्चित स्तर पर उपभोग पर जितना खर्च किया जाता है, उसे उपभोग कहा जाता है, जबकि आय के विभिन्न स्तरों को प्रकट करने वाली तालिका उपभोग प्रवृत्ति कहलाती है। (Consumption (C) represents the amount of consumer expenditure at a given level of income. Whereas the propensity to consume C/Y is a schedule of consumption expenditure at a various level of Income.)'***

एफ. एस. बूमैन (F. S. Brooman) के अनुसार, ***'उपभोग क्रिया यह बताती है कि उपभोक्ता, आय के प्रत्येक सम्भव स्तर पर उपभोग पदार्थों तथा सेवाओं पर कितना खर्च करना चाहेंगे। (Consumption function show what expenditure consumers will wish to make on consumer goods and services at each possible level of Income.)'***

डिलार्ड के अनुसार, ***'आय के विभिन्न स्तरों पर उपभोग की भिन्न मात्राओं को प्रकट करने वाली अनुसूची को उपभोग प्रवृत्ति की अनुसूची या संक्षेप में उपभोग प्रवृत्ति कहा जाता है।'***

8.4.3 उपभोग प्रवृत्ति के प्रकार (Types of Consumption Propensity)

उपभोग की प्रवृत्ति दों प्रकार की होती हैं, ***पहली*** औसत उपभोग प्रवृत्ति (Average Propensity to Consume) और ***दूसरी*** सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume)। इन दोनों प्रवृत्तियों को अब आप विस्तार से पढेंगे।

A. औसत उपभोग प्रवृत्ति (Average Propensity to Consume)

औसत उपभोग प्रवृत्ति से तात्पर्य आय के उस भाग से है जो प्रति इकाई उपभोग किया जाता है। किसी भी एक इकाई पर होने वाले उपभोग को उसकी औसत प्रवृत्ति का रूप दिया जाता हैं। सूत्र के रूप में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है:

$$\text{औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC)} = \frac{\text{उपभोग की मात्रा (C)}}{\text{आय की मात्रा (Y)}}$$

$$Average\ Propensity\ to\ Consume\ (APC) = \frac{Consumption\ (C)}{Income\ (Y)}$$

उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति की वार्षिक आय 200 रूपये है तो इनमें से वह 120 रूपये उपभोग पर व्यय करता है तो औसत उपभोग प्रवृत्ति होगी:

$$APC = \frac{120}{200} = \frac{3}{5} = 0.6$$

चित्र 8.1 में अक्ष OX पर आय एवं अक्ष OY पर उपभोग-व्यय को दर्शाया गया हैं। C उपभोग वक्र है। इस वक्र से यह स्पष्ट होता हैं की बिंदु S पर APC $= \frac{C}{Y} = \frac{80}{100} = 0.8$ एवं बिंदु T पर APC $= \frac{120}{200} = 0.6$ चित्र से यह स्पष्ट हो रहा हैं की जैसे-जैसे उपभोग वक्र ऊपर की ओर उठ रहा है, वैसे ही औसत उपभोग प्रवृत्ति कम होती जा रही है।

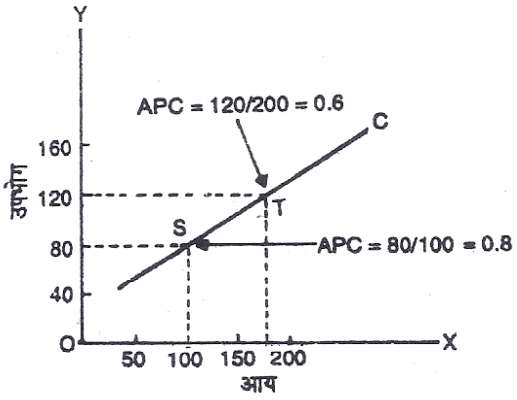

चित्र 8.1

B. सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume)

सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति, कुल उपभोग के स्तर में होने वाले परिवर्तन तथा कुल आय के स्तर में होने वाले परिवर्तन के बीच का अनुपात है अर्थात् इससे यह ज्ञात होता है कि आय में वृद्धि होने से परिणामस्वरूप उपभोग में कितनी वृद्धि होगी। सूत्र के रूप में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है।

$$\text{सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति} = \frac{\text{उपभोग में होने वाला परिवर्तन}}{\text{आय में परिवर्तन}}$$

$$Marginal\ Propensity\ to\ Consume = \frac{Change\ in\ Consumption}{Change\ in\ Income}$$

$$MPC = \frac{\Delta C}{\Delta Y}$$

उदाहरण के लिए चित्र 8.2 में यदि आय का स्तर 20 रूपये से बढ़कर 40 रूपये हो जाए तो इसके फलस्वरूप उपभोग व्यय बढ़कर 16 रूपये से बढ़कर 24 रूपये हो जाता हैं, आय में परिवर्तन (ΔY) 20 रूपये हैं एवं उपभोग में परिवर्तन (ΔC) 8 रूपये हैं। ऐसे में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति होगी:

$$MPC = \frac{8}{20} = \frac{2}{5} = 0.4$$

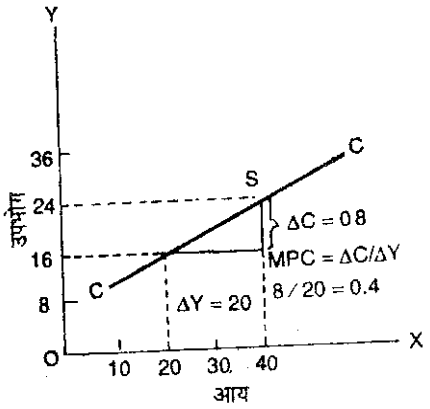

चित्र 8.2

ध्यान रहे सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume) धनात्मक होगी परन्तु एक से कम होगी अर्थात सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume) मूल्य शून्य से अधिक परन्तु एक से कम होगा (1>MPC>0)।

C. औसत उपभोग प्रवृत्ति तथा सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के बीच सम्बन्ध (Relation between Average Propensity to Consume and Marginal Propensity to Consume)

उपभोग की औसत प्रवृत्ति एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के बीच सम्बन्ध कुछ इस प्रकार हैं।

1. जब सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume) स्थिर होगी तो उपभोग फलन रैखिक एवं एक सीधी रेखा के रूप में होगा। जब सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति गिरती हुई होगी तो उपभोग-फलन गैर-रैखिक अथवा वक्र के रूप में होगा।
2. रैखिक उपभोग-फलन में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume) तो स्थिर होगी परन्तु औसत उपभोग प्रवृत्ति (Average Propensity to Consume) तभी स्थिर होगी जब रैखिक उपभोग फलन मूलबिन्दु (O) से प्रारम्भ हो अर्थात् न्यूनतम उपभोग शून्य के बराबर हो। सामान्यतया औसत उपभोग प्रवृत्ति आय की वृद्धि के साथ निरन्तर घटती है।
3. गैर रैखिक उपभोग-फलन में आय की वृद्धि के साथ सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) एवं औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC) दोनों में ही गिरावट होती हैं परन्तु सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति में होने वाली गिरावट की गति औसत उपभोग प्रवृत्ति की तुलना में अधिक तीव्र होती है।
4. यदि उपभोग फलन एक सीधी रेखा के रूप में है एवं आय के प्रत्येक स्तर पर उपभोग की मात्रा सकारात्मक है तो आय के शून्य स्तर पर औसत उपभोग प्रवृत्ति (APC) का मूल्य अनंत होगा और जैसे-जैसे आय का स्तर बढ़ेगा वैसे वैसे ही औसत उपभोग प्रवृत्ति में गिरावट होगी परन्तु इसका मूल्य सदैव सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) से अधिक रहेगा।

8.4.4 उपभोग प्रवृत्ति के निर्धारक तत्व (Determinants of Propensity to Consume)

उपभोग की प्रवृत्ति के बारे में तो आप पढ़ ही चुके हैं और साथ ही इसके प्रकारों को भी समझ गए हैं। इकाई में आगे अब आप उपभोग की प्रवृत्ति को निर्धारित करने वाले तत्वों के बारे में पढेंगे, यह ऐसे तत्व हैं जिन पर किसी व्यक्ति की उपभोग करने की इच्छा निर्भर करती हैं। कीन्स ने इन तत्वों को मुख्यतया दो भागों में विभाजित किया है: ***पहला*** व्यक्तिगत तत्व (Subjective Factors) और ***दूसरा*** वस्तुगत तत्व (Objective Factors)।

अब आप इन तत्वों को विस्तार से पढेंगे:

A. व्यक्तिगत तत्व (Subjective Factors) - इन तत्वों के अन्तर्गत कीन्स ने उन मनोवैज्ञानिक तत्वों की चर्चा की है जिसके कारण मनुष्य की उपभोग करने की इच्छा प्रभावित होती है। यह इस प्रकार है:

1. **सावधानी (Caution)-** लोग आकस्मिकताओं जैसे, बीमारी या दुर्घटना आदि के लिए अपनी आय का कुछ भाग नियमित रूप से बचाते हैं।
2. **दूरदर्शिता (Future Foresight)-** विवाह, शिक्षा एवं अन्य सामाजिक कार्य के लिए व्यक्ति अपनी आय का कुछ अंश बचाता है।
3. **लाभ (Profit)-** कुछ व्यक्ति लाभ कमाने के लिए कम खर्च करके अधिक बचत करते हैं।
4. **बेहतर जीवन स्तर (Better Standard of Living)-** कुछ व्यक्ति जीवन-स्तर ऊँचा उठाने के लिए अधिक खर्च करते हैं।
5. **आर्थिक स्वतंत्रता (Economic Independence)-** कुछ व्यक्ति धनराशि जमा करके आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र होना चाहते हैं।
6. **व्यावसायिक उद्देश्य (Business Objective)-** कुछ व्यक्ति व्यवसाय शुरू करने के लिए धन बचा कर चलते हैं।

   इसके अलावा कुछ ऐसे तत्व हैं जो कम्पनियों, निगमों एवं सरकारी संस्थाओं को बचत करने के लिए प्रेरित करते हैं, जैसे: ***पहला*** उद्यम (बड़े कार्य करने की इच्छा अथवा व्यापार को बढ़ाने की इच्छा), **दूसरा** तरलता पसन्दगी (आर्थिक संकट का सामना करने के लिए नगदी अपने पास रखना।) और ***तीसरा*** सुधार (कम्पनियाँ नई मशीनों और उपकरणों को लगाने के लिए बचत करती हैं।)

अल्पकाल में इन मनोवैज्ञानिक तत्वों में परिवर्तन सम्भव नहीं होता है। इसलिए उपभोग फलन अल्पकाल में प्राय: समान या स्थिर रहता है परन्तु कुछ कारणों से अल्पकाल में भी इन तत्वों में परिवर्तन हो सकता है, जैसे: सरकार की राजकोषीय नीति में परिवर्तन, ब्याज की दर में महत्वपूर्ण परिवर्तन, पूँजी के मूल्यों में परिवर्तन।

B. वस्तुगत तत्व (Objective Factors) - वस्तुगत तत्व ऐसे बाहरी तत्व हैं जिनमें कभी-कभी तेजी से परिवर्तन होता है एवं उनका प्रभाव उपभोग प्रवृत्ति पर पड़ता है। इस प्रकार के तत्व निम्नलिखित हैं:-

1. **आय (Income) -** उपभोग-प्रवृत्ति विशेष रूप से आय पर निर्भर करती है। जैसे-जैसे आय में वृद्धि होती है वैसे-वैसे उपभोग में वृद्धि होती है और जैसे ही आय कम हो जाती है वैसे ही उपभोग भी कम हो जाता है।
2. **मूल्य स्तर (Price Level) -** कोई उपभोक्ता किसी वस्तु के ऊपर कितना व्यय करेगा यह उस वस्तु के मूल्य पर बहुत अधिक निर्भर करता है। आय प्रभाव के कारण किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि उपभोक्ता की वास्तविक आय में कमी लाती है जिसके फलस्वरूप उपभोग में कमी आती है।
3. **वित्तीय नीति में परिवर्तन (Changes in Financial Policy)-** वित्तीय नीति में परिवर्तन, विशेष रूप से कर में परिवर्तनों का अधिक प्रभाव उपभोग की इच्छा पर पड़ता है। यदि आय पर कर की दर (Rate of Tax) बढ़ा दी जाए तो उपभोक्ता की आय प्रत्यक्ष रूप से कम हो जाएगी जिसके फलस्वरूप उपभोग पर व्यय भी कम हो जाएगा।
4. **ब्याज की दर (Rate of Interest) -** ब्याज की दर में वृद्धि होने पर किसी भी उपभोक्ता की बचत अधिक होगी तथा उपभोग की इच्छा कम होगी।
5. **ड्यूसेनबरी का दृष्टिकोण (Dusenberry's Approach)-** ड्यूसेनबरी के अनुसार उपभोग केवल वर्तमान वर्ष की आय का फलन नहीं है बल्कि उपभोक्ता की वर्तमान आय और इसके पूर्व की उच्चतम आय के अनुपात का भी फलन है। इसके अलावा ड्यूसेनबरी ने 'प्रदर्शन

प्रभाव' (Demonstration Effect) की चर्चा की जिसके अनुसार लोगों में अपने से धनी व्यक्ति के उपभोग को अनुकरण करने की प्रवृत्ति होती है।

6. **भविष्य में आय की सम्भावना (Expectation of Future Income) -** उपभोग प्रवृत्ति भविष्य में आय की सम्भावना पर भी निर्भर करती है। यदि भविष्य में लोगों को अधिक आय की सम्भावना हो तो वह वर्तमान आय में से बचत नहीं करेंगे जिसके फलस्वरूप उपभोग प्रवृत्ति अधिक होगी।

8.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. उपभोग फलन, आय एवं ..... वर्गों के सम्बन्ध को दर्शाता हैं। (उपभोग **या** बचत)
2. अर्थशास्त्री..... ने उपभोग का मनोवैज्ञानिक नियम दिया हैं। (प्रो. गार्डनर एक्ले **या** कीन्स)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति की सही समीकरण MPC = $\Delta C/\Delta Y$ हैं।
2. समय पश्चता की दृष्टि से उपभोग फलन के पाँच रूप हो सकते हैं।
3. सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति से तात्पर्य आय के उस भाग से है जो प्रति इकाई उपभोग किया जाता है।

8.6 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने उपभोग फलन के बारे में पढ़ा और यह जाना कि उपभोग फलन, उपभोग एवं आय के सम्बन्ध को दर्शाता हैं जैसे-जैसे आय बढती हैं उपभोग भी बढ़ता हैं। इकाई में आगे आपने उपभोग के विभिन्न रूप के बारे में पढ़ा जिसमें आपने जाना कि उपभोग के रूप को तीन भागों में बाटा गया जिसमें **पहला भाग** हैं समय पश्चता, इसकी दृष्टि से उपभोग फलन के दो रूप हो सकते हैं। ***पहला*** समयपश्चता विहीन उपभोग फलन और ***दूसरा*** समय पश्चता युक्त उपभोग-फलन, इन दोनों के बारे में आप इकाई में विस्तार से पढ़ चुके हैं। **दूसरा भाग** हैं आकृति की दृष्टि से उपभोग फलन के दो रूप हो सकते हैं, ***पहला*** रैखिक एवं ***दूसरा*** गैर रैखिक और **तीसरा भाग** हैं, समय की दृष्टि से जिसके अंतर्गत अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन उपभोग फलन आते हैं, इन सभी रूपों को आपने इकाई में विस्तार से पढ़ा।

इकाई में आगे आपने उपभोग की प्रवृत्तियों के बारे में पढ़ा जोकि मुख्य दों प्रकार की होती हैं, ***पहली*** उपभोग की औसत प्रवृत्ति (Average Propensity to Consume) और ***दूसरी*** सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume)। उपभोग की औसत प्रवृत्ति आय में होने वाले प्रति इकाई उपभोग को दर्शाती हैं एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति कुल आय में परिवर्तन के कारण कुल उपभोग में परिवर्तन को दर्शाती हैं। इन दोनों प्रवृत्तियों को आप समीकरण द्वारा भी समझ चुके हैं और साथ ही दोनों प्रवृत्तियों के बीच के सम्बन्ध को भी जान ही चुके हैं। इकाई में आगे आपने उपभोग प्रवृत्ति को निर्धारित करने वाले तत्वों के बारे में पढ़ा और जाना की यह तत्व व्यक्ति की उपभोग करने की इच्छा निर्भर करते हैं और यही वो तत्व हैं जिनके कारण कोई भी व्यक्ति उपभोग करता हैं। कीन्स ने इन तत्वों को मुख्यता दों भागों में बाटा जिसमे **पहला** हैं व्यक्तिगत तत्व (Subjective Factors) और **दूसरा** वस्तुगत तत्व (Objective Factors)। ***व्यक्तिगत तत्व*** मनोवैज्ञानिक तत्व हैं जो मुख्य छह प्रकार के होते हैं जिसमे **पहला** हैं सावधानी, **दूसरा** दूरदर्शिता, **तीसरा** लाभ, **चौथा** बेहतर जीवन स्तर, **पाँचवा** आर्थिक स्वतंत्रता एवं **छठा** व्यावसायिक उद्देश्य हैं। ***वस्तुगत तत्व*** बाहरी तत्व हैं जिसमे भी छह प्रकार के होते हैं इसमें **पहला** हैं आय, **दूसरा** मूल्य स्तर, **तीसरा** वित्तीय नीति में परिवर्तन, **चौथा** ब्याज की दर, **पाँचवा** ड्यूसेनबरी का दृष्टिकोण एवं **छठा** भविष्य में आय की सम्भावना शामिल होती हैं। इसी के साथ आपने उपभोग फलन के महत्व को जाना और समझा की यह किस तरह अर्थव्यवस्था में कार्य करता हैं एवं साथ ही आपने उपभोग फलन की आलोचनाओं को भी विस्तार से पढ़ा।

8.7 शब्दावली (Glossary)

- **ब्याज की दर (Rate of Interest):** यह वो दर होती हैं जिस पर बैंक या अन्य वित्तीय संस्थान ऋण देती हैं।
- **लाभ (Profit):** लागत से अधिक कीमत पर बेचने से प्राप्त धन को लाभ कहा जाता हैं।
- **उपभोग की औसत प्रवृत्ति (Average Propensity to Consume):** औसत उपभोग प्रवृत्ति, कुल उपभोग और कुल आय के अनुपात को दर्शाती है।
- **सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume):** सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति से तात्पर्य यह है कि किसी अर्थव्यवस्था में आय के स्तर में होने वाले एकल परिवर्तनों के प्रति उपभोग संवेदनशीलता से है।
- **गैर रैखिक (Non Linear):** गैर-रैखिक परिवर्तन वह परिवर्तन है जो कारण और प्रभाव के बीच सरल आनुपातिक संबंध पर आधारित नहीं होता है।
- **प्रदर्शन प्रभाव (Demonstration Effect) :** प्रदर्शन प्रभाव से तात्पर्य लोगों की अन्य लोगों द्वारा अपनाई गई उपभोग प्रवृत्तियों की नकल करने की आदत से है।

8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. उपभोग 2. कीन्स

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- एच.एल. आहूजा (2023) **उच्तर समष्टि अर्थशास्त्र**, विज़न आई.ऐ. ऐस.।
- ऐस. एन. लाल (2020) **समष्टिभावी आर्थिक विशलेषण**, लाल पब्लिशिंग।
- प्रो. बी.एल. ओझा एवं मनोज कुमार ओझा (2015) **समष्टि आर्थिक विशलेषण,** ऐस.बी.पी.डी पब्लिकेशन।
- एम. एल. झिंगन (2023) **समष्टि अर्थशास्त्र**, विज़न आई.ऐ. ऐस.।
- के. पी. जैन एवं के. एल. गुप्ता (2005) **मैक्रो अर्थशास्त्र**, नवयुग साहित्य सदन।

8.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Sethi, T. T. (2020) **Macro Arthshaastra,** Lakshmi Narain Publication.
- Jhingan, M. L. (2023) **Macro Economics**, VISION IAS.
- Oljha, B. L. (2015) **Macro Economics**, SBPD Publications.
- Ahuja, H. L. (2019) **Macroeconomics Theory and Policy**, S. Chand Publishing.
- Sinha, V. C. (2017) **Macro Economics**, SBPD Publishing house.

8.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. उपभोग फलन से आप क्या समझते हैं? इसकी प्रवृत्तियों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2. कीन्स द्वारा दिए गये उपभोग के मनोवैज्ञानिक नियम की विस्तार पूर्वक व्याख्या कीजिए।
3. उपभोग प्रवृत्ति के निर्धारक तत्वों को बताइए।

इकाई 9 निवेश फलन
(Investment Function)

9.1 प्रस्तावना (Introduction)
9.2 उद्देश्य (Objectives)
9.3 निवेश की अवधारणा (Concept of Investment)
9.4 निवेश के प्रकार (Types of Investment)
9.5 निवेश फलन (Investment Function)
9.6 निवेश फलन के निर्धारक तत्व (Determinant Factors of Investment Function)
9.7 निवेश फलन को प्रभावित करने वाले तत्त्व (Factors Affecting Investment Function)
9.8 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
9.9 सांराश (Summary)
9.10 शब्दावली (Glossary)
9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers of Practice Questions)
9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
9.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
9.14 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पहले की इकाई में आप उपभोग फलन के बारे में पढ़ चुके हैं, उपभोग फलन क्या होता हैं एवं कैसे कार्य करता हैं यह भी आप जान ही गए हैं। किसी भी अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ने के लिए निवेश की आवश्यकता पड़ती ही हैं, बिना निवेश के उत्पादन मुस्किल हैं और बिना उत्पादन के आय और रोजगार मुस्किल हैं। प्रस्तुत इकाई में आप निवेश फलन के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे, निवेश फलन क्या हैं और यह कैसे कार्य करता हैं यह जानेंगे। निवेश फलन के प्रकार के बारे में भी आप प्रस्तुत इकाई में विस्तार से एक-एक कर पढ़ेंगे और साथ ही यह भी समझेंगे की निवेश फलन को कौन-कौन से तत्व प्रभावित करते हैं। इसके अलावा आप इस इकाई में कुछ महत्वपूर्ण अवधारणाओं के बारे में भी जानेंगे जैसे पूँजी की सीमान्त उत्पादकता, ब्याज दर, औसत निवेश प्रवृत्ति, सीमान्त निवेश प्रवृत्ति आदि एवं यह भी समझेंगे की कौन-कौन से तत्व इन्हें प्रभावित करते हैं।

9.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- ✓ निवेश फलन के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ✓ निवेश फलन के विभिन्न प्रकार को जानेंगे।
- ✓ स्वायत्त निवेश एवं प्रेरित निवेश के मध्य अंतर को समझ सकेंगे।
- ✓ निवेश के महत्व समझ सकेंगे।
- ✓ निवेश फलन निर्धारक तत्वों के बारे में जानेंगे।

9.3 निवेश की अवधारणा (Concept of Investment)

निवेश का अर्थ (Meaning of Investment)

एक निश्चित अवधि में नए पूँजीगत सामान या पूँजीगत परिसंपत्तियों को खरीदने के लिए किए जाने वाले व्यय के प्रवाह को निवेश कहते हैं। पूँजीगत सामान या पूँजीगत परिसंपत्तियों में मशीन, उपकरण, निर्माण एवं स्टॉक शामिल होते हैं। अर्थशास्त्र में निवेश केवल नए पूँजीगत सामान या परिसंपत्तियों से सम्बन्ध रखता हैं नाकि किसी बॉण्ड या शेयर से क्योंकि इसकी खरीदारी पूँजी में कोई वृद्धि नहीं करती हैं। **कीन्स (Keynes)** के अनुसार, निवेश का अर्थ वास्तविक निवेश से हैं अर्थात नई पूँजीगत वस्तुओं का उत्पादन करना तथा उन्हें खरीदने के लिए व्यय करना। कीन्स (Keynes) के अनुसार, वास्तविक निवेश में मशीनें, उपकरण, औजार एवं उपकरण, निर्माण-कार्य, वस्तुओं का स्टॉक तथा शुद्ध विदेशी निवेश शामिल हैं।

निवेश की परिभाषाएं (Definitions of Investment)

निवेश की महत्वपूर्ण परिभाषा कुछ इस प्रकार हैं:

कीन्स (Keynes) के अनुसार ***"विनियोग से अभिप्राय पूँजीगत पदार्थों में होने वाली वृद्धि से हैं। (Investment refers to the increment of capital equipment)"***

स्टोनियर तथा हेग (Stonier and Hague) के अनुसार ***"विनियोग से हमारा अभिप्राय चालू प्रतिभूतियो, बॉण्डों, हिस्सों को खरीदने से नहीं हैं वरन् इससे हमारा अभिप्राय नई फैक्टरियों, मशीनों आदि के खरीदने से हैं। (By investment we do not mean the purchase of existing papers securities bonds, debentures or equities but the purchase of new factories, machines and the .like)"***

श्रीमती जॉन रोबिन्सन (Mrs. Joan Robinson) के अनुसार, ***"विनियोग से अभिप्राय वस्तुओं के वर्तमान भण्डार में वृद्धि करने से हैं। (Investment means making an addition to the stock of goods in existence)"***

निवेश का महत्व (Importance of Investment)

किसी देश की आर्थिक गतिविधियों को निर्धारित करने में निवेश सदैव महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। निवेश, आय एवं रोजगार के सिद्धांत में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। किसी देश की अर्थव्यवस्था के विकास में निवेश की तीन महत्वपूर्ण भूमिकाएँ कुछ इस प्रकार हैं।

1. निवेश को माँग का एक महत्वपूर्ण स्रोत माना जाता हैं। प्रत्येक अर्थव्यवस्था के अंतर्गत कुल माँग में, कुल उपभोग व्यय और कुल निवेश व्यय शामिल होते हैं। जितना अधिक निवेश होगा उतना अधिक उत्पाद होगा। अत: उत्पाद के साथ-साथ आय भी बढ़ेगी जिससे माँग बढ़ेगी। निवेश द्वारा आय में उतार-चढ़ाव को भी स्थिर किया जा सकता हैं।
2. अपनी अल्पकालिक परिवर्तनशीलता के कारण निवेश, समग्र माँग में होने वाले परिवर्तनों के अध्ययन का मुख्य हिस्सा हैं। यह उन नीतिगत उपायों का भी मुख्य हिस्सा हैं जोकि इन परिवर्तनों को समाप्त करने या कम करने के लिए अपनाए जा सकते हैं। निवेश, आय और रोजगार के स्तर को संतुलित करने में मदद करता हैं। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि निवेश अत्यधिक अस्थिर (Highly volatile) होता हैं। यह समझना भी आवश्यक हो जाता हैं कि पूँजीगत वस्तुओं के उत्पादन में उतार-चढ़ाव की तुलना में उपभोग वस्तुओं के उत्पादन में उतार-चढ़ाव कहीं अधिक गंभीर हैं।
3. निवेश द्वारा ही अर्थव्यवस्था की उत्पादक क्षमता का विस्तार होता हैं। निवेश के अंतर्गत पूँजीगत वस्तुओं का अधिग्रहण या खरीद एवं पूँजीगत वस्तुओं का अधिक उत्पादन होता हैं। निवेश अर्थव्यवस्था की उत्पादक क्षमता में वृद्धि करता हैं और इस प्रकार यह विकास की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं।

9.4 निवेश के प्रकार (Types of Investment)

निवेश क्या होता हैं यह आप पढ़ चुके हैं एवं समझ भी गए हैं। निवेश के विभिन्न रूप हैं, जैसे शुद्ध निवेश, कुल निवेश, स्टॉक निवेश, सार्वजनिक निवेश, स्वायत्त निवेश, प्रेरित निवेश आदि। अब आप एक-एक कर विस्तार से निवेश के विभिन्न प्रकारों को पढ़ेंगे।

1. **कुल निवेश (Gross Investment) -** कुल निवेश से तात्पर्य किसी एक वर्ष की समयावधि के दौरान उत्पादित नई पूँजीगत वस्तुओं से होता हैं। कुल निवेश में मूल्यह्रास (depreciation) या प्रतिस्थापन-निवेश (replacement investment) शामिल होता हैं।
2. **शुद्ध निवेश (Net Investment) -** किसी वर्ष के अंत में पूँजीगत वस्तुओं की मात्रा उस वर्ष की शुरुआत की पूँजीगत वस्तुओं की मात्रा की तुलना में अधिक हैं तो इस वृद्धि को शुद्ध निवेश कहा जाता हैं। शुद्ध निवेश से तात्पर्य किसी एक वर्ष की समयावधि के दौरान पूँजीगत वस्तुओं में शुद्ध या वास्तविक वृद्धि से हैं। इसके अंतर्गत मूल्यह्रास (depreciation) या प्रतिस्थापन-निवेश (replacement investment) शामिल नहीं होती हैं।
3. **स्टॉक या भण्डार निवेश (Stock or Inventory Investment) -** एक समय अवधि में किसी उत्पादक के पास रखे हुए स्टॉक या भण्डार में हुई वास्तविक वृद्धि को भी निवेश माना जाता हैं। अत: इन्हें पूँजीगत वस्तुएँ समझा जाता हैं लेकिन यह आवश्यक नहीं हैं कि इन पूँजीगत वस्तुओं में वृद्धि हुई हों। इनके अन्तर्गत उपभोग वस्तुओं, खाद्यान्न के स्टॉक एवं विभिन्न प्रकार की अन्य मदें भी शामिल हो सकती हैं लेकिन इन वस्तुओं को निवेश तभी माना जाता है जब वे व्यापारियों के पास स्टॉक में हों, उपभोक्ताओं द्वारा खरीदे जाने के बाद नहीं।
4. **निर्माण निवेश (Construction Investment) -** निर्माण निवेश के अंतर्गत कई प्रकार के निर्माण शामिल होते हैं जैसे कि निवास-मकानों का निर्माण, फैक्ट्रियों का निर्माण, स्टोर, दुकानें, ऑफिस इमारतों और निजी गोदामों का निर्माण इस सभी प्रकार के निर्माणों निवेश कहा जाता हैं। इन सभी के निर्माण से पूँजीगत सम्पत्तियों या स्टॉक में शुद्ध या वास्तविक वृद्धि होती हैं।
5. **सार्वजनिक निवेश (Public Investment) -** सार्वजनिक निवेश के अंतर्गत केंद्र सरकार एवं राज्य सरकारों या स्थानीय अधिकारियों और सरकारी निगमों द्वारा किए गए निवेश शामिल होते हैं। सार्वजनिक निवेश, किसी भी अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण भाग हैं और यह निवेश देश की आधारभूत

संरचना में सहयोग प्रदान करता हैं। इसके अंतर्गत सड़कें, बाँध, पुल, बंदरगाह, भवन आदि शामिल होते हैं।

इसके दो अन्य प्रकार भी है एक है स्वायत्त निवेश दूसरा है प्रेरित निवेश। जिसको आप निवेश फलन के अंतर्गत पढ़ेगे।

9.5 निवेश फलन (Investment Function)

स्वायत्त निवेश (Autonomous Investment) -

स्वायत्त निवेश बिना लाभ एवं हानि को ध्यान में रखकर किया जाता हैं। यह निवेश आय के स्तर (income level) में होने वाले परिवर्तनों पर निर्भर नहीं करता हैं। स्वायत्त निवेश, सरकार द्वारा सार्वजनिक कल्याण अथवा विकास के लिए किया जाता हैं और इसका सम्बन्ध जनसंख्या वृद्धि, तकनीकी प्रगति आदि से होता हैं। स्वायत्त निवेश, आय के प्रति बेलोच (inelastic) होती हैं और यह माँग में परिवर्तन से प्रभावित होने के बजाय माँग को प्रभावित करता हैं। सार्वजनिक नीति के अन्तर्गत इमारतें, बांधों, सड़कों, नहरों, विद्यालयों एवं अस्पतालों आदि पर किया गया व्यय **स्वायत्त निवेश** हैं। दीर्घकाल में सभी प्रकार का निजी निवेश स्वायत्त बन जाता हैं क्योंकि उसे **बहिर्जात घटक** (Exogenous Component) प्रभावित करते हैं।

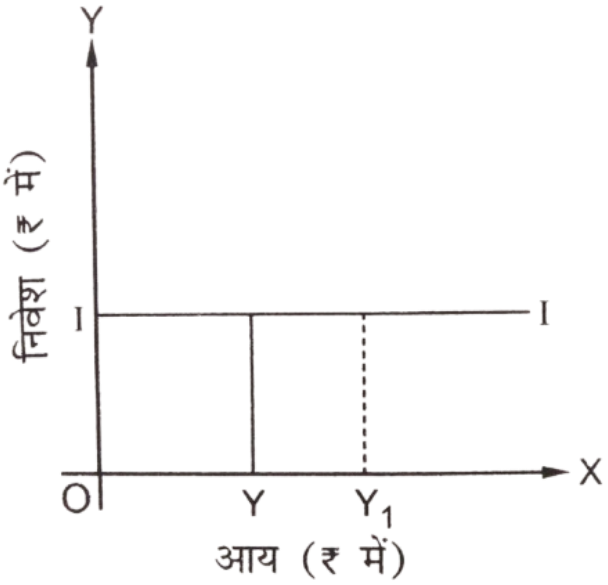

चित्र 9.1

जैसा कि उपरोक्त चित्र में देखा जा सकता है की निवेश की मात्रा OI पर स्थिर है चाहे अर्थव्यवस्था में आय का स्तर जो भी हो।

प्रेरित निवेश (Induced Investment) -

लाभ कमाने के उद्देश्य से किए गए निवेश को **प्रेरित निवेश** और **निवेश फलन** कहा जाता हैं। यह आय सापेक्ष होता हैं एवं आय बढ़ने के साथ बढ़ता हैं और आय के घटने के साथ घटता हैं। प्रेरित निवेश, लाभ या आय से प्रभावित होता हैं जब आय में वृद्धि होती है तब उपभोग की गई वस्तु की माँग बढ़ती हैं जिसको पूरा करने के लिए निवेश भी बढ़ता हैं।

निवेश, आय का फलन हैं

$$\text{अर्थात्} \; I = f(Y)।$$

आय के साथ सापेक्ष संबंध होने के कारण आय में वृद्धि अथवा कमी के साथ **प्रेरित निवेश** भी बढ़ता या घटता हैं।

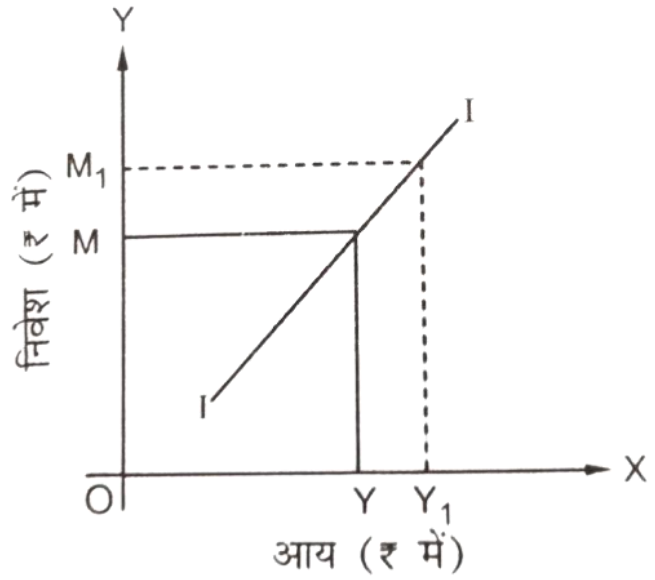

चित्र 9.2

जैसा कि उपरोक्त चित्र में देखा जा सकता है की प्रेरित निवेश वक्र II बाए से दाए ओर ऊपर की ओर जा रहा है जोकि दर्शाता है कि जब OY से OY_1 तक वृद्धि होती है तो निवेश की मात्रा OM से OM_1 तक बढ़ जाता हैं।

प्रेरित निवेश से जुड़ी दों अवधारणाएं हैं, ***पहली*** औसत निवेश प्रवृत्ति और ***दूसरी*** सीमान्त निवेश प्रवृत्ति, यह दोनों अवधारणाओं कुछ इस प्रकार हैं:

औसत निवेश प्रवृत्ति (Average Propensity to Investment): निवेश का आय से अनुपात ***औसत निवेश प्रवृत्ति*** कहलाता हैं, अर्थात I/Y ।इसके अंतर्गत यह देखते हैं कि औसत निवेश प्रवृत्ति के अंतर्गत आय की प्रति इकाई में कितना निवेश हुआ हैं।

सीमान्त निवेश प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Investment): निवेश में परिवर्तन का आय में परिवर्तन से अनुपात ***सीमान्त निवेश प्रवृत्ति*** कहलाता हैं अर्थात$\Delta I/\Delta Y$ । प्राय: प्रेरित निवेश निजी उद्यमियों द्वारा लाभ से प्रेरित होकर किया जाता हैं।

आईए अब इन दोनों निवेशों के मध्य के अंतर को जाने

तालिका 9.1 स्वायत्त निवेश एवं प्रेरित निवेश के बीच अंतर

स्वायत्त निवेश (Autonomous Investment)	प्रेरित निवेश (Induced Investment)
स्वायत्त निवेश, आय पर निर्भर नहीं होती।	प्रेरित निवेश, आय पर निर्भर होती हैं।
स्वायत्त निवेश स्थिर रहती हैं और यह आय में परिवर्तन आने से परिवर्तित नहीं होती हैं।	प्रेरित निवेश, आय में परिवर्तन होने से परिवर्तित होती हैं।
यह लाभ से प्रभावित नहीं होती हैं।	यह लाभ से प्रभावित होती हैं।
स्वायत्त निवेश, सरकारी नीतियों और तकनीकी प्रगति जैसे कारकों से प्रेरित होती हैं।	प्रेरित निवेश, आर्थिक गतिविधि और आय के स्तर पर निर्भर करती हैं।

9.6 निवेश फलन के निर्धारक तत्व (Determinant Factors of Investment Function)

निवेश या निवेश फलन को निर्धारित करने वाले दों मुख्य निर्धारक तत्व हैं, ***पहला*** पूँजी की सीमान्त उत्पादकता और ***दूसरा*** ब्याज दर। इन दोनों तत्वों को आप अब एक-एक कर विस्तार से पढ़ेंगे और जानेंगे की यह किस प्रकार निवेश फलन को प्रभावित करते हैं।

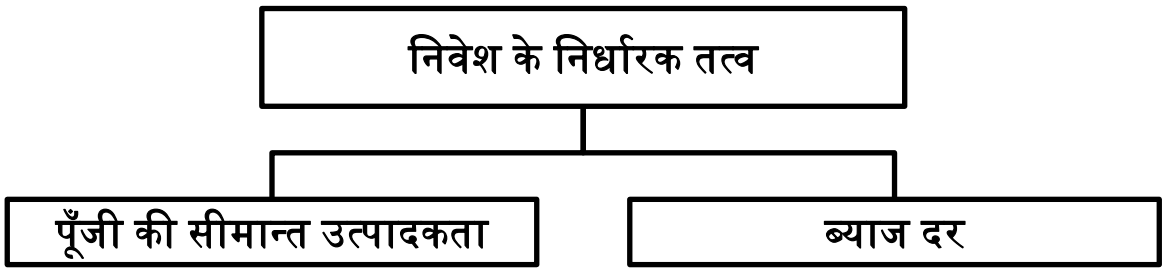

1. पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (Marginal Efficiency of Capital)

पूँजी की सीमान्त उत्पादकता नए निवेश पर अपेक्षित प्रतिफल दर (Required rate of return) हैं। नए निवेश से अपेक्षित लाभ का अनुमान पूँजी की सीमा के रूप में लगाया जाता हैं।

प्रो. फिशर (Prof. Fisher) के अनुसार ***"पूँजी की सीमान्त उत्पादकता लागत को निकालकर प्राप्त होने वाला वह प्रतिफल हैं जो पूँजी परिसम्पत्ति की सीमान्त इकाई से प्राप्त होता हैं। (The Marginal Productivity of capital is the return obtained from the marginal unit of capital asset after subtracting cost.)"***

प्रो. कुरिहारा (Kurihara) के अनुसार ***"पूँजी की सीमान्त उत्पादकता किसी पूँजी परिसम्पत्ति की भावी पूर्ति और कीमत का अनुपात हैं। (The Marginal Productivity of capital is the ratio of the future supply price of capital asset.)"***

पूँजी के सीमान्त उत्पादकता से अर्थ किसी पूँजीगत वस्तु में आई लागत की तुलना में उसकी एक अतिरिक्त इकाई का उपयोग करके प्राप्त होने वाले **लाभ की अनुमानित (estimated) दर** से हैं। अत: पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को **लाभ की अनुमानित दर** कहा जा सकता हैं। इसे आप उदाहरण की मदद से ठीक से समझ पाएंगे।

उदाहरण के लिए मान लीजिए कि एक मशीन की पूर्ति की कीमत 4000 रुपये हैं। एक वर्ष तक यह मशीन काम करती हैं परन्तु एक वर्ष बाद यह काम करने योग्य नहीं रहती। उत्पादक ने एक वर्ष में इस मशीन से 4,400 रुपये कमाने का अनुमान लगाया हैं जिसे अनुमानित आय (Prospective yield) कहा जाता हैं। उत्पादक को मशीन से 400 रूपये का लाभ (4,400 - 4,000 = 400) प्राप्त हो रहा था। उत्पादक को यह लाभ 4000 रूपये की पूँजी से प्राप्त हुआ हैं इसलिए यहाँ पूँजी की सीमान्त उत्पादकता $\frac{400}{4000} \times 100 = 10\%$ होगी।

उपरोक्त उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि पूँजी की सीमान्त उत्पादकता दों तत्वों पर निर्भर करती हैं जिसमें ***पहला*** अनुमानित आय (Prospective yield) और ***दूसरा*** पूँजी की आपूर्ति कीमत (Supply price of capital) हैं।

पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को निर्धारक तत्व (Determinants of Marginal Efficiency of Capital)

जैसा की आप जान ही गए हैं पूँजी की सीमान्त उत्पादकता के दों निर्धारक तत्व हैं। इन दोनों को आप अब एक-एक कर विस्तार से पढ़ेंगे।

A. अनुमानित आय (Prospective yield)

जब भी कोई उत्पादक पूँजीगत व्यय करता हैं, तो यह अनुमान लगाना आवश्यक होता हैं कि जिस पूँजीगत वस्तु (मशीन) पर वह पैसा खर्च कर रहा हैं तो उसके उपयोग से मशीन के जीवनकाल के दौरान उसे कितना **शुद्ध आगम** (Net Revenue) प्राप्त होगा। **शुद्ध आगम** का अर्थ मशीन के जीवनकाल के दौरान उसके उपयोग से उत्पादित वस्तुओं की बिक्री में होने वाली सकल या कुल आय और परिवर्तनीय लागतों (कच्चा माल, मजदूरी आदि) से हैं और इसे **शुद्ध राजस्व प्रवाह** (Net Revenue Flow) भी कहा जाता हैं। आइए अब यह जानेंगे की अनुमानित आय किस विधि द्वारा एवं किस प्रकार निकाली जाती हैं।

अनुमानित आय को निकालने के लिए $PY = Q1 + Q2 + Q3 + Q4 + \ldots\ldots + Qn$ समीकरण का उपयोग किया जाता हैं।

उपरोक्त समीकरण में,

PY अनुमानित आय हैं और $Q1 + Q2 + Q3 + Q4 + \ldots\ldots + Qn$ प्रति वर्ष मिलने वाली अनुमानित आय हैं। इस समीकरण को आप उदाहरण से बेहतर समझ पाएंगे।

मान लीजिए, एक मशीन का जीवनकाल 3 वर्ष का हैं, उत्पादक ने तीनों वर्ष ने मशीन के उपयोग से अलग-अलग आय प्राप्त होने का अनुमान लगाया। ***प्रथम वर्ष*** मशीन के उपयोग से 1,750 रूपये आय प्राप्त होने का अनुमान लगाया, ***द्वितीय वर्ष*** मशीन के उपयोग से 1,450 रुपये आय प्राप्त होने का अनुमान लगाया और ***तृतीय वर्ष*** उत्पादक को मशीन के उपयोग से 1,200 रुपये आय प्राप्त होने का अनुमान लगाया।

उत्पादक की अनुमानित आय $PY = Q1 + Q2 + Q3 + Q4 + \ldots\ldots + Qn = 1{,}750 + 1{,}450 + 1{,}200 = 4400$ रूपये होगी।

B. पूँजी की आपूर्ति कीमत (Supply Price of Capital)

पूँजी की सीमान्त उत्पादकता का दूसरा निर्धारक तत्व पूँजी की आपूर्ति कीमत (Supply price of capital) हैं। अर्थशास्त्र में पूँजी की आपूर्ति कीमत का अर्थ किसी पूँजीगत वस्तु के खरीदने से नहीं हैं बल्कि यहाँ इसका अर्थ मौजूदा पूँजीगत वस्तु जैसे कि मशीन को बिल्कुल उसी प्रकार की नई मशीन से बदले जाने की लागत से हैं। पूँजी की आपूर्ति कीमत को **पुनः स्थापन लागत** (Replacement Cost) भी कहते हैं।

आप पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को अब समझ चुके हैं एवं इसके निर्धारक तत्वों को भी आप जान गए हैं। पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को नीचे दी गई समीकरण द्वारा निकाला जा सकता हैं :

$$\text{पूँजी की सीमान्त उत्पादकता} = \frac{\text{अनुमानित आय}}{\text{पूँजी की आपूर्ति कीमत}}$$

$$\text{Marginal Efficiency of Capital} = \frac{\text{Prospective yield}}{\text{Supply price of capital}}$$

2. ब्याज दर (Interest Rate)

निवेश या निवेश फलन को निर्धारित करने वाले पहले तत्व पूँजी की सीमान्त उत्पादकता के बारे में आप पढ़ चुके हैं, निवेश या निवेश फलन को निर्धारित करने वाला दूसरा तत्व ब्याज दर हैं। ब्याज दर का निर्धारण मुद्रा की माँग एवं मुद्रा की पूर्ति द्वारा होता हैं। मुद्रा की माँग से तात्पर्य तरलता पसन्दगी (Liquidity preference) से हैं, मुद्रा को तरल (cash) रूप में रखने को **तरलता पसन्दगी** कहा जाता हैं। कीन्स (Keynes) ने तरलता पसन्दगी के तीन उद्देश्य दिए हैं ***पहला*** लेन-देन उद्देश्य (Transaction motive), ***दूसरा*** सतर्कता उद्देश्य (Precautionary motive) और ***तीसरा*** सट्टा उद्देश्य (Speculative motive)। कीन्स के अनुसार, ब्याज की दर से तात्पर्य एक निश्चित अवधि के लिए तरलता (Liquidity or cash) छोड़ने पर प्राप्त मुआवज़े (compensation) से हैं।

अल्पावधि में, जब मुद्रा आपूर्ति स्थिर होती हैं तो ब्याज दर मुख्य रूप से तरलता पसन्दगी पर निर्भर करती हैं। तरलता पसन्दगी जितनी अधिक होगी उतनी ही अधिक ब्याज की दर होगी।

आइए अब पूँजी की सीमान्त उत्पादकता एवं ब्याज दर के बीच के सम्बन्ध को समझते हैं एवं यह भी जानते हैं कि यह दोनों तत्व किस प्रकार निवेश या निवेश फलन पर प्रभाव डालते हैं।

MEC = ब्याज दर, निवेश पर निष्क्रिय प्रभाव

MEC > ब्याज दर, निवेश पर अनुकूल प्रभाव

MEC < ब्याज दर, निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव

पूँजी की सीमान्त क्षमता (Marginal Efficiency of Capital) एवं ब्याज दर एक दूसरे से अलग अथवा स्वाधीन हैं परन्तु दोनों का प्रभाव निवेश या निवेश फलन पर भी पड़ता हैं क्योंकि कीन्स ने पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को परिवर्तनशील तत्व माना हैं इसलिए इसे निवेश या निवेश फलन का अधिक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व माना जाता हैं।

9.8 निवेश फलन को प्रभावित करने वाले तत्त्व (Factors affecting Investment Function)

इस इकाई में अब आप निवेश फलन को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों के बारे में एक-एक कर विस्तार से पढ़ेंगे। जैसा कि आप जान ही गए हैं की स्वायत्त निवेश स्थिर रहता हैं। अत: इसमें कोई भी परिवर्तन नहीं होता हैं इसलिए हम प्रेरित निवेश को प्रभावित करने वाले तत्वों के बारे में जानेंगे। प्रेरित निवेश को प्रभावित करने वाले तत्वों को दो मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। ***पहला*** अंतर्जात तत्व (Endogenous Factors) एवं ***दूसरा*** बहिर्जात तत्व (Exogenous Factors)। इन दोनों तत्वों को आप एक-एक कर अब विस्तार से पढ़ेंगे।

A. अंतर्जात तत्व (Endogenous Factors)

आर्थिक प्रणाली के भीतर पाए जाने वाले तत्वों को अंतर्जात तत्व कहते हैं ये अल्पावधि में भी निवेश फलन में परिवर्तन ला सकते हैं। यह तत्व मुख्यता **छह** प्रकार के होते हैं, इन्हें आप अब एक-एक कर समझेंगे।

1. **आय का स्तर (Income Level) -** वर्तमान अवधि में प्राप्त आय का स्तर एवं भविष्य में उच्च आय की उम्मीद निवेश के लिए शक्तिशाली प्रोत्साहन का कार्य करती हैं और यह निवेश फलन को ऊपर की ओर स्थानांतरित करते हैं। वहीं दूसरी ओर, यदि आय या निवेश से मिलने वाले प्रतिफल का स्तर कम हो तो निवेश घटने लग जाता हैं। यदि उद्यमियों को लगता है कि मौजूदा अवधि में आय में परिवर्तन की दर पिछली अवधि की तुलना में कम हुई है तो निवेश कम होने लग जाता हैं। वहीं दूसरी ओर अगर वर्तमान अवधि में आय में परिवर्तन की दर पिछली अवधि की तुलना में बढ़ी हैं तब उद्यमी भविष्य में भी निवेश व्यय बढ़ाने के इच्छुक होंगे।
2. **उपभोक्ता माँग का स्तर एवं झुकाव (Level and Trend of Consumer Demand) -** यदि उपभोक्ता माँग का वर्तमान स्तर उच्च है तो उपभोग वस्तुओं पर उच्च कुल व्यय किया जाएगा जोकि लाभ की संभावना को बढ़ाएगा एवं अतिरिक्त निवेश किया जाएगा। लेकिन जब उपभोक्ता की माँग में कमी आती हैं तो नए निवेश के प्रति उत्साह कम हो जाएगा एवं निवेश घट जाएगा। एक अन्य महत्वपूर्ण प्रभाव उपभोक्ता माँग का झुकाव है। यदि भविष्य में माँग की दर में गिरावट की प्रवृत्ति है या माँग केवल अस्थायी है तो निवेश हतोत्साहित हो जाएगा एवं निवेश घट जाएगा।
3. **कीमत स्तर (Price Level) -** अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति की स्थिति आमतौर पर निवेश की मात्रा में वृद्धि का कारण होती है क्योंकि मुद्रास्फीति में उद्यमियों को अप्रत्याशित लाभ प्राप्त होने की उम्मीद होती है। परन्तु मुद्रास्फीति की स्थितियों का हानिकारक प्रभाव भी पड़ता है खासकर तब जब पूँजीगत संपत्तियों की कीमतों में वृद्धि से व्यावसायिक फर्मों का मुनाफा कम हो जाए।
4. **मौद्रिक मजदूरी दरें एवं अन्य कारक कीमतें (Money Wage Rate and other Factor Price) -** निवेश पर मजदूरी दरों एवं उत्पादन कारकों की कीमतों में आने वाले अल्पकालिक (temporary) बदलाव का भी प्रभाव पड़ता है। कुल माँग में मजदूरी दर में कटौती के कारण कमी

आती है। अत: निवेश की मात्रा कम होने की संभावना है। यदि वेतन में धीरे-धीरे गिरावट होने दी जाए तो इससे निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। ऐसी स्थिति में उद्यमी अपनी निवेश योजनाओं को स्थगित कर देते हैं। यदि वेतन वृद्धि की अनुमति दी जाती है तो इससे उद्यमियों की आय कम हो जाएगी और नए निवेश के लिए उनकी प्रेरणा में काफी कमी आ सकती है। इसी प्रकार, श्रमिकों की तुलना में पूंजीपतियों, भूमि मालिकों और उद्यमशील वर्गों की आय में सापेक्ष परिवर्तन से उत्पादन के विभिन्न साधनों में प्रतिस्थापन हो जाएगा।

5. **शेयर बाजार की कीमतों की दिशा (Course of Stock Exchange Prices) -** उद्यमियों के द्वारा निवेश का निर्णय शेयर बाजार और बाजार में सट्टेबाजों की गतिविधियों से भी प्रभावित होता हैं। वर्तमान में शेयर बाजार में जो आशावाद या निराशावाद की स्थिति पाई जाती है उसका निवेश पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यदि अल्पकालिक शेयर के मूल्य की गतिविधियाँ प्रतिकूल हैं तो सट्टेबाज भविष्यवाणी करते हैं कि निकट भविष्य में यह प्रवृत्ति जारी रहेगी या नहीं। इस तरह के पूर्व अनुमान पूँजी की मात्रा बढ़ाने में और ज्यादा कठिनाइयाँ पैदा करते हैं। इससे कीमतों में बदलाव अधिक तेजी से होता है।

B. बहिर्जात तत्व (Exogenous Factors)

निवेश फलन कई दीर्घकालिक गतिशील बहिर्जात कारकों से प्रभावित होता है। बहिर्जात तत्व आय स्तर से स्वतंत्र हैं। यह कारक अर्थव्यवस्था के बाहर से उत्पन्न होते हैं और पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (MEC) में आने वाले परिवर्तन का कारण बनते हैं। यह तत्व कुछ इस प्रकार हैं:

1. **तकनीकी आविष्कार और नवप्रवर्तन (Technical Inventions and Innovations) -** तकनीकी प्रगति नए आविष्कारों और नवाचारों में प्रकट होती है इसके अंतर्गत पुराने उत्पादों, मशीनों, यंत्रों में सुधार करना, नए उत्पादों को बाजार में लाना, नए बाजारों में बेचना एवं संगठन में बदलाव लाना आदि शामिल होते हैं। यह निवेश के लिए एक बहुत शक्तिशाली प्रोत्साहन प्रदान करते हैं।
2. **प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources) -** उद्यमियों की दीर्घकालिक निवेश योजनाएं कच्चे माल के नए स्रोतों की खोज एवं वास्तव में उपयोग किए गए या संभावित संसाधनों में बदलाव से काफी प्रभावित होती हैं। नई खदानों की खोज एवं अन्य कच्चे माल के अधिक उत्पादन की संभावनाओं से उद्यमियों में अधिक आत्मविश्वास पैदा होता है जिससे निवेश बढ़ता हैं।
3. **जनसंख्या की वृद्धि और बनावट (Growth and Composition of Population) -** इस गतिशील तत्व से निवेश फलन में बदलाव भी उत्पन्न होता है। भविष्य में जनसंख्या वृद्धि की संभावना का निवेश पर दो कारणों से अनुकूल प्रभाव पड़ता है। **पहला** उपभोग वस्तुओं की माँग में वृद्धि होने से पूँजीगत वस्तुओं की माँग में वृद्धि होना और **दूसरा**, जनसंख्या वृद्धि का अधिक श्रम उपलब्ध कराना। इसके साथ ही उत्पादन बढ़ाने के लिए पूँजी का उपयोग भी बढ़ाया जाता है। जनसंख्या की संरचना में परिवर्तन विभिन्न प्रकार की उपभोग वस्तुओं की माँग में सापेक्ष परिवर्तन निर्धारित करते हैं।
4. **श्रम बाज़ार की स्थितियाँ (Labor Market Conditions) -** निवेश फलन श्रम बाजार की स्थितियों से काफी प्रभावित होते हैं। हड़तालों एवं तालाबंदी, श्रमिक संगठनों की ताकत और नियोक्ताओं के प्रति श्रमिक संघ नेतृत्व का रवैया अर्थव्यवस्था में औद्योगिक शांति को निर्धारित करता है। इनके परिणामस्वरूप ही निवेश बढ़ता या घटता हैं।
5. **उपभोक्ताओं का मनोविज्ञान (Psychology of Consumer) -** उपभोक्ता के मनोविज्ञान का भी निवेश निर्णय पर प्रभाव पड़ता हैं, यदि उपभोक्ता का स्वाद एवं आदतें बार-बार बदलती हैं तो बाजार में तेजी से नई और बेहतर नवीनता वाली वस्तुएं लाना आवश्यक हो जाता हैं। इसके फलस्वरूप पूँजी भण्डार में निरन्तर वृद्धि करना आवश्यक होगा। लेकिन जब लंबे समय तक माँग में कोई बदलाव नहीं होता है और उपभोक्ता उपभोग के नए प्रतिरूप को अपनाने के इच्छुक नहीं हैं तो निवेश दर कम होती जाएगी।

6. **राजनैतिक वातावरण (Political Environment) -** यदि किसी देश में राजनीतिक जीवन शांतिपूर्ण, व्यवस्थित, सौहार्दपूर्ण एवं आंतरिक अराजकता तथा विदेशी आक्रमण के भय से मुक्त है तो दीर्घकाल में उद्यमी अपनी निश्चित योजनाओं के अनुसार निवेश बढ़ाते रहेंगे। लेकिन जब राजनैतिक वातावरण में गड़बड़ होती हैं तो वहाँ हिंसा एवं अनिश्चितता पाए जाते हैं तब निवेश फलन के घटने के आसार ज्यादा होते हैं।
7. **विदेशी व्यापार (Foreign Trade) -** किसी देश के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का वर्तमान स्तर, उस देश का अन्य देशों के साथ व्यापार के विस्तार की संभावनाएँ, दीर्घावधि में निवेश के नए अवसर पैदा करती हैं एवं निवेश ऊपर की ओर बढ़ता रहता है। वहीं दूसरी ओर अगर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार अच्छा ना हो तो निवेश फलन नीचे की ओर आ जाएगा।

9.8 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. पूँजी की सीमान्त उत्पादकता के.....निर्धारक तत्व हैं। (दो **या** सात)
2. पूँजी की आपूर्ति कीमत को .....भी कहते हैं। (स्थापन लागत **या** पुन: स्थापन लागत)
3. प्रेरित निवेश.....पर निर्भर होती हैं। (आय **या** व्यय)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सरकार द्वारा सार्वजनिक कल्याण अथवा विकास के लिए स्वायत्त निवेश किया जाता हैं।
2. निवेश व्यय अर्थव्यवस्था की उत्पादक क्षमता में वृद्धि करते हैं।
3. प्रेरित निवेश लाभ या आय से प्रभावित नहीं होती हैं।
4. कीन्स ने तरलता पसन्दगी के तीन उद्देश्य दिए हैं।
5. कीन्स ने पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को स्थिर तत्व माना हैं।

9.9 सांराश (Summary)

उपरोक्त इकाई में आपने निवेश के बारे में विस्तार से पढ़ा एवं यह समझा की निवेश एक निश्चित अवधि में नए पूँजीगत सामान या पूँजीगत परिसंपत्तियों को खरीदने के लिए किए जाने वाले व्यय का प्रवाह हैं। आपने निवेश के कई प्रकार के बारे में भी पढ़ा जिसमें आपने सबसे पहले कुल निवेश के बारे में पढ़ा और जाना की कुल निवेश से तात्पर्य किसी एक वर्ष की समयावधि के दौरान उत्पादित नई पूँजीगत वस्तुओं से होता हैं। उसके बाद आपने शुद्ध निवेश के बारे में पढ़ा और समझा की शुद्ध निवेश से अर्थ किसी एक वर्ष की समयावधि के दौरान पूँजीगत वस्तुओं में शुद्ध या वास्तविक वृद्धि से हैं। इसके बाद आपने स्टॉक निवेश के बारे में जाना की एक समय अवधि में किसी उत्पादक के पास रखे हुए स्टॉक या भण्डार में हुई वास्तविक वृद्धि को भी निवेश माना जाता हैं। निवेश के प्रकारों में आगे आपने निर्माण निवेश के बारे में पढ़ा और यह समझा की निर्माण निवेश के अंतर्गत कई प्रकार निर्माण शामिल होते हैं। निवेश का अगला प्रकार हैं सार्वजनिक निवेश, जिसके अंतर्गत केंद्र सरकार एवं राज्य सरकारों या स्थानीय अधिकारियों और सरकारी निगमों द्वारा किए गए निवेश शामिल होते हैं। इसके बाद आपने स्वायत्त निवेश के बारे में विस्तार से पढ़ा और समझा की यह निवेश सरकार द्वारा बिना लाभ एवं हानि को ध्यान में रखकर की जाती हैं। यह आय स्तर में होने वाले परिवर्तनों पर निर्भर नहीं करती। स्वायत्त निवेश सरकार द्वारा सार्वजनिक कल्याण अथवा विकास के लिए किया जाता हैं।

निवेश का आखिरी प्रकार हैं प्रेरित निवेश, यह लाभ कमाने के उद्देश्य से किया जाता हैं जिसको निवेश फलन भी कहा जाता हैं क्योकि यह आय सापेक्ष हैं एवं आय बढ़ने के साथ बढ़ता हैं। प्रेरित निवेश लाभ या आय से प्रभावित होता हैं। प्रेरित निवेश के दों अवधारणाएं हैं, पहली औसत निवेश प्रवृत्ति और दूसरी सीमान्त निवेश प्रवृत्ति जिनके बारे में आप इकाई में विस्तार से पढ़ चुके हैं।

इकाई में आगे आपने निवेश को निर्धारित करने वाले दों मुख्य निर्धारक तत्वों के बारे में पढ़ा जिसमें पहला हैं **पहला** पूँजी की सीमान्त उत्पादकता और **दूसरा** ब्याज दर। पूँजी के सीमान्त उत्पादकता से अर्थ किसी पूँजीगत वस्तु में आई लागत की तुलना में उसकी एक अतिरिक्त इकाई का उपयोग करके प्राप्त होने

वाले लाभ की अनुमानित दर से हैं। यह दों तत्वों पर निर्भर करती हैं जिसमें ***पहला*** तत्व हैं अनुमानित आय और ***दूसरा*** पूँजी की आपूर्ति कीमत।

9.10 शब्दावली (Glossary)

- **मूल्यह्रास (Depreciation) :** मूल्यह्रास का तात्पर्य किसी परिसंपत्ति के मूल्य में गिरावट से है। यह एक लेखांकन पद्धति हैं।
- **प्रतिस्थापन-निवेश (Replacement Investment) :** प्रतिस्थापन निवेश का अर्थ उस निवेश से हैं जो किसी मौजूदा इमारत या मशीन या उसके हिस्सों को एक नई अद्यतन इमारत या मशीन से बदल देता हैं।
- **बेलोच (Inelastic):** किसी वस्तु या सेवा की कीमत बदलने पर उसकी स्थिर मात्रा को बेलोच कहा जाता है। बेलोचदार मांग का मतलब है कि जब किसी वस्तु या सेवा की कीमत बढ़ती है तो उपभोक्ताओं की खरीदारी की आदतें लगभग वैसी ही रहती हैं और जब कीमत कम होती है तो उपभोक्ताओं की खरीदारी की आदतें भी अपरिवर्तित रहती हैं।
- **अपेक्षित प्रतिफल दर (Required rate of return):** अपेक्षित प्रतिफल दर जोखिम के वर्तमान स्तर के लिए आवश्यक उचित मुआवजे का वर्णन करता हैं। उच्च जोखिम वाली परियोजनाओं में आमतौर पर कम जोखिम वाली परियोजनाओं की तुलना में बाधा दर अधिक होती हैं।
- **शुद्ध आगम (Net Revenue):** शुद्ध आगम का अर्थ मशीन के जीवनकाल के दौरान उसके उपयोग से उत्पादित वस्तुओं की बिक्री में होने वाली सकल या कुल आय और परिवर्तनीय लागतों (कच्चा माल, मजदूरी आदि) से हैं और इसे शुद्ध राजस्व प्रवाह भी कहा जाता हैं।
- **तरलता पसन्दगी (Liquidity preference):** मुद्रा को तरल (cash) रूप में रखने को तरलता पसन्दगी कहा जाता हैं।
- **बहिर्जात घटक (Exogenous Component):** बाहरी कारक जो आंतरिक कारकों के वातावरण को प्रभावित करते हैं।
- **लेन-देन उद्देश्य (Transaction motive):** लेन-देन के उद्देश्य से तात्पर्य इस आवश्यकता से हैं कि लोगों को दिन-प्रतिदिन की खरीदारी के लिए पैसे रखने पड़ते हैं।
- **सतर्कता उद्देश्य (Precautionary motive):** सतर्कता का अर्थ हैं किसी के आसपास होने वाले प्रासंगिक और अप्रत्याशित परिवर्तनों के प्रति जागरूक रहने की क्षमता से हैं।
- **सट्टा उद्देश्य (Speculative motive):** सट्टा उद्देश्य का अर्थ निवेशकों या व्यापारियों द्वारा नकदी रखने की रणनीति हैं। इसका उद्देश्य आगामी निवेश अवसरों का लाभ उठाना हैं।

9.11 अभ्यास प्रश्न के उत्तर (Answers of Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. दों 2. पुन: स्थापन लागत 3. आय

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य
4. सत्य 5. असत्य

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- एच.एल. आहूजा (2023) उच्तर समष्टि अर्थशास्त्र, विज़न आई.ऐ. ऐस.।
- ऐस. एन. लाल (2020) समष्टिभावी आर्थिक विशलेषण, लाल पब्लिशिंग।

- प्रो. बी.एल. ओझा एवं मनोज कुमार ओझा (2015) समष्टि आर्थिक विशलेषण, ऐस.बी.पी.डी पब्लिकेशन।
- एम. एल. झिंगन (2023) समष्टि अर्थशास्त्र, विज़न आई.ऐ. ऐस.।
- के. पी. जैन एवं के. एल. गुप्ता (2005) मैक्रो अर्थशास्त्र, नवयुग साहित्य सदन।

9.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Sethi, T. T. (2020) **Macro Arthshaastra,** Lakshmi Narain Publication.
- Jhingan, M. L. (2023) **Macro Economics**, VISION IAS.
- Oljha, B. L. (2015) **Macro Economics**, SBPD Publications.
- Ahuja, H. L. (2019) **Macroeconomics Theory and Policy**, S. Chand Publishing.
- Sinha, V. C. (2017) **Macro Economics**, SBPD Publishing house.

9.14 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. निवेश से आप क्या समझते हैं? इसके विभिन्न प्रकारों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2. निवेश को निर्धारक करनें वाले तत्वों को विस्तार से बताइए।
3. पूँजी की सीमान्त उत्पादकता क्या हैं? इससे निर्धारित करने वाले तत्वों को समझाइए।

इकाई 10 गुणक का सिद्धान्त
(Theory of Multiplier)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)
10.2 उदेश्य (Objectives)
10.3 गुणक का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Multiplier)
10.4 गुणक की प्रक्रिया (Process of Multiplier)
10.5 बचत फलन तथा बचत की प्रवृत्ति (Saving Functions and Propensity to Save)
10.6 गुणक का सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के बीच सम्बन्ध (Relationship between Multiplier with Marginal Propensity to Consume)
10.7 गुणक का आकार या मूल्य (Size or Value of Multiplier)
10.8 कीन्स के गुणक का प्रकार (Type of Keynes Multiplier)
10.9 गुणक का महत्व (Importance of Multiplier)
10.10 गुणक की सीमाएं (Limitations of Multiplier)
10.11 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
10.12 सारांश (Summary)
10.13 शब्दावली (Glossary)
10.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
10.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
10.16 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
10.17 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पहले की इकाई में आप उपभोग एवं निवेश के बारे में पढ़ चुके हैं। प्रस्तुत इकाई में आप गुणक के बारे में पढ़ेंगे एवं यह जानेंगे की अर्थव्यवस्था में गुणक किस प्रकार आय के स्तर को बढ़ाने का कार्य करता हैं। इकाई में आप सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के बारे में भी पढ़ेंगे एवं साथ ही यह भी जानेंगे की गुणक का सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के साथ क्या सम्बन्ध हैं और यह किस प्रकार गुणक को प्रभावित करता हैं। इस इकाई में आप गुणक के दों मुख्य प्रकार के बारे में भी पढ़ेंगे एवं यह एक दूसरे से किस प्रकार भिन्न हैं यह भी समझेंगे। गुणक आगे एवं पीछे दोनों तरफ ही कार्यशील होता हैं गुणक की इस प्रक्रिया को भी आप इकाई में विस्तार से समझेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति एवं सीमान्त बचत प्रवृत्ति के बीच सम्बन्ध को भी समझ पाएंगे एवं सीमान्त बचत प्रवृत्ति किस प्रकार गुणक को प्रभावित करती हैं यह भी पढ़ेंगे।

10.2 उदेश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- ✓ निवेश गुणक के अर्थ एवं परिभाषाओं से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ गुणक की प्रक्रियाके बारे में जान सकेंगे।
- ✓ बचत फलन तथा बचत की प्रवृत्ति से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ गुणक एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के मध्य के सम्बन्ध को समझ सकेंगे।
- ✓ गुणक का आकार या मूल्य को जान सकेंगे।
- ✓ कीन्स के गुणक का प्रकार से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ गुणक के महत्व और सीमाओं के बारे में जानेंगे।
- ✓ गुणक में होने वाले रिसाव के बारे में जानेंगे।

10.3 गुणक का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Multiplier)

जैसा की आप जानते हैं की गुणक कई प्रकार के होते हैं, जैसे निवेश गुणक, रोजगार गुणक, विदेश व्यापार गुणक, कर गुणक आदि। प्रस्तुत इकाई में आप केवल निवेश गुणक के बारे में पढ़ेंगे एवं समझेंगे की यह किस प्रकार कार्य करता हैं। निवेश, आय का प्रमुख निर्धारक तत्व हैं। अत: जब किसी अर्थव्यवस्था में निवेश किया जाता हैं तो कुल आय में वृद्धि हो जाती हैं परन्तु आय में वृद्धि केवल निवेश के बराबर ना होकर प्रारम्भिक निवेश की तुलना में कुछ अधिक ही बढ़ जाती हैं। दूसरे शब्दों में गुणक निवेश में होने वाले परिवर्तन के कारण आय में होने वाले परिवर्तन के अनुपात को व्यक्त करता हैं। अर्थात $\mathrm{K} = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$

निवेश गुणक की अवधारणा **कीन्स (Keynes)** द्वारा दी गई हैं और उन्होंने गुणक को अंग्रेजी भाषा के 'K' अक्षर से व्यक्त किया हैं। **कीन्स** के अनुसार, गुणक, उपभोग प्रवृत्ति के दिए हुए होने पर समस्त रोजगार, आय एवं निवेश के बीच सम्बन्ध स्थापित करता हैं। यह हमें बताता हैं कि जब निवेश में कोई परिवर्तन किया जाएगा तो आय में होने वाली परिवर्तन, निवेश में किए गए परिवर्तन के 'K' गुना होगी। अर्थात:

$$\mathrm{K} = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

$\mathrm{K} =$ गुणक

$\Delta Y =$ आय में परिवर्तन

$\Delta I =$ निवेश में परिवर्तन

अत: गुणक, निवेश में परिवर्तन के कारण आय में हुई परिवर्तन का अनुपात हैं।

कीन्स का कहना हैं कि निवेश में हुई प्रारम्भिक वृद्धि उपभोग में परिवर्तन करेगी जोकि कुल आय में वृद्धि का कारण बनेगी। इस प्रकार-

निवेश में परिवर्तन (प्रारम्भिक कारण) → उपभोग में परिवर्तन
→ कुल आय में परिवर्तन (अन्तिम परिणाम)

Change in Investment → Change in Consumption
→ Change in Total Income

गुणक की कुछ परिभाषाए निम्नलिखित हैं

कीन्स (Keynes) के अनुसार ***"निवेश गुणक हमें यह स्पष्ट कराता हैं कि जब कुल निवेश में वृद्धि होती हैं तो आय उस राशि से बढ़ेगी जो निवेश वृद्धि के K गुना हो। (The investment multiplier makes it clear to us that when total investment increases, income will increase by an amount which is K times increase in investment.)"***

प्रो.डिलार्ड के अनुसार, ***"निवेश में की गई वृद्धि के परिणामस्वरुप आय में होने वाली वृद्धि के अनुपात को निवेश गुणक कहा जाता हैं। (Investment multiplier is the ratio of an increase in income to a given increse in investment.)"***

हैंन्सन (Hansen) के अनुसार, ***"कीन्स का निवेश गुणक वह गुणांक हैं, जिसका सम्बन्ध निवेश वृद्धि और आय वृद्धि के मध्य से हैं।(Keynes investment multiplier is the coefficient which is related between investment growth and income growth.)"***

कीन्स (Keynes) के अनुसार, जब अर्थव्यवस्था में नया निवेश किया जाता है तो इसके परिणामस्वरूप आय में कई गुना वृद्धि होती है। आय में जितने गुना वृद्धि होती है, उसे **गुणक** (multiplier) कहते है।

अर्थात,

$$K = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

इस प्रकार यह स्पष्ट हैं कि गुणक निवेश में हुई वृद्धि के कारण आय में वृद्धि का अनुपात हैं। इसलिए **कीन्स** (Keynes) द्वारा दिए गए गुणक को **निवेश गुणक** (Investment Multiplier) अथवा **आय गुणक** (Income Multiplier) के नाम से भी जाना जाता हैं।

10.4 गुणक की प्रक्रिया (Process of Multiplier)

गुणक सिद्धान्त निवेश में परिवर्तन के उस संचयी प्रभाव (Cumulative Effect) की व्याख्या करता हैं जो उसके उपभोग व्यय पर प्रभाव के माध्यम से आय पर पड़ता हैं। निवेश में परिवर्तन होने से आय में परिवर्तन होता हैं और इसके परिणामस्वरूप उपभोग में परिवर्तन होता हैं। गुणक की कार्यप्रणाली इस तथ्य पर आधारित है कि एक व्यक्ति का उपभोग व्यय दूसरे व्यक्ति की आय होती हैं यही कारण है कि उपभोग में परिवर्तन होने से आय परिवर्तित होती हैं। इस प्रकार, यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती हैं जब तक कि उपभोग व्यय शून्य नहीं हो जाता।

गुणक के आय प्रसारण की क्रिया को चित्र द्वारा दिखाया गया है:-

गुणक प्रक्रिया = निवेश में परिवर्तन → आय में परिवर्तन → उपभोग में परिवर्तन → आय में परिवर्तन

Multiplier Process = Change in Investment → Change in Income
→ Change in Consumption → Change in Income

$$\Delta I \rightarrow \Delta Y \rightarrow \Delta C \rightarrow \Delta Y$$

गुणक आगे एवं पीछे दोनों ही दिशाओं में क्रियाशील हो सकता हैं। जब गुणक आगे की दिशा में क्रियाशील होता हैं तो इससे निवेश में वृद्धि होती हैं एवं आय में वृद्धि होती हैं। पीछे की दिशा में गुणक उस समय क्रियाशील होता हैं, जब निवेश में कमी होने से आय में एवं उपभोग में कमी होती हैं। पहले हम गुणक के आगे की दिशा में क्रियाशील होने का अध्ययन करेंगे। यह स्पष्ट किया जा चुका हैं कि गुणक सिद्धान्त यह बताता हैं कि निवेश में परिवर्तन होने से उपभोग पर आय के माध्यम से क्या प्रभाव पड़ता हैं।

प्रो. कीन्स (Prof. Keynes) ने गुणक की व्याख्या बिना समय अन्तराल के तात्कालिक प्रक्रिया (Immediate process) के रूप में की हैं। इसका अर्थ यह हैं कि निवेश में होने वाले परिवर्तन का आय पर तत्काल प्रभाव पड़ता हैं। जैसे ही निवेश में वृद्धि होती हैं एवं आय में वृद्धि होती हैं उससे उपभोग व्यय बढ़ता हैं। यह आय एवं व्यय की वृद्धि ह्रासमान श्रंखला में (Dwindling Series) में उस सीमा तक बढ़ती हैं कि उसके आगे और वृद्धि सम्भव नहीं होती।

उदाहरण से स्पष्टीकरण

मान लीजिए, किसी देश की अर्थव्यवस्था में सरकार सड़कों एवं इमारतों के निर्माण पर 100 करोड़ रूपये व्यय करती हैं। इससे राष्ट्रीय आय में 100 करोड़ रूपये की वृद्धि तुरंत हो जाएगी। अब मान लीजिए, सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) का मूल्य 0.5 हैं। अब निवेश में 100 करोड़ रूपये की वृद्धि की जाती हैं तो इससे तत्काल उत्पादन आय में 100 करोड़ रूपये की वृद्धि हो जाएगी क्योकि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति 0.5 हैं तो इस 100 करोड़ रूपये की आय में वृद्धि से 50 करोड़ रूपये तुरन्त उपभोग पर व्यय होंगे जिससे उतनी ही उत्पादन एवं आय में वृद्धि होगी। यह वृद्धि की श्रृंखला उस सीमा तक जारी रहेगी जब तक कुल आय प्रारम्भ में निवेश में लगाए हुए 100 करोड़ रूपये से बढ़कर 200 करोड़ रूपये नहीं हो जाते। **कीन्स** ने इस प्रकार जो समय अन्तराल के बिना व्याख्या की हैं उसमें चूँकि गुणक एक निश्चित अनुक्रम में कार्यशील होता हैं। अत: इसे **अनुक्रम गुणक** (Sequence Multiplier) भी कहते हैं।

तालिका 10.2 गुणक का आगे की दिशा में क्रियाशील होना

अनुक्रम गुणक

(राशि करोड़ रूपये में)

अनुक्रम	निवेश में वृद्धि ($\Delta \mathbf{I}$)	आय में वृद्धि ($\Delta \mathbf{Y}$)	सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति ($\mathbf{MPC = 0.5}$)	उपभोग में वृद्धि ($\Delta \mathbf{C}$)
1	100	100	50	50
2		50	25	25
3		25	12.50	12.50
4		12.50	6.25	6.25
5		6.25	3.12	3.25
		.....		
		0		
अन्तिम स्थिति	**100**	**200**	**100**	**100**

तालिका से स्पष्ट हैं कि आय में जो वृद्धि होती हैं उसका आधा भाग उपभोग पर व्यय किया जाता हैं तथा शेष आधा बचा लिया जाता हैं जिसको उपभोग पर व्यय किया जाता हैं और उससे उत्पादन एवं आय में उतनी ही वृद्धि होती हैं। पुन: उसका आधा उपभोग पर व्यय किया जाता हैं। इस प्रकार आय सृजन की यह ह्रासमान प्रक्रिया उस समय तक चलती रहती हैं, जब तक की प्रारम्भिक 100 करोड़ रूपये से आय बढ़कर 200 करोड़ रूपये नहीं हो जाती।

$$K = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

अर्थात $\Delta Y = K\Delta I$

अर्थात $200 = 2 \times 100$

यहाँ पर ΔY = आय में वृद्धि, K= गुणक, ΔI = निवेश में वृद्धि

चूँकि MPC = 0.5 अथवा $\frac{1}{2}$ हैं। अत: गुणक 2 होगा।

चित्र द्वारा स्पष्टीकरण

कीन्स के निवेश गुणक को चित्र के माध्यम से स्पष्ट किया हैं। चित्र 10.1 मे OX अक्ष पर आय को एवं OY पर उपभोग एवं निवेश को दिखाया गया हैं। C वक्र **0.5** सीमांत उपभोग प्रवृत्ति को स्पष्ट करती हैं। $C + I$ वक्र प्रारम्भिक निवेश को दिखाता हैं। जो 45° की रेखा को E बिन्दु पर काटता हैं।

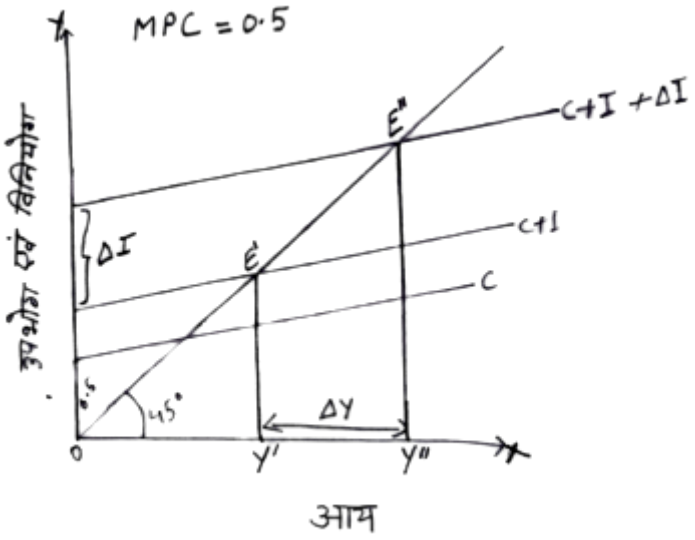

चित्र 10.1

E^1 बिन्दु पर आय का सन्तुलन OY^1 बिन्दु पर हैं। अब निवेश में वृद्धि की जाती हैं जो $C + I + \Delta I$ वक्र द्वारा दिखाई गई हैं एवं $C + I$ एवं $C + I + \Delta I$ वक्र के अन्तर ΔI से भी स्पष्ट हैं। यह वक्र 45° रेखा को बिन्दु E^{11} पर काटता हैं एवं इस बिन्दु पर बढ़ी हुई आय OY^{11} हैं। चित्र से यह स्पष्ट होता हैं कि निवेश में जो वृद्धि (ΔI) होती हैं, उसकी तुलना में आय में दुगुनी वृद्धि होती हैं जिसे चित्र में ΔY द्वारा प्रदर्शित किया गया हैं।

उपर्युक्त प्रक्रिया को गुणक के प्रतिकूल दिशा में कार्यान्वित होने की स्थिति में भी स्पष्ट किया जा सकता हैं। यदि निवेश कम होता है तब गुणक प्रतिकूल दिशा में कार्य करता है, निवेश में कमी से आय और उपभोग में संकुचन की तरफ ले जाती है। यह आय और उपभोग स्तरों में संचयी गिरावट की तरफ ले जाएगी जब तक कि आय में कुल कमी गुणक के मूल्य और निवेश में आरम्भिक कमी के गुणनफल के बराबर नहीं हो जाती।

उदाहरण: यदि निवेश में 10 करोड़ रूपये से कम हो जाता है। सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) का मूल्य 0.5 हैं और K = 1/(1-MPC) = 2 के साथ आय में 40 करोड़ रूपये तक की शुद्ध गिरावट होगी।

10.5 बचत फलन तथा बचत की प्रवृत्ति (Saving Function and Propensity to Save)

गुणक में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति को जानने से पहले हमें बचत फलन एवं बचत की प्रवृत्तियों को समझाना आवश्यक है। आईये इसको पढ़तें है

उपभोग तथा बचत परस्पर सम्बन्धित है क्योंकि आय का जो भाग उपभोग पर नहीं व्यय होगा वह बचत होगी अर्थात् $S = Y - C$। ऐसी स्थिति में उपभोग-फलन तथा बचत फलन परस्पर सम्बन्धित होते हैं। उपभोग की तरह बचत भी आय के स्तर पर निर्भर करती है। बचत तथा आय के बीच फलनात्मक सम्बन्ध **बचत फलन** कहलाता हैं।

हम जानते हैं कि

$$S = Y - C$$

यदि हम C के स्थान पर Co +cY रखें तो

$$S = Y - (Co + cY)$$
$$= Y - Co - cY$$
$$= -Co + Y - cY$$
$$S = -Co + (1 - c)Y$$

जिसमें $(1 - c)$ बचत फलन का ढाल या बचत की सीमान्त प्रवृत्ति है।

यदि हम $1 - c = s$ या बचत की सीमान्त प्रवृत्ति से प्रदर्शित करें तो हम बचत फलन को इस रूप में लिख सकते हैं, $S = -Co + sY, -Co$ का अर्थ यह हुआ कि यदि आय शून्य हो तो भी न्यूनतम उपभोग Co होगा। इसका मतलब यह हुआ कि आय के शून्य स्तर पर बचत की मात्रा ऋणात्मक होगी।

उपभोग की प्रवृत्ति की तरह ही बचत की भी प्रवृत्ति दो प्रकार की प्रवृत्तियां होती है।

औसत बचत प्रवृत्ति (Average Propensity to Save - APS)

बचत की औसत प्रवृत्ति बचत तथा आय के बीच का अनुपात है जिसे S/Y के रूप में व्यक्त किया जाता है।

$$APS = S/Y$$

ऊपर दिये गये उदाहरण के अनुसार बचत 500 रूपया है। अतएव

APS = 500/2000 = 1/4 अथवा APS = 0.25 होगी।

चूँकि $Y = C + S$ इसलिए इस समीकरण को Y से भाग देने पर

$$Y/Y = C/Y + S/Y$$

अर्थात्

$$1 = C/Y + S/Y$$

इस प्रकार **APC + APS = 1**

दिये गये उदाहरण में MPC= 3/4 और APC 1/4 है।

सीमान्त बचत प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Save - MPS)

सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति की तरह ही सीमान्त बचत प्रवृत्ति (MPS) को भी ज्ञात किया जा सकता है -

$$MPS = \Delta S/\Delta Y$$

या $1 - \Delta C/\Delta Y$ देख चुके हैं **APC + APS =1** ठीक इसी प्रकार **MPC + MPS =1**

इस तथ्य को निम्न प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है

$Y = \Delta C + \Delta S$ समीकरण को ΔY से भाग देने पर

$$\Delta C/\Delta Y + \Delta S/\Delta Y = \Delta Y/\Delta Y = 1$$

10.6 गुणक का सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के साथ सम्बन्ध (Relation of Multiplier with Marginal Propensity to Consume)

गुणक का आकार सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति पर निर्भर करता हैं। यदि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति अधिक हैं तो गुणक भी अधिक होगा और इसके विपरीत, यदि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति कम हैं तो गुणक भी कम होगा। वास्तव में, हम गुणक के आकार को सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के माध्यम से ज्ञात करते हैं।

सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के माध्यम से गुणक निकालने का सूत्र इस प्रकार हैं-

$$\mathbf{K = \frac{1}{1 - MPC}}$$

या

$$\text{गुणक} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{1} - \text{सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति}}$$

मान लीजिए, सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति 1/2 हैं, तो

$$\text{गुणक} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{1} - \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{2}}} = \frac{\mathbf{1}}{\frac{\mathbf{1}}{\mathbf{2}}} = \frac{\mathbf{2}}{\mathbf{1}} = \mathbf{2}$$

सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) और सीमान्त बचत प्रवृत्ति (MPS) का योग इकाई के बराबर होता हैं इसलिए यदि हम सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति को 1 में से घटा देंगे तब हमें सीमान्त बचत प्रवृत्ति प्राप्त होगी।

अत: हम गुणक को इस सूत्र द्वारा भी व्यक्त कर सकते हैं

$$\text{गुणक} = \frac{\mathbf{1}}{\text{सीमान्त बचत प्रवृत्ति}} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{MPS}}$$

इस प्रकार यदि हमें सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति अथवा सीमान्त बचत प्रवृत्ति दोनों में से एक ज्ञात हैं तो हम आसानी से गुणक का मूल्य ज्ञात कर सकते हैं। गुणक एवं सीमान्त बचत प्रवृत्ति (MPS) में विपरीत सम्बन्ध पाया जाता हैं। ***ऊंची सीमान्त बचत प्रवृत्ति***, गुणक की मात्रा को घटाएगी एवं ***नीची सीमान्त बचत प्रवृत्ति***, गुणक की मात्रा को बढ़ाएगी। गुणक को सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के सम्बन्ध में भी व्यक्त किया जा सकता हैं।

$$\mathbf{K} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{1} - \mathbf{MPC}} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{MPS}}$$

क्योंकि,

$$\mathbf{K} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{1} - \mathbf{MPC}} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{1} - \frac{\Delta \mathbf{C}}{\Delta \mathbf{Y}}} = \frac{\Delta \mathbf{Y}}{\Delta \mathbf{Y} - \Delta \mathbf{C}}$$

इस सूत्र की उत्पत्ति निम्नलिखित प्रकार से की जा सकती है:

कीन्स के अनुसार,

$$\text{आय में वृद्धि} = \text{उपभोग में वृद्धि} + \text{निवेश में वृद्धि}$$

$$\Delta Y = \Delta C + \Delta I$$

दोनों पक्षों को ΔY से भाग देने पर

$$\frac{\Delta Y}{\Delta Y} = \frac{\Delta C + \Delta I}{\Delta Y}$$

या

$$1 = MPC + \frac{\Delta I}{\Delta Y}$$

या $\quad \frac{\Delta I}{\Delta Y} = 1 - MPC$

या $\quad \mathbf{K} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{1-MPC}} = \frac{\mathbf{1}}{\mathbf{MPS}}$

अर्थात

$$\mathbf{K} = \frac{\Delta \mathbf{Y}}{\Delta \mathbf{I}}$$

अत: संक्षेप में कहा जा सकता हैं कि गुणक के आकार का सम्बन्ध सीमान्त बचत प्रवृत्ति (MPS) के साथ विपरीत सम्बन्ध (Indirect Relationship) एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) के साथ सीधा सम्बन्ध (Direct Relationship) होता हैं।

तालिका द्वारा गुणक एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के बीच सम्बन्ध का स्पष्टीकरण यह स्पष्ट हैं कि गुणक का सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति का प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता हैं। निम्न तालिका में विभिन्न सीमान्त बचत प्रवृत्ति के स्तरों पर गुणक के आकारों को दिखाया गया हैं-

तालिका 10.1 सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति एवं गुणक

सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति	सीमान्त बचत प्रवृत्ति	गुणक
0	1	$1\left(=\frac{1}{1-0}\right)$
0.50	0.50	$2\left(=\frac{1}{1-0.50}\right)$
0.67	0.33	$3\left(=\frac{1}{1-0.67}\right)$
0.75	0.25	$4\left(=\frac{1}{1-0.75}\right)$
0.80	0.20	$5\left(=\frac{1}{1-0.80}\right)$
0.90	0.10	$10\left(=\frac{1}{1-0.90}\right)$
1	0	∞ (अनन्त)

उपर्युक्त तालिका से यह स्पष्ट हैं कि गुणक का सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता हैं एवं सीमान्त बचत प्रवृत्ति (MPS) के साथ विपरीत सम्बन्ध होता हैं। चूँकि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति सदैव शून्य से अधिक एवं एक से कम होती हैं अत: गुणक सदैव इकाई (1) एवं अनन्त (∞) के बीच होता हैं। यदि गुणक इकाई (1) हैं तो इसका अर्थ हैं कि सम्पूर्ण आय की वृद्धि बचत कर ली जाती हैं एवं उपभोग पर कुछ व्यय नहीं किया जाता क्योंकि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति शून्य हैं किन्तु व्यवहार में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति शून्य से अधिक होती हैं। यदि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति इकाई (1) हो तो गुणक अनन्त (∞) होता हैं किन्तु ऐसा कभी व्यवहार में नहीं होता एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति एक से कम होती हैं। तालिका से यह भी स्पष्ट हैं कि जितनी सीमान्त बचत प्रवृत्ति कम होती हैं गुणक भी उतना ही अधिक होता हैं इसका कारण यह हैं कि सीमान्त बचत प्रवृत्ति कम होने पर उपभोग अधिक होता हैं जिससे गुणक के आकार में वृद्धि होती हैं।

10.7 गुणक का आकार या मूल्य (Size or Value of Multiplier)

गुणक सिद्धान्त में **गुणक-गुणांक** (Multiplier Coefficient) यानी 'K' एक महत्वपूर्ण तत्व हैं जोकि उस शक्ति को निर्दिष्ट करता (Specifies) हैं जिससे प्रारम्भिक विनियोजन व्यय को गुणा करके आय में अन्तिम वृद्धि प्राप्त की जा सकती हैं। निवेश में होने वाली प्रारम्भिक वृद्धि आय में कई गुना वृद्धि लाती हैं जिससे निवेश के कारण आय की प्रारम्भिक वृद्धि एक श्रृंखला प्रभाव (Chain Effect) को जन्म देती हैं और उसके परिणामस्वरूप आय में कई गुना वृद्धि होती हैं।

निवेश की प्रारम्भिक वृद्धि (ΔI) एवं आय में होने वाली वृद्धि (ΔY) के बीच का गुणात्मक सम्बन्ध ही गुणक हैं। इस प्रकार हम यह समझ सकते हैं निवेश में हुई प्रारम्भिक वृद्धि के कारण आय में कितनी गुनी वृद्धि होगी।

यदि K = गुणक, ΔI निवेश में होने वाली प्रारम्भिक वृद्धि हो तो यह कहा जा सकता हैं कि,

$$K = \frac{\Delta I}{\Delta Y} \quad \text{या} \quad \Delta Y = K \times \Delta I$$

यदि 10 करोड़ रूपये का प्रारम्भिक निवेश आय में 50 करोड़ रूपये की वृद्धि लाए तो निवेश गुणक $50/10 = 5$ होगा।

गुणक का सूत्र

$$\Delta Y = K \times \Delta I$$

यहाँ Δ वृद्धि को प्रकट करता हैं। Y आय को, K गुणक को एवं I निवेश को प्रकट करता हैं। अतः

$$\Delta \mathbf{Y} = \mathbf{K} \times \Delta \mathbf{I} \text{ Or } \mathbf{K} = \frac{\Delta \mathbf{I}}{\Delta \mathbf{Y}}$$

अर्थात K (गुणक) निवेश में हुई वृद्धि के कारण आय में होने वाले परिवर्तन का अनुपात होता हैं। इस प्रकार यदि किसी अर्थव्यवस्था में निवेश में वृद्धि 10 करोड़ रूपये होती हैं और राष्ट्रीय आय में वृद्धि 40 करोड़ रूपये की होती हैं तो गुणक 4 होगा।

10.8 कीन्स के गुणक का प्रकार (Types of Keynes Multiplier)

कीन्स द्वारा दिया गया निवेश गुणक बिना समय अन्तराल के एक तात्कालिक प्रक्रिया हैं जोकि यह बताता हैं कि निवेश का आय पर तत्काल ही प्रभाव पड़ता हैं। जिससे उपभोग वस्तुओं का तत्काल उत्पादन किया जा सकता हैं एवं उपभोग व्यय भी तत्काल होता हैं किन्तु आलोचकों का कहना हैं कि यह क्रियाएं तात्कालिक नहीं होतीं और इनमें कुछ ना कुछ समय अन्तराल लगता हैं। अत: कीन्स का गुणक अवास्तविक हैं क्योकि वह समय अन्तराल की अवहेलना कर नए सन्तुलन की व्याख्या करता हैं।

कीन्स के स्थैतिक गुणक के विपरीत, प्रावैगिक गुणक में आय सृजन की प्रक्रिया के अंतर्गत समय अन्तराल पर विचार किया जाता हैं। इसके अन्तर्गत निवेश के फलस्वरूप आय और उपभोग पर व्यय आदि की प्रक्रिया में वर्षों तक की अवधि लग जाती हैं। इसे नीचे तालिका में स्पष्ट किया गया हैं

प्रावैगिक गुणक

अवधि (माह में)	निवेश में वृद्धि ΔI	उपभोग में वृद्धि ΔC MPC = 0.5	आय में वृद्धि ΔY (राशि करोड़ रूपये में)
0	0	0	0
0+1	100	0	100
0+2	100	50	100+50
0+3	100	25	150+25
.....	.....	.....	.....
0+n	100	100	200

तालिका में यदि हम यह मानें कि प्रत्येक अवधि एक माह की हैं एवं प्रारम्भिक 100 करोड़ रूपये के निवेश को, 200 करोड़ रूपये की आय सृजन करने में 110 माह की अवधि लगती हैं एवं हैं सीमांत उपभोग प्रवृत्ति (MPC) का मान 0.5 हैं तो गुणक प्रक्रिया को पूरी करने में 17 माह की अवधि का समय अन्तराल लगेगा।

तालिका से स्पष्ट हैं कि 100 करोड़ के निवेश से पहले माह में आय में 100 करोड़ रूपये की वृद्धि होगी। चूँकि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) का मान 0.5 हैं और इसमें 50 करोड़ रूपये उपभोग पर व्यय किये जाएंगे। अत: दूसरे माह में आय में 50 करोड़ रूपये की वृद्धि होगी, जिसमें से 25 करोड़ रूपये उपभोग पर व्यय किये जाएंगे। अत: तीसरे माह में आय में 25 करोड़ रूपये की वृद्धि होगी। यह प्रक्रिया उस समय तक चलती रहेगी जब तक 17 माह की अवधि में आय बढ़कर 200 करोड़ रूपये हो जायेगी।

तालिका में 1+n 17 माह की अवधि का सूचक हैं। इसे बीजगणितीय रूप में निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता हैं।

$$\Delta Yn = \Delta I + \Delta Ic + \Delta Ic^2 + \Delta Ic^3 \ldots\ldots\ldots + \Delta Ic^{n-1}$$
$$= 100 + 100(0.5) + 100(0.5)^2 + 100(0.5)^3 \ldots + 100(0.5)^{n-1}$$
$$= 200 \text{ करोड़ रूपये}$$

उपर्युक्त सूत्र में C सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) का सूचक होगा।

प्रावैगिक गुणक की यह मान्यता हैं कि उपभोग में समय अन्तराल लगता हैं किन्तु निवेश तत्काल कर लिया जाता हैं। इसका तात्पर्य हैं कि उपभोग, पिछली अवधि की आय का फलन हैं एवं निवेश समय एवं स्थिर स्वायत्त निवेश का फलन हैं।

10.9 गुणक का महत्व (Importance of Multiplier)

गुणक सिद्धान्त का आय और रोजगार के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण स्थान हैं। इसे निम्नलिखित रूप से व्यक्त किया जा सकता है-

1. पूर्ण रोजगार के लिए यह स्पष्ट किया जा चुका हैं कि प्रारम्भिक निवेश से आय एवं रोजगार में वृद्धि होती हैं यदि इस वृद्धि में पूर्ण रोजगार प्राप्त नहीं होता तो सरकार निवेश में वृद्धि करके, गुणक को कार्यशील बनाकर, पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त कर सकती हैं।
2. हीनार्थ प्रबन्धन (Waste Management) के महत्व को भी स्पष्ट करता हैं। यदि अर्थव्यवस्था में मन्दी की स्थिति हैं तो ब्याज की दर में कमी करके इसमें सुधार नहीं किया जा सकता है क्योंकि पूंजी की सीमांत उत्पादकता (MEC) काफी नीची रहती हैं। ऐसी स्थिति में सरकार, सार्वजनिक निवेश में वृद्धि करके, गुणक के बराबर आय एवं रोजगार में वृद्धि करती हैं एवं जिससे मन्दी की स्थिति में सुधार किया जा सकता हैं।
3. गुणक का सिद्धान्त व्यापार चक्र की विभिन्न अवस्थाओं में कमी होने के कारण गुणक विपरीत दिशा में कार्यशील होता हैं एवं मन्दी की स्थिति आ सकती हैं और निवेश में वृद्धि करने से तेजी की स्थिति आती हैं।
4. यदि अर्थव्यवस्था में मुद्रा प्रसार की स्थिति हैं तो निवेश को घटाकर, गुणक के माध्यम से आय में कमी करके उसे नियंत्रित किया जा सकता हैं। इसी प्रकार अवसाद की स्थिति को भी नियंत्रित किया जा सकता हैं।
5. निवेश के क्षेत्र में गुणक का सिद्धान्त, आय एवं रोजगार के क्षेत्र में निवेश के महत्व को प्रतिपादित करता हैं।
6. **कीन्स** के अनुसार, अल्पकाल में उपभोग फलन लगभग स्थिर रहती हैं, आय एवं रोजगार में होने वाले उच्चावचनों को, निवेश की मात्रा में परिवर्तन करके ठीक किया जा सकता हैं।
7. बचत एवं निवेश में समानता गुणक के माध्यम से बचत और निवेश में समानता स्थापित की जा सकती हैं और यदि इन दोनों में असमानता हैं तो निवेश में वृद्धि से गुणक प्रक्रिया से आय में वृद्धि होती हैं एवं आय में वृद्धि से बचत में भी वृद्धि होती हैं जिससे दोनों में समानता हो जाती हैं।

10.10 गुणक की सीमाएं (Limitations of Multiplier)

गुणक की अनेक सीमाएं हैं जिसके भीतर ही यह सिद्धान्त कार्यशील होता हैं। अब आप विस्तार से इन सीमाओं के बारे में पढ़ेंगे-

1. गुणक सिद्धान्त के लागू होने के लिए यह आवश्यक हैं कि अर्थव्यवस्था में उपभोग की वस्तुएं उपलब्ध हो और अगर ऐसा ना हो तो उपभोग बढ़ेगा ही नहीं और गुणक भी कार्यशील नहीं होगा।
2. इसकी दूसरी सीमा यह हैं कि जब उपभोक्ता को आय प्राप्त होती हैं एवं जब वह उस आय को व्यय करता हैं तो इन दोनों कार्यों के बीच पर्याप्त समय होना चाहिए। यह अवधि जितनी अधिक लम्बी होगी, गुणक भी उतना ही अधिक क्रियाशील होगा।
3. गुणक के प्रभाव के लिए यह भी आवश्यक हैं कि किसी एक क्षेत्र में निवेश का अन्य क्षेत्रों के निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।
4. गुणक प्रभाव उसी समय कार्यशील होगा जब अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार स्तर से नीचे हो एवं अनेक साधन बेकार पड़े हों।
5. गुणक के प्रभाव के कारण आय में जो वृद्धि होती हैं, उस आय प्रभाव में से रिसाव (leakage) नहीं होने चाहिए। जितना ज्यादा रिसाव होगा, गुणक का प्रभाव भी उतना ही कम होगा।

रिसाव के कुछ निम्न प्रकार होते हैं-

1. **ऋण का भुगतान (Payment of Loan):** अगर कोई व्यक्ति ऋणी हैं तो बढ़ी आय का कुछ भाग वह ऋण के भुगतान में प्रयोग कर सकता हैं और यदि ऋण का भुगतान प्राप्तकर्ता व्यय नहीं करेगा तो आय प्रवाह में कमी आएगी एवं निवेश गुणक की शक्ति कम हो जाएगी।
2. **निष्क्रिय जमा (Dormant Deposits):** सरकार की साख नियंत्रण नीति अथवा उचित निवेश के वातावरण के अभाव में बैंकिंग संस्थाएं अपने पास निष्क्रिय जमा रखने लगेंगी तो आय प्रवाह में कमी आएगी।
3. **तरलता पसन्दगी (Liquidity Preference):** यदि लोगों की तरलता पसन्दगी बहुत अधिक हो और अधिक से अधिक नगद अपने पास रखना चाहते हैं तो आय का सृजन प्रभाव कम होगा एवं गुणक कम क्रियाशील होगा।
4. **वित्तीय निवेश (Financial Investment):** बढ़ी हुई आय का कुछ भाग यदि पुरानी प्रतिभूतियों के खरीदने पर व्यय होता हैं एवं जिनके पास आय जाती हैं वह उस आय को व्यय नहीं करता हैं तो गुणक प्रभाव कम होगा।
5. **आयात की मात्रा (Quantity of Import):** यदि बढ़ी हुई आय का कुछ भाग विदेशों से वस्तुओं के आयात पर व्यय होता हैं तो आय का वह भाग अपनी अर्थव्यवस्था में व्यय नहीं होगा और वह दूसरे देश में प्रवाहित हो जाएगा जिससे गुणक प्रभाव कम होगा।

रिसाव के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण बात यह हैं कि $K = \frac{1}{s}$ अर्थात गुणक का मूल्य सीमान्त बचत प्रवृत्ति (MPS) के ऊपर निर्भर करेगा जितनी अधिक सीमान्त बचत प्रवृत्ति होगी सृजित आय से रिसाव उतना ही अधिक होगा और गुणक का मूल्य उतना ही कम होगा।

10.11 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. निवेश गुणक की अवधारणा अर्थशास्त्री.....द्वारा दी गई। (मार्शल **या** कीन्स)
2. तरलता पसन्दगी गुणक का एक.....हैं। (रिसाव **या** अन्त:क्षेपण)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए -

1. गुणक को अंग्रेजी के K अक्षर द्वारा दर्शाया जाता हैं।
2. गुणक प्रभाव उसी समय कार्यशील होगा जब अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार स्तर से ऊपर हो।
3. गुणक का मान सीमान्त बचत प्रवृत्ति (MPS) पर निर्भर करता हैं।

10.12 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने कीन्स द्वारा दिए गए निवेश गुणक के बारे में पढ़ा और जाना की निवेश आय का प्रमुख निर्धारक तत्व हैं। जब किसी अर्थव्यवस्था में निवेश किया जाता हैं तो कुल आय में वृद्धि हो जाती हैं परन्तु आय में वृद्धि केवल निवेश के बराबर ना होकर प्रारम्भिक निवेश की तुलना में कुछ अधिक ही बढ़ जाती हैं। गुणक को अंग्रेजी के K अक्षर द्वारा दर्शाया जाता हैं। इकाई में आपने यह भी जाना की निवेश गुणक सीमान्त उपभोग की प्रवृत्ति के आकार पर निर्भर करता हैं और सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति जितनी ही अधिक होगी, गुणक भी उतना ही अधिक होगा। सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति एवं गुणक के आकार में विपरीत सम्बन्ध होता हैं। गुणक दोनों दिशाओं में कार्य करता हैं, अर्थात आय में थोड़ी सी वृद्धि से राष्ट्रीय आय में कई गुना वृद्धि कर देती हैं और व्यय में कमी, गुणक की उल्टी दिशा में कार्य करने से कई गुनी आय में कमी ला देती हैं। गुणक के बारे में आपने यह भी पढ़ा की गुणक का आकार वर्तमान आय में से होने वाले रिसावों के जोड़ पर निर्भर करता हैं। गुणक तभी कार्य कर सकता हैं जबकि आर्थिक प्रणाली में व्ययों में निरन्तर और

स्वतन्त्र परिवर्तन होते रहते हैं। सामान्यत: सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) शून्य नहीं होती परन्तु जब कभी उपभोक्ता द्वारा अपनी समस्त आय बचा ली जाती हैं तो ऐसी दशा में सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) शून्य हो जाती हैं और गुणक का मूल्य इकाई (1) के बराबर हो जाता हैं। जब सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (MPC) का मान इकाई (1) होता हैं। जब सम्पूर्ण आय व्यय कर दिया जाता हैं तो ऐसी दशा में गुणक का मान अनन्त होता हैं। साधारणतया गुणक का मान इकाई या अनन्त नहीं होता हैं। यह अक्सर इकाई और अनन्त के मध्य विचरण करता रहता हैं।

इकाई में आगे आपने गुणक के लाभ एवं महत्व के बारे में पढ़ा और समझा की गुणक अर्थव्यवस्था में किस तरह योगदान देना हैं एवं इसे किस प्रकार इस्तेमाल किया जाता हैं। निवेश हीनार्थ प्रबन्धन, व्यापार चक्र, मुद्रा प्रसार, पूर्ण रोजगार के लिए महत्वपूर्ण साबित होता हैं। इसके साथ ही आपने निवेश में होने वाले रिसाव के बारे में भी जाना, इसमें पहला रिसाव हैं ऋण का भुगतान, दूसरा निष्क्रिय जमा, तीसरा तरलता पसन्दगी, चौथा, वित्तीय निवेश और पाँचवा आयात की मात्रा।

10.13 शब्दावली (Glossary)

- **गुणक (Multiplier):** उपभोग प्रवृत्ति के दिया होने पर समस्त रोजगार एवं आय एवं निवेश के बीच के सम्बन्ध को गुणक स्थापित करता हैं। यह हमें बताता हैं कि जब निवेश में वृद्धि की जाएगी तो आय में जो वृद्धि होगी और वह निवेश में वृद्धि से ज्यादा होगी। गुणक, निवेश के कारण आय में वृद्धि का अनुपात हैं।
- **निवेश (Investment):** किसी देश की राष्ट्रीय आय एवं रोजगार में निवेश की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। निवेश से तात्पर्य पूँजी में वृद्धिसे हैं जोकि तब होती हैं जब कोई नया मकान बनाया जाए अथवा कोई नई फैक्ट्री लगायी जाए। निवेश से तात्पर्य वस्तुओं के वर्तमान स्टाक में वृद्धि करने से हैं।
- **सीमान्त उपयोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume):** यह उपभोग की प्रवृत्ति को बताती हैं। सीमान्त उपयोग प्रवृत्ति का गुणक से सीधा सम्बन्ध हैं। यह हमेशा शून्य से अधिक एवं इकाई से कम हैं।
- **सीमान्त बचत प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Save):** आय का वह भाग जो बचत कर लिया जाता हैं। इसका गुणक से विपरीत सम्बन्ध होता हैं।
- **संचयी प्रभाव (Cumulative Effect):** वह स्थिति जिसमें दोहराई गई क्रियाओं की एक श्रृंखला का प्रभाव उनके व्यक्तिगत प्रभावों के योग से अधिक होता है।
- **राष्ट्रीय आय (National Income):** राष्ट्रीय आय किसी देश में एक निश्चित समय अवधि में उत्पादित सभी सेवाओं और वस्तुओं के कुल मूल्य का माप है।

10.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. कीन्स 2. रिसाव

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए -

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य

10.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- आहूजा एच.एल. ***उच्चतर समष्टि अर्थशास्त्र*** एस. चन्द प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली।
- लाल एस.एन. ***समष्टि आर्थिक विश्लेषण*** शिव पब्लिशिंग, इलाहाबाद।
- सेठी टी.टी. ***समष्टि अर्थशास्त्र*** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।

10.16 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Dwivedi, D.N. ((2008*Macro-Economics*, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. ((2012*Macro Economics*, Theory and policy, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., ((2008*Economics*, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri ((2003, *Principles of Macro Economics*, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley, G. ((1978, *Macroeconomics : Theory and Policy*, Macmillan, New York.

10.17 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Question)

1. गुणक की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए एवं इसके महत्व और सीमाओं को बताइए।
2. गुणक को परिभाषित कीजिए एवं इसके कार्यकरण को समझाइए।
3. सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति से आप क्या समझते हैं? गुणक एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति के बीच के सम्बन्ध की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

इकाई 11 त्वरक का सिद्धान्त
(Theory of Accelerator)

11.1 प्रस्तावना (Introduction)
11.2 उद्देश्य (Objectives)
11.3 त्वरक की अवधारणा (Concept of Accelerator)
11.4 त्वरक सिद्धान्त की मान्यताएं (Assumptions of Accelerator Principle)
11.5 त्वरक की कार्य प्रक्रिया (Working Process of Accelerator)
11.6 त्वरक सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of Accelerator Principle)
11.7 अल्प-विकसित देशों में त्वरक सिद्धान्त की प्रासंगिकता (Relevance of Accelerator Theory in Under-developed Countries)
11.8 गुणक एवं त्वरक की अंत: क्रिया (Interaction of Multiplier and Accelerator)
11.9 गुणक एवं त्वरक के मध्य अंतर (Difference between Multiplier and Accelerator)
11.10 अल्प-विकसित देशों में अतिगुणक की प्रासंगिकता (Relevance of Super-Multiplier in Under-developed Countries)
11.11 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
11.12 सारांश (Summary)
11.13 शब्दावली (Glossary)
11.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
11.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
11.16 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
11.17 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

इससे पहले की इकाइयों में आपने प्रतिष्ठित सिद्धान्त, केन्स का रोजगार सिद्धान्त, उपभोग फलन, निवेश फलन एवं गुणक का अध्ययन किया। प्रस्तुत इकाई में आप त्वरक को विस्तार से पढ़ेंगे एवं इनकी विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे। प्रस्तुत इकाई में आप त्वरक के बारे में पढ़ेंगे और जानेंगे की त्वरक का अर्थ क्या हैं, यह किस प्रकार कार्य करता हैं एवं इस सिद्धान्त की मान्यता और आलोचनाओं के बारे में भी आप इकाई में विस्तार से पढेंगे। अल्प-विकसित देशों में त्वरक की प्रासंगिकता को समझेगें कि यह अल्प-विकसित देशों में लागू हो सकता हैं या नहीं। त्वरक गुणक से किस प्रकार भिन्न हैं एवं दोनों धारणाओं के बीच अंतर को भी आप इस इकाई के माध्यम से समझेंगे।

11.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- ✓ त्वरक के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ✓ त्वरक की कार्यप्रणाली के बारे में जान सकेंगे।
- ✓ अल्प-विकसित देशों में त्वरक की प्रासंगिकता को समझ सकेंगे।
- ✓ त्वरक एवं गुणक की पारस्परिक क्रिया से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ त्वरक एवं गुणक के बीच अंतर को जान सकेंगे।
- ✓ अल्प-विकसित देशों में अति-गुणक की प्रासंगिकता को जान सकेंगे।

11.3 त्वरक की अवधारणा (Concept of Accelerator)

त्वरक का अर्थ (Meaning of Accelerator)

उपभोग की मात्रा में वृद्धि तथा निवेश की मात्रा में वृद्धि के अनुपात को त्वरक कहते हैं। यह सिद्धान्त उपभोग एवं निवेश के क्रियात्मक सम्बन्ध को स्पष्ट करता हैं। उपभोग की मात्रा में होने वाले परिवर्तनों से निवेश की मात्रा पर पड़ने वाले प्रभावों की माप त्वरक द्वारा की जाती हैं। **क्लार्क (Clark)** ने अपने लेख 'Business Acceleration and the Law of Demand' में जोकि वर्ष 1917 में The Journal of Political Economy नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ, त्वरक के सिद्धान्त पर प्रकाश डाला। **कीन्स** की गुणक की धारणा को खुली अर्थव्यवस्था में प्रयोग करके विदेशी व्यापार गुणक का आंकलन करने की कोशिश की गई।

त्वरक की परिभाषा (Definition of Accelerator)

कुरिहारा (Kurihara) के अनुसार, ***"त्वरक गुणांक प्रेरित निवेश और उपभोग व्यय में प्रारम्भिक परिवर्तन के बीच अनुपात हैं। (The accelerator coefficient is the ratio between induced investment and an initial change in consumption expenditure.)"***

त्वरक सिद्धान्त का सूत्र (Formula of Accelerator)

$$\text{त्वरक (v)} = \frac{\text{प्रेरित निवेश में परिवर्तन } \Delta I}{\text{उपभोग में परिवर्तन } \Delta C}$$

$$\text{Accelerator (v)} = \frac{Change\ in\ Induced\ Investment\ (\Delta I)}{Change\ in\ Consumption\ (\Delta C)}$$

प्रस्तुत समीकरण में त्वरक को v द्वारा दर्शाया गया हैं, प्रेरित निवेश में आने वाले परिवर्तन को ΔI द्वारा दर्शाया गया हैं एवं उपभोग में आने वाले परिवर्तन को ΔC द्वारा दर्शाया गया हैं। समीकरण में त्वरक हमें बताता है कि उपभोग में परिवर्तन के कारण प्रेरित निवेश की मात्रा में कितना परिवर्तन होता है।

11.4 त्वरक सिद्धान्त की मान्यताएं (Assumptions of Accelerator Theory)

त्वरक सिद्धान्त को विस्तार से पढ़नें से पहले आपका इस सिद्धान्त की मान्यताओं के बारें में जानना बहुत आवश्यक हो जाता हैं। आईए इसको जाने।

1. त्वरक सिद्धान्त के लागू होने के लिए अर्थव्यवस्था में अतिरिक्त उत्पादन क्षमता (Excess Production Capacity) विद्यमान नहीं होनी चाहिए अर्थात् विद्यमान पूँजी स्टॉक का पूर्ण उपयोग होना अनिवार्य हैं।
2. फर्म उनकी वस्तुओं की माँग में हुई वृद्धि के लिए अपने संयंत्र की क्षमता में वृद्धि करती है, चाहे वस्तुओं की माँग में हुई वृद्धि अल्पकालिक क्यों ना हो।
3. सरल त्वरक सिद्धान्त मानता है कि पूँजी-उत्पादन अनुपात स्थिर है और तकनीकी सुधारों के तहत् पूँजी-उत्पादन अनुपात में कोई परिवर्तन नहीं होता हैं।
4. खर्च और निवेश में बढ़ोतरी की कोई सीमा नहीं है, पूँजी की आपूर्ति वक्र पूर्ण और लोचदार है अर्थात् पूँजीगत वस्तुओं का उत्पादन तुरंत बढ़ाया जा सकता हैं।
5. अर्थव्यवस्था में कुल उत्पादन की दर में वृद्धि होने के साथ-साथ शुद्ध निवेश में भी वृद्धि होती हैं किन्तु निवेश में वृद्धि होने से पहले उत्पादन में वृद्धि होनी चाहिए।
6. कुल उत्पादन में वृद्धि के साथ उत्पादन की संरचना नहीं बदलती हैं।

11.5 त्वरक की कार्य प्रक्रिया (Working Process of Accelerator)

आप त्वरक की कार्य प्रक्रिया को उदाहरण के द्वारा और अधिक स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे। मान लीजिए कि उपभोग की 1000 वस्तुओं के उत्पादन के लिए 100 मशीनों की आवश्यकता होती है एवं प्रत्येक मशीन की आयु 10 वर्ष है। मशीन को प्रत्येक 10 वर्ष के बाद प्रतिस्थापित करना होगा। इसका अर्थ यह है कि लगातार 1000 उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए उत्पादक को प्रति वर्ष 10 नई मशीनों की आवश्यकता होगी। मशीनों की इस माँग को हम 'पुन: स्थापन' माँग कह सकते हैं। जब उपभोग वस्तुओं की माँग में वृद्धि हो जाती है तो फलस्वरूप मशीनों की पुनः स्थापन माँग के साथ ही कुछ अतिरिक्त मशीनों की माँग भी की जाएगी। नीचे दी गई तालिका की मदद से आप इस उपभोग माँग में होने वाले बदलावों एवं त्वरक की कार्य प्रक्रिया को बेहतर ढंग से समझ पाएंगे।

तालिका 11.1 त्वरक की कार्य प्रक्रिया

वर्ष	वस्तुएँ	आवश्यक मशीनों की माँग	पुन: स्थापन माँग	अतिरिक्त माँग	नई मशीनों की कुल माँग	त्वरक
0	1,000	100	10	0	10	-
1	1,100	110	10	10	20	10
2	1,300	130	10	20	30	2.75
3	1,500	150	10	20	30	0
4	1,600	160	10	10	20	ऋणात्मक

तालिका 11.1 में आपने त्वरक की कार्य प्रक्रिया को समझा जिसे चार वर्ष की समय अवधि द्वारा दर्शाया गया हैं, इसे और विस्तार से आप निम्न बिन्दुओं द्वारा समझेंगे।

i. **0 वर्ष-** मान लीजिए 0 वर्ष या चालू वर्ष में वस्तुओं की माँग 1,000 है जिसके बनाने के लिए 100 मशीनों की आश्यकता पड़ती है। इस वर्ष के अन्त में 10 मशीनें पुनःस्थापित की जाएगी क्योंकि प्रत्येक मशीन का 1/10 वाँ भाग खराब हो जाता है (यह हमारी मान्यता भी है)। अतः हमारी नई मशीनों की कुल माँग होगी $100 \times \frac{1}{10} = 10$ जिसे आप कॉलम 4 एवं 6 में देख सकते हैं। इस चालू वर्ष में त्वरक क्रियाशील वस्तुओं की माँग में कोई वृद्धि नहीं हुई हैं।

ii. 1 वर्ष- अब मान लीजिए अगले वर्ष में वस्तुओं की माँग 1,000 से बढ़कर 1,100 हो जाती है अर्थात् माँग में 10 प्रतिशत की वृद्धि होती है, ऐसी स्थिति में उत्पादन के लिए 10 प्रतिशत मशीनों की आवश्यकता होगी। इस प्रकार कुल मशीनों की माँग 20 हो जाएगी जिसमें अतिरिक्त उत्पादन हेतु 10 नई मशीनों की माँग एवं 10 मशीनों की पुनःस्थापन माँग भी शामिल हैं। इस वर्ष के लिए त्वरक का मूल्य इस प्रकार निकाला जाएगा:

$$\Delta C \text{ (उपभोग में वृद्धि)} = \frac{100}{1000} \times 100 = 10\%$$

(वस्तु की माँग में वृद्धि = 1100 – 1000 = 100)

$$\Delta I \text{ (निवेश में वृद्धि)} = 100\%$$

∴ मशीनों की कुल माँग 10 से बढ़कर 20 अर्थात् दुगुनी हो जाती हैं।

अत: $$\text{त्वरक} = \frac{\Delta I}{\Delta C} = \frac{100}{10} = 10$$

iii. 2 वर्ष - दूसरे वर्ष मान लीजिए वस्तुओं की माँग 1100 से बढ़कर 1300 हो जाती है जिसके लिए 20 मशीनों की आवश्यकता होगी (अर्थात् 110 मशीने 1100 वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए और 20 नई मशीने 200 वस्तुओं की माँग वृद्धि हेतु चाहिए)। अतः 20 मशीनों की नई माँग इसके अतिरिक्त 10 मशीनों की पुनःस्थापना माँग अर्थात् कुल 30 नई मशीनों की माँग की जाएगी जिसे आप कॉलम 6 में भी देख सकते हैं। त्वरक का मूल्य इस प्रकार होगा :

$$\Delta C \text{ (उपभोग में वृद्धि)} = \frac{200}{1100} \times 100 = 18.18\%$$

(वस्तु की माँग में वृद्धि = 1300 – 1100 = 200)

$$\Delta I \text{ (निवेश में वृद्धि)} = 18.18\%$$

∴ मशीनों की कुल माँग 20 से बढ़कर 30 अर्थात् 50% बढ़ जाती हैं।

अत: $$\text{त्वरक} = \frac{\Delta I}{\Delta C} = \frac{50}{18.18} = 2.75$$

iv. 3 वर्ष - यदि तीसरे वर्ष में वस्तुओं की माँग 1300 से बढ़कर 1500 हो जाती है तो इससे कुल नई मशीनों की माँग 30 होगी जिसके अंतर्गत 10 पुनःस्थापन माँग एवं 20 अतिरिक्त माँग शामिल होगी। इस स्थिति में यद्यपि उपभोग में 15.38 प्रतिशत वृद्धि होती है परन्तु इस वृद्धि के बाद भी निवेश नहीं बढ़ता नयी मशीनों की कुल माँग पिछले वर्ष में भी 30 थी और इस वर्ष में भी 30 ही हैं, जैसा की आप कॉलम 6 में भी देख सकते हैं, अर्थात् निवेश की मात्रा पूर्ववत् (Constant) बनी हुई है।

अतः त्वरक का मूल्य $\frac{0}{15.38} = 0$ अर्थात् शून्य होगा।

v. 4 वर्ष - चौथे वर्ष में उपभोग में 7 प्रतिशत की वृद्धि हुई किन्तु मशीनों की माँग में गिरावट आ गयी, नई मशीनों की माँग 30 से 20 हो गई एवं अतिरिक्त माँग 20 से 10, जैसाकि आप तालिका में भी देख सकते हैं। अतः त्वरक ऋणात्मक हो गया।

निष्कर्ष -

त्वरक के उपर्युक्त विवेचन से निम्न बिंदु स्पष्ट होते हैं:

1. जब वस्तुओं की कुल माँग (अर्थात् उत्पादन) में वास्तविक वृद्धि होती है तो निवेश की दर में तीव्र गति से वृद्धि होती है। ऐसी स्थिति में त्वरक अधिक होता हैं।
2. जब माँग की वृद्धि दर यथावत् बनी रहती है तो निवेश की दर भी यथावत् रहती है, अतः त्वरक शून्य हो जाता हैं।
3. जब माँग की दर में गिरावट होने लगती है तो निवेश की दर तीव्र गति से गिरती है। ऐसी स्थिति में त्वरक की धारणा व्यर्थ हो जाती हैं।
4. त्वरक यह चेतावनी देता है कि माँग वृद्धि के क्रम को बनाए रखने से ही आर्थिक क्रिया गतिशील रहेगी अन्यथा उसमें शिथिलता आ जाएगी।

11.6 त्वरक सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of Accelerator Theory)

1. त्वरक सिद्धान्त में स्थिर पूँजी-उत्पादन अनुपात की कटु आलोचना हुई क्योंकि अनुभव सिद्ध प्रमाणों के आधार पर यह अनुपात अथवा त्वरक का मूल्य स्थिर नहीं पाया गया।
2. यह सिद्धान्त फर्मों के निवेश सम्बन्धी निर्णयों में अपेक्षाओं (expectations) के महत्व की अवहेलना करता हैं। सामान्यतः अपनी वस्तुओं की माँग में हुई वृद्धि के बावजूद साहसी (entrepreneurs) संयंत्र क्षमता (Plant capacity) को नहीं बढ़ाता है जब तक कि उन्हें यह विश्वास ना हो जाए कि माँग में हुई वृद्धि स्थायी हैं। निवेशकों की मनोवृत्ति जब मन्दीकाल में निराशापूर्ण होती है तब भी त्वरक कार्य नहीं करता हैं।
3. त्वरक की कार्यशीलता उस समय रूक जाती है जब निवेश बढ़ाने के लिए वास्तविक एवं मौद्रिक साधन सरलता से प्राप्त नहीं किये जा सकते है।
4. उपभोग दर के परिवर्तन से बड़े-बड़े कारखानों में दीर्घकालीन निवेश प्रभावित नहीं होते हैं।
5. निवेश की मात्रा को राजनीतिक शान्ति व स्थिरता जैसे बाह्य तत्व भी प्रभावित करते हैं।
6. त्वरक का सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि अर्थव्यवस्था में विद्यमान उत्पादन का पूर्णतः उपयोग हो रहा है किन्तु आर्थिक समृद्धि के प्रथम चरण में उत्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता हैं।
7. त्वरक सिद्धान्त, निवेश में तकनीकी घटक के महत्व की भी उपेक्षा करता हैं।
8. त्वरक सिद्धान्त, निवेश की दर की सीमाओं की उपेक्षा करता हैं। यह मानना है कि पूँजीगत वस्तुओं का अल्पकालिक पूर्ति वक्र (Shortrun Supply Curve) लोचदार (Elastic) है अर्थात् उत्पादन को बढ़ाने पर पूँजी के स्टॉक में किसी भी सीमा तक वृद्धि करना सम्भव है किन्तु पूँजी स्टॉक को किसी भी सीमा तक बढ़ाना वास्तव में सम्भव नहीं हैं।

11.7 अल्प-विकसित देशों में त्वरक सिद्धान्त की प्रासंगिकता (Relevance of Accelerator Theory in Under-developed Countries)

त्वरक सिद्धान्त, प्रेरित निवेश और उत्पादन के स्तर में तकनीकी सम्बन्ध को प्रकट करता हैं। विकासशील देशों में इन दोनों ही चरों का सामरिक महत्त्व (Strategic importance) है। स्वाभाविक रूप से इसलिए अब यह प्रश्न उठता है कि यदि उत्पादन में कुछ वृद्धि होती है तो त्वरक प्रभाव अल्प-विकसित देशों में निवेश की मात्रा को कितना बढ़ा सकता है। इस धारणा के विकास के समय (1917) से ही कई अर्थशास्त्रियों द्वारा दीर्घकालीन विकास की समस्याओं की व्याख्या करने और विकास मॉडलों का निर्माण करने के लिए किसी ना किसी रूप में त्वरक सिद्धान्त का प्रयोग करने के प्रयास किए गए है।

विकास मॉडलों में प्रायः पूँजी-उत्पादन अनुपात (Capital-Output Ratio) अथवा इसके विपरीत पूँजी की उत्पादकता का प्रयोग किया जाता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से, इस गुणांक का प्रयोग विश्लेषण करने के उद्देश्य से चाहे बिल्कुल ठीक हो सकता है परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से अल्प-विकसित देशों में पूँजी निर्माण की समस्याओं की व्याख्या करने के लिए इस सिद्धान्त पर अधिक भरोसा नहीं किया जा सकता। यहां तक कि यह तथाकथित परिवर्तनकारी (transformational) और सामरिक धारणा (Strategic Concept) (जैसे निर्धनता की गंभीर समस्या, उत्पादन का स्टॉक रहना, पूँजी की दुर्लभता और सामाजिक-आर्थिक अधो-संरचना) के अभाव के बारे में भी कोई उचित उत्तर नहीं देता है। इन देशों के विकास की समस्या का समाधान केवल अंतिम उत्पादों की मांग में परिवर्तन से नहीं किया जा सकता क्योंकि इन देशों में सबसे कठिन समस्या पूँजी की कमी की समस्या है। पूँजी की कमी की समस्या विकास की गति बढ़ाने के किसी भी प्रयास को निष्प्रभावी कर सकती है। अल्प-विकसित देशों में पूँजी निर्माण किसी भी और बात से पहले अवश्य किया जाना चाहिए। अल्प-विकसित देशों में निम्नलिखित तत्त्वों के कारण त्वरक सिद्धान्त का कार्य-करण रुका रहता है:

1. **नए निवेश के लिए कम प्रोत्साहन (Lesser incentive for new investment) -** त्वरक सिद्धान्त के प्रभावपूर्ण कार्यकरण के लिए यह आवश्यक है कि तैयार वस्तुओं की माँग में निरन्तर वृद्धि होनी चाहिए और यह वृद्धि स्थायी होनी चाहिए। अल्प-विकसित देशों में एक बड़ी जनसंख्या और बढ़ती हुई आय के फलस्वरूप माँग में धीरे-धीरे बढ़ती है और यह वृद्धि स्थायी होती है। इससे इस सिद्धान्त के लागू होने का मार्ग तैयार होता है। परन्तु इन देशों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समस्या यह है कि इन देशों में आय का स्तर इतना कम होता है कि जनसंख्या की लगभग सारी आय खाद्य वस्तुओं की खरीद पर ही खर्च हो जाती है जिसके कारण अन्य उपभोग वस्तुओं की माँग कम रहती है। उद्यमियों को इससे भारी निराशा होती है जिसके परिणामस्वरूप निवेश की क्रिया कम रहती है। यहां पर यह दलील दी जा सकती है कि कृषि उत्पादों की माँग में लगातार वृद्धि होने के कारण कृषि उद्यमियों को निवेश को बढ़ाने के लिए शक्तिशाली प्रेरणा प्राप्त होती है। इस बारे में यह उत्तर दिया जा सकता है कि पिछड़े देशों में, कृषि उद्यमियों का निवेश के प्रति दृष्टिकोण विकसित देशों में उद्यमियों के दृष्टिकोण से बहुत भिन्न होता है। इन देशों में वर्षा पर कृषि की अत्यधिक निर्भरता, सरकारी राशनिंग एवं अनाज वसूली नीतियों और ऊँची कीमतें कब तक बनी रहेंगी, इसके बारे में अनिश्चितता के कारण कृषि उत्पादकों को मनोवैज्ञानिक तौर पर प्रेरित नहीं कर पाती है जिसके कारण अनाज की ऊंची कीमतों और कृषि उत्पादों की माँग में वृद्धि के होते हुए भी कृषि उत्पादक निवेश नहीं बढ़ाना चाहते है।
2. **पूँजी संयन्त्रों का कम उपयोग (Lesser use of capital equipment) :** अल्प-विकसित देशों में बहुत पुरानी और अकुशल उत्पादन तकनीक का उपयोग किया जाता हैं। कृषि और दस्तकारियों में पूँजी का प्रयोग बहुत कम होता है। बहुत कम मजदूरी पर रोजगार के लिए विस्तृत मात्रा में बेकार और अर्द्ध-बेकार जनशक्ति की उपलब्धि और वस्तुओं के रूप में मजदूरी के भुगतान से जुडी पूँजी संयन्त्रों के गहन प्रयोग की संभावना में रुकावट पड़ती है। तकनीकी पिछड़ेपन की इस अवस्था में उत्पादन की प्रक्रिया में पूँजी-गहनता (Capital Intensity) बहुत कम होती है इसलिए इन देशों की अर्थव्यवस्था में त्वरक गुणांक लगभग शून्य ही होता है।
3. **अतिरिक्त क्षमता (Excess Capacity) :** त्वरक एक ऐसी आर्थिक प्रणाली से जुड़ा है जहाँ पूँजीगत वस्तुओं के क्षेत्र में अतिरिक्त क्षमता होती है और उपभोग वस्तुओं के क्षेत्र में अतिरिक्त क्षमता नही होती है। अल्प-विकसित देशों में कृषि प्रमुख उपभोग वस्तु उद्योग (Consumer goods industry) होता है क्योंकि कृषि में श्रम को पूँजी के बदले में प्रतिस्थापित किया जा सकता है और श्रम-शक्ति की इन देशों में बहुतायत होती है और औज़ारों एवं संयन्त्रों पर अधिक खर्च किए बिना ही उत्पादन को भी बढ़ाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भूमि के बड़े भूभाग (large tracts of land) को खेती किए बिना खाली छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार यह माना जा सकता है कि खेती के क्षेत्र में श्रम और भूमि के सम्बन्ध में अतिरिक्त क्षमता होने के कारण त्वरक सिद्धान्त लागू नहीं हो सकता है। इसके अतिरिक्त त्वरक सिद्धान्त की क्रियाशीलता के लिए यह आवश्यक है कि पूँजीगत वस्तुओं के उद्योगों में क्षमता-आधिक्य (excess capacity) होनी चाहिए। अल्प-विकसित देशों में इस प्रकार के उद्योग अधिकतर अधिक पूँजी ना होने के कारण अविकसित होते हैं। यदि ऐसी इकाइयां थोड़ी संख्या में विद्यमान हों भी तो उनका क्षमता-आधिक्य (excess capacity) के साथ काम करने का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि इन देशों में उत्पादक क्षमता से कम क्षमता पर संयंत्र चलाने का जोखिम नहीं उठा सकते। अल्प-विकसित देशों में इसके विपरीत पूँजी उद्योगों में क्षमता का अति-उपयोग किया जाता है।
4. **निवेश-योग्य कोष का अभाव (Shortage of Investable Funds):** अल्प-विकसित देशों में उत्पादक क्रिया में रुकावट का एक कारण निवेश-योग्य राशियों की उपलब्धता भी है। त्वरक सिद्धान्त के कार्यकरण के लिए मान्यता ली गई है कि उधार की पूर्ति बहुत लोचशील होनी चाहिए परन्तु अल्प-विकसित देशों के ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक गैर-मौद्रिक क्षेत्र के विद्यमान होने और बैंकिंग विकास के अभाव के कारण निवेश-योग्य पूँजी साधन प्राप्त करने में रुकावट रहती है। अल्प-विकसित देशों में पूँजी

के सामान्य अभाव के कारण ब्याज दरें ऊंचे स्तरों पर रहने का झुकाव रखती हैं और निवेश की वृद्धि की दर कम बनी रहती है।

5. सार्वजनिक निवेश का ऊंचा अनुपात (Large Proportion of Public Investment): अल्प-विकसित देशों में निवेश का अधिक अनुपात सामाजिक, राजनीतिक तथा अन्य बाहरी कारणों से प्रभावित होता है। निजी निवेश ही केवल लाभ अथवा माँग की प्रेरणाओं से किया जाता है। इन देशों में त्वरक सिद्धान्त की वैधता खो देता है क्योंकि इन देशों में सरकारें सार्वजनिक सेवाओं के विस्तार और आर्थिक ऊपरी पूँजी (Overhead Capital) को पैदा करने के उद्देश्य से दीर्घकालीन निवेश योजनाओं को चलाने की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेती हैं। सार्वजनिक निवेश, माँग और लाभ की दर में परिवर्तनों से स्वतन्त्र होता है। ऐसी स्थिति में त्वरक लागू नहीं हो सकता।

6. आयात रिसाव (Import Leakage) : त्वरक के कामकाज पर इन सभी प्रतिबंधों को देखते हुए, भले ही यह मान लिया जाए कि यह काम करता है, अंतरराष्ट्रीय व्यापार के कारण रिसाव के प्रभाव से इसकी शक्ति काफी कम हो सकती है। अल्प-विकसित देशों में सीमान्त आयात प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Import) तथा आयात के लिए माँग की आय लोच (income elasticity) ऊंची होने के कारण निर्यात वस्तु क्षेत्र में निवेश में वृद्धि का कोई सम्भव उत्तोलन प्रभाव (levarage effect) काफी हद तक समाप्त हो जाता है। ऐसी हालत में अल्प-विकसित देशों में त्वरक के लागू होने की कोई संभावना नहीं है।

11.8 गुणक एवं त्वरक की अंत: क्रिया (Interaction of Multiplier and Accelerator)

निवेश व्यय या उपभोग व्यय में हुई वृद्धि में या तो त्वरक शामिल होता है या फिर गुणक शामिल होता है। निवेश व्यय या उपभोग व्यय में से किसी भी एक व्यय में वृद्धि होने से दूसरे व्यय पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक हैं। यह प्रभाव किस हद तक होगा यह इस बात पर निर्भर करेगा कि अर्थव्यवस्था में कितनी अतिरिक्त उत्पादन क्षमता मौजूद है। निवेश में स्वायत्त वृद्धि होने से उत्पादन तथा आय में वृद्धि होती है, जिससे उपभोग व्यय में बढ़ोत्तरी होगी तथा त्वरक सिद्धान्त के अनुसार प्रेरित उपभोग में वृद्धि होने से प्रेरित निवेश भी बढ़ेगा। गुणक तथा त्वरक की पारस्परिक क्रिया का क्रम होगा-

$$\Delta I_P - \Delta y - \Delta C - \Delta I_i - \Delta y - \Delta C - \Delta I_i$$

अगर त्वरक (v) शून्य है तो केवल गुणक कार्यशील होगा तथा इस अवस्था में चक्रीय उतार चढ़ाव नहीं होंगे। यदि त्वरक (v) और सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (b) का योग बहुत कम हो तो आय में चक्रीय उतार चढ़ाव होंगे तथा उनकी सीमा त्वरक (accelerator) एवं सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (Marginal Propensity to Consume) के मूल्यों पर निर्भर करेगी। अगर इनका योग इकाई (1) के समीप है तो उतार चढ़ाव कम आकार के होंगे और यह योग इकाई से अधिक हो तो उतार-चढ़ाव बहुत अधिक आकार के होंगे। सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (b) तथा त्वरक (v) का योग बहुत अधिक होने पर आय में बढ़ती हुई दर से वृद्धि होगी। यदि त्वरक (v) का मूल्य शून्य है तो केवल गुणक प्रभावशील होगा। जब त्वरक का मूल्य (v) काफी अधिक होता है तो कुल माँग में स्वत: वृद्धि के साथ ही आय में विस्फोटक वृद्धि होगी। ऐसी स्थिति में गुणक का प्रभाव गौण हो जाएगा। यदि त्वरक का मूल्य (v) 0.5 के बीच है तो बहुत अधिक चक्रीय उतार चढ़ाव होंगे। त्वरक का मूल्य (v) ऊँचा होने पर बढ़ते हुए आकार के विस्फोटक चक्र उत्पन्न होंगे। यदि त्वरक का मूल्य बहुत कम होगा तो व्यापार चक्र का आकार छोटा होता जाएगा। अगर त्वरक का मूल्य ना तो बहुत अधिक हो ना बहुत कम तो समरूपी व्यापार चक्र उत्पन्न होंगे।

$$Y_t = C_t + I_t \qquad (8.6)$$

$$C_t = a + bY_{t-1} \qquad (8.7)$$

$$I_t = Ia + v\,(Y_{t-1} - Y_{t-2}) \qquad (8.8)$$

समीकरण 8.7 में उपभोग फलन उपभोग व्यय एवं आय में एक समय अवधि का अन्तराल बताता हैं। t समय अवधि का उपभोग इसके तत्काल पूर्व t-1 समय अवधि में प्राप्त Y_{t-1} आय पर निर्भर करता हैं। समीकरण 8.8 में निवेश माँग फलन को दर्शाया गया है, यह बताता हैं कि प्रेरित निवेश में आय के सम्बन्ध

में दो समय अवधि का अन्तराल हैं। t समय अवधि का निवेश इससे पहले की t-1 समय अवधि में हुई ΔY_{t-1} आय वृद्धि का फलन है। द्वितीय घात अन्तराल (Second Order lag) तथा त्वरक दोनों की सहायता से व्यापार चक्र उत्पन्न होते हैं। यदि v = 3, b = 0.5, स्वायत्त उपभोग a = 10, स्वायत्त निवेश I_a = 50 एवं प्रारम्भिक साम्य आय = 120 जिस पर प्रेरित उपभोग 60 और अगर स्वायत्त निवेश में 10 की वृद्धि की जाए तो गुणक एवं त्वरक की पारस्परिक क्रिया तथा साम्य आय में वृद्धि तालिका में प्रदर्शित हैं।

निम्नलिखित तालिका 11.1 के अनुसार स्वायत्त निवेश में निर्दिष्ट राशि की वृद्धि होने पर कुल आय में विस्फोटक रूप में वृद्धि होती हैं। कुल साम्य केवल सततः वृद्धि की प्रवृत्ति है तथा उतार चढ़ाव उत्पन्न नहीं होते क्योंकि त्वरक का मूल्य 3 लिया गया है जो काफी ऊँचा है जबकि सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति का मूल्य 0.5 हैं।

तालिका 11.1 गुणक तथा त्वरक की पारस्परिक क्रिया

समय अवधि	स्वायत्त निवेश (I_a)	प्रेरित निवेश $I_t = v\ (Y_{t-1} - Y_{t-2})$ (v=3)	उपभोग $C = a+b+Y_{t-1}$ (b=0.5)	कुल आय $C + I_a + I_t$
1	2	3	4	5
t-2	50	0	10 + 60	120
t-1	50	0	10 + 60	120
t	60	0	10 + 60	130
t+1	60	30	10 + 65	165
t+2	60	105	10 + 82.5	257.5
t+3	60	277.5	10 + 128.75	475.25
t+4	60	665.25	10 + 238.12	464.37

11.9 गुणक एवं त्वरक के मध्य अंतर (Difference between Multiplier and Accelerator)

गुणक एवं त्वरक की परस्पर क्रिया को आप समझ ही गए हैं, आइए अब इन दोनों के मध्य अंतर को जाने -

तालिका 11.2 गुणक एवं त्वरक के बीच अंतर

अंतर-बिंदु	गुणक (Multiplier)	त्वरक (Accelerator)
स्थिति (Situation)	गुणक, त्वरक की पूर्व की स्थिति है।	त्वरक, गुणक की पश्चात की स्थिति है।
प्रभाव (Effect)	गुणक, विनियोग वृद्धि के कारण आय तथा रोजगार में हुए परिवर्तनों को व्यक्त करता है।	त्वरक, उपभोग में हुए परिवर्तनों के विनियोग पर पड़ने वाले प्रभाव को मापता है।
आश्रितता (Dependence)	गुणक की दशा, उपभोग निवेश पर आश्रित है।	त्वरक के मामले में निवेश उपभोग पर आश्रित है।
आकार (Size)	गुणक का आकार उपभोग प्रवृत्ति पर निर्भर करता है।	त्वरक का मूल्य, पूँजी-उत्पाद अनुपात पर निर्भर करता है।
प्रवृत्ति (Trends)	गुणक, सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति जैसे मनोवैज्ञानिक कारकों पर निर्भर करता है।	त्वरक, तकनीकी कारकों पर निर्भर करता है।
निवेश (Investment)	गुणक क्रिया, स्वतन्त्र निवेश का परिणाम है।	त्वरक क्रिया, प्रेरित निवेश का परिणाम है।
सूत्र (Formula)	गुणक (K) $= \frac{\text{आय में परिवर्तन } \Delta Y}{\text{निवेश में परिवर्तन } \Delta I}$	त्वरक (v) $= \frac{\text{प्रेरित निवेश में परिवर्तन } \Delta I}{\text{उपभोग में परिवर्तन } \Delta C}$

11.10 अल्प-विकसित देशों में अति-गुणक की प्रासंगिकता (Relevance of Super-Multiplier in Under-developed Countries)

गुणक-त्वरक के मध्य परस्पर क्रिया अथवा सुपर गुणक का अधिकतम उत्तोलन प्रभाव (leverage effect) होता है। इससे आय का विस्तार उससे कहीं अधिक हो जाता है जो अकेले गुणक या अकेले त्वरक के कारण होता है। यदि अति-गुणक भारत जैसे अल्प-विकसित देशों में लागू हो सकता हो तो उनकी निर्धनता तथा आर्थिक और तकनीकी पिछड़ेपन की समस्याओं पर आसानी से काबू पाया जा सकता है। लेकिन अल्प-विकसित देशों में कीन्स (Keynes) के निवेश गुणक के कार्यकरण में गम्भीर बाधाएँ हैं। एक आर्थिक प्रणाली में निवेश गुणक के प्रभावपूर्ण ढंग से काम करने के लिए चार आवश्यक शर्तें हैं जोकि इस प्रकार हैं, ***पहली*** अनैच्छित बेरोजगारी का विद्यमान होना, ***दूसरा*** एक औद्योगिक अर्थव्यवस्था जिसमें उत्पादन का पूति वक्र अपेक्षाकृत अधिक लोचपूर्ण हो, ***तीसरा*** उपभोग वस्तु क्षेत्र में अतिरिक्त क्षमता का होना एवं ***चौथा*** कार्यकारी पूँजी की पूर्ति का अपेक्षाकृत अधिक लोचपूर्ण होना। अल्प-विकसित देशों में इन शर्तों के पूरा ना होने के कारण ही निवेश गुणक वहाँ लागू नहीं हो सकता। अल्प-विकसित देशों में **जे. एम. क्लार्क (J. M. Clark)** की त्वरक की धारणा के काम करने की सम्भावना भी नहीं है। एक अर्थव्यवस्था में त्वरक के लागू होने के लिए आवश्यक शर्तें इस प्रकार हैं -

1. उपभोग वस्तु उद्योगों में अतिरिक्त क्षमता का अभाव।
2. पूँजीगत वस्तु उद्योगों में क्षमता के आधिक्य का विद्यमान होना।
3. उत्पादन में पूँजी गहन तकनीकों का प्रयोग।
4. उद्यमियों में निवेश की शक्तिशाली प्रेरणा का होना।
5. निवेश-योग्य राशियों की लोचपूर्ण पूर्ति।
6. कुल निवेश में प्रेरित निवेश का ऊंचा अनुपात।

अल्प-विकसित देशों में, त्वरक को गति से काम करने के लिए आवश्यक उपरोक्त वर्णित शर्तें पूरी नहीं की जाती हैं। उपभोग वस्तु उद्योगों में अतिरिक्त क्षमता अथवा निष्क्रिय क्षमता मौजूद होती हैं। पूँजीगत वस्तु क्षेत्र अविकसित होता है और अधिकतर पूँजी उद्योगों में पूँजी की भारी दुर्लभता के कारण क्षमता-आधिक्य नहीं होता। उत्पादन के तकनीक प्राय: श्रम-प्रधान (labour intensive) होते हैं। बाज़ार के छोटे आकार और जोखिम के उच्च स्तर के कारण, निवेश करने के लिए बहुत कम प्रोत्साहन मिलता है। कुल निवेश में सार्वजनिक निवेश का अनुपात काफी अधिक होता है। निवेश-योग्य राशियों की भारी दुर्लभता होती है। इसके अतिरिक्त आयात की प्रवृत्ति के ऊंचे होने के कारण गुणक और त्वरक दोनों के ही कार्यकरण में गम्भीर रुकावटें पैदा होती हैं।

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि अल्प विकसित देशों में गुणक एवं त्वरक की संयुक्त क्रिया के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ नहीं पाई जाती हैं। विकसित देशों मे भी यह व्यापार चक्र की विस्तार की अवस्था के केवल किसी विशेष बिन्दु पर ही लागू हो सकती है। अर्थव्यवस्था में विस्तार की पूरी अवधि तक परिणामी उछाल बना रह सकता है परन्तु संकुचन के समय में व्यापक अतिरिक्त क्षमता के मौजूद होने के कारण त्वरक के साथ-साथ अति-गुणक का कार्यकरण भी रुक जाता है। अल्प-विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक, सामाजिक और तकनीकी कठोरताओं के काफी अधिक होने के कारण अति-गुणक अथवा गुणक-त्वरक परस्पर क्रिया के लागू होने की कोई सम्भावना नहीं होती हैं।

11.11 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. रिसाव जितना कम होगा, विदेशी व्यापार गुणक उतना ही ..... होगा। (कम **या** अधिक)
2. उपभोग की मात्रा में वृद्धि तथा निवेश की मात्रा में वृद्धि के अनुपात को .....कहते हैं। (त्वरक **या** लगान)

3. अल्प-विकसित देशों में ..... प्रमुख उपभोग वस्तु उद्योग होता है। (विनिर्माण **या** कृषि)
4. सार्वजनिक ....., माँग और लाभ की दर में परिवर्तनों से स्वतन्त्र होता है। (निवेश **या** आपूर्ति)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए -

1. गुणक, त्वरक की पूर्व की स्थिति है।
2. क्लार्क (Clark) का आलेख 'Business Acceleration and the Law of Demand' वर्ष 1919 में प्रकाशित हुआ था।
3. गुणक का आकार उपभोग प्रवृत्ति पर निर्भर करता है।
4. त्वरक का मूल्य, पूँजी-उत्पाद अनुपात पर निर्भर करता है।

11.12 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने त्वरक एवं के बारे में पढ़ा। आपने त्वरक के माध्यम से जाना किस प्रकार उपभोग की मात्रा में होने वाले परिवर्तनों से निवेश की मात्रा पर प्रभाव पड़ता है अर्थात् उपभोग की मात्रा में वृद्धि एवं निवेश की मात्रा में वृद्धि को त्वरक कहते हैं। पूँजीगत पदार्थों की माँग व्युत्पन्न माँग है क्योंकि वह उपभोग वस्तुओं की माँग से उत्पन्न होती हैं। त्वरित गुणक का आकार पूँजी उत्पादन अनुपात और पूँजीगत वस्तुओं के स्थायित्व पर निर्भर करता हैं। निवेश की गति बढ़ाने और बनाए रखने के लिए यह जरूरी हैं कि उपभोग की मात्रा में कमी ना होने दी जाए। त्वरक सिद्धान्त पूँजी उत्पाद अनुपात को स्थिर मानता है और प्रौद्योगिक के द्वारा पूँजी उत्पाद अनुपात में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन नहीं करता हैं। त्वरक सिद्धान्त की अल्प विकसित देशों में प्रासंगिकता के बारे में भी आपने इस इकाई में पढ़ा और साथ ही यह भी जाना कि अल्प विकसित देशों में त्वरक क्यों लागू नहीं हो पाता, जिसे कुल छः बिन्दुओं द्वारा समझाया गया हैं, ***पहला*** नए निवेश के लिए कम प्रेरणा, ***दूसरा*** पूँजी संयन्त्रों का कम प्रयोग, ***तीसरा*** अतिरिक्त क्षमता, ***चौथा*** निवेश-योग्य राशियों का अभाव, ***पाँचवा*** सार्वजनिक निवेश का ऊंचा अनुपात एवं ***छठा*** आयात रिसाव।

इकाई में आगे आपने त्वरक एवं गुणक की परस्पर क्रिया को विस्तार से जाना। इकाई में आपने त्वरक एवं गुणक की परस्पर क्रिया के साथ-साथ त्वरक एवं गुणक के मध्य अंतर को सात बिन्दुओं की मदद से विस्तार से समझा और यह जाना की यह दोनों धारणाएं एक दूसरे से किस प्रकार भिन्न हैं। इसके साथ ही आपने अल्प-विकसित देशों में अति-गुणक (त्वरक एवं गुणक की परस्पर क्रिया) की प्रासंगिकता के बारे में भी जाना और समझा कि अल्प-विकसित देशों में, यह किस प्रकार कार्य करता हैं एवं यह इन देशों में किन शर्तों पर निर्भर करता हैं।

11.13शब्दावली (Glossary)

- **व्युत्पन्न माँग (Derrived Demand):** जब किसी एक वस्तु की माँग दूसरे वस्तु की माँग से उत्पन्न हो तो उसे व्युत्पन्न माँग कहा जाता हैं।
- **क्रियात्मक सम्बन्ध (Functional Relationship):** क्रियात्मक सम्बन्ध वह सम्बन्ध कहलाता हैं जब किसी एक तत्व में होने वाला परिवर्तन अन्य तत्वों में भी परिवर्तन कर देता हैं।
- **व्यापार चक्र (Trade Cycle):** अर्थव्यवस्था में आने वाले आर्थिक परिवर्तन या उतार-चढ़ाव जैसे की तेजी और मंदी के अनुभव को व्यापार चक्र कहा जाता हैं।
- **गुणक (Multiplier):** गुणक निवेश में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप आय में होने वाले परिवर्तन का अनुपात हैं।
- **प्रेरित निवेश (Induced Investment):** इसे वास्तविक निवेश कहते हैं जो लाभ के लिए किया जाता हैं।

- **पूँजीगत वस्तुएं (Capital Goods):** वह वस्तुएं पूँजीगत वस्तुएं कहलाती हैं जिनका प्रयोग उपभोग वस्तुओं को बनाने में किया जाता है जैसे: मशीनें, उपकरण या निर्मित भवन।

11.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. अधिक 2. त्वरक 3. कृषि 4. निवेश

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए -

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य

11.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- एच.एल. आहूजा (2023) ***उच्चतर समष्टि अर्थशास्त्र***, विज़न आई.ऐ. ऐस.।
- ऐस. एन. लाल (2020) ***समष्टिभावी आर्थिक विशलेषण***, लाल पब्लिशिंग।
- प्रो. बी.एल. ओझा एवं मनोज कुमार ओझा (2015) ***समष्टि आर्थिक विशलेषण***, ऐस.बी.पी.डी पब्लिकेशन।
- एम. एल. झिंगन (2023) ***समष्टि अर्थशास्त्र***, विज़न आई.ऐ. ऐस.।
- के. पी. जैन एवं के. एल. गुप्ता (2005) ***मैक्रो अर्थशास्त्र***, नवयुग साहित्य सदन।

11.16 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Sethi, T. T. (2020) *Macro Arthshaastra*, Lakshmi Narain Publication.
- Jhingan, M. L. (2023) *Macro Economics*, VISION IAS.
- Oljha, B. L. (2015) *Macro Economics*, SBPD Publications.
- Ahuja, H. L. (2019) *Macroeconomics Theory and Policy*, S. Chand Publishing.
- Sinha, V. C. (2017) *Macro Economics*, SBPD Publishing house.

11.17 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. गुणक एवं त्वरक की परस्पर क्रिया की व्याख्या कीजिए। अल्प-विकसित देशों में अतिगुणक की प्रासंगिकता के बारे में विस्तार से लिखिए।
2. त्वरक सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं? अल्प-विकसित देशों में त्वरक सिद्धान्त की प्रासंगिकता की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
3. त्वरक सिद्धान्त की कार्य प्रक्रिया को उदाहरण सहित समझाइए।

इकाई 12 समष्टि आर्थिक नीति के उद्देश्य
(Objectives of Macro Economic Policy)

12.1 प्रस्तावना (Introduction)
12.2 उद्देश्य (Objectives)
12.3 समष्टि आर्थिक नीति का अर्थ (Meaning of Macro Economic Policy)
12.4 समष्टि आर्थिक नीति के उद्देश्य (Objectives of Macro Economic Policy)
12.4.1 कीमत स्थिरता (Price Stability)
12.4.2 पूर्ण रोज़गार (Full Employment)
12.4.3 भुगतान सन्तुलन (Balance of Payments)
12.4.4 सतत् आर्थिक विकास (Steady Economic Growth)
12.4.5 आय की अधिक समानता (Greater Equality in Incomes)
12.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
12.7 सांराश (Summary)
12.8 शब्दावली (Glossary)
12.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
12.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
12.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
12.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

12.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामान्यत: नीति का अर्थ नियमों का वह संग्रह है जिसके द्वारा किसी वांछित उद्देश्य को प्राप्त किया जा सकता है। आर्थिक नीति में, अर्थव्यवस्था की वास्तविक और वांछित कार्यप्रणाली के बीच अंतर को कम करने के लिए विभिन्न आर्थिक चरों (जैसे धन आपूर्ति, ब्याज दरें, मूल्य स्तर, आय, रोजगार और विभिन्न राजकोषीय उपकरणों) में परिवर्तन किए जाते हैं अथवा इनके माध्यम से आर्थिक नीति के निर्धारित कुछ उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इस अध्याय में हम समष्टि आर्थिक नीति के उद्देश्यों और उन लक्ष्यों या उद्देश्यों में समन्वय की समस्या का अध्ययन करेंगे।

12.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे कि -

- ✓ समष्टि आर्थिक नीति के अर्थ को जान सकेंगे।
- ✓ समष्टि आर्थिक नीति के उद्देश्यों से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ आप समझ सकेंगे कि सरकार देश में संतुलन बनाने के लिए समष्टि आर्थिक नीति का संचालन कैसे करती है।

12.3 समष्टि आर्थिक नीति का अर्थ (Meaning of Macro Economic Policy)

समष्टि आर्थिक नीति, उन साधनों से संबंधित है जिनके द्वारा सरकार कुछ उद्देश्यों के अनुसार देश के आर्थिक मामलों को विनियमित (regulated) या संशोधित (modified) करती है।

जी. के. शॉ (G. K. Shaw) ने वर्ष 1971 में प्रकाशित अपनी पुस्तक '**An Introduction to the theory of Macro Economic Policy**' में समष्टि आर्थिक नीति के सम्बन्ध में लिखा हैं कि ***"यह समस्त अर्थव्यवस्था के व्यवहार का मूल्यांकन करती है और उन तरीकों को खोजती है जिनसे उसके समस्त कार्यकरण में सुधार किया जा सके। (It attempts to assess the behaviour of the economy as a whole and to seek ways in which its aggregate performance might be improved.)"***

समष्टि आर्थिक नीति के दो प्रमुख साधन होते हैं जिसको आप सभी शिक्षार्थी मौद्रिक नीति तथा राजकोषीय नीति के नाम से जानते है और इनके माध्यम से ही किसी देश की सरकार निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करती हैं।

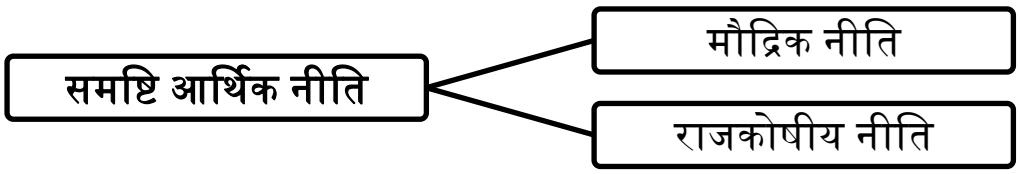

मौद्रिक नीति: मौद्रिक नीति से आशय केन्द्रीय बैंक के द्वारा अपनाए गए उन उपायों से है जिनके द्वारा वह देश की अर्थव्यवस्था में मुद्रा (Currency) तथा साख (Credit) की मात्रा को नियन्त्रित करता है ताकि अर्थव्यवस्था की समष्टि आर्थिक स्थायित्व (Stability) को प्राप्त किया जा सके। मौद्रिक नीति के यंत्रों के बारे में आप संक्षेप में अगली इकाई में पढेंगे।

राजकोषीय नीति: राजकोषीय नीति से आशय सरकार द्वारा अपानाई गई उस नीति से हैं जिसका सम्बन्ध सार्वजनिक आय, व्यय तथा ऋण सम्बन्धी क्रियाओं से होता है। यह नीति अर्थव्यवस्था में कुल माँग (Aggregate Demand) को प्रभावित करने का एक महत्वपूर्ण उपाय है। राजकोषीय नीति के यंत्रों के बारे में आप संक्षेप में अगली इकाई में पढेंगे।

12.4 समष्टि आर्थिक नीति के उद्देश्य (Objectives of Macro Economic Policy)

प्रथम विश्व युद्ध के बाद से समष्टि आर्थिक उद्देश्यों में बहुत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। युद्ध के बाद के समय में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के अन्य उद्देश्य भी सामने आए हैं। जोकि इस प्रकार हैं:

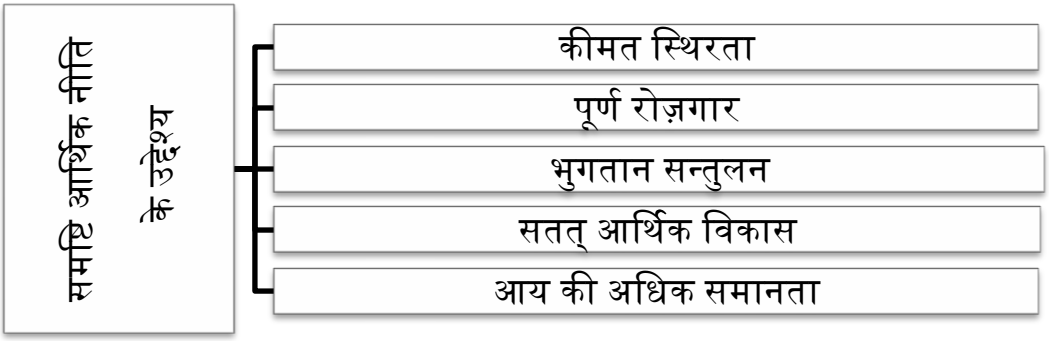

12.4.1 कीमत स्थिरता (Price Stability)

किसी देश में मौद्रिक और राजकोषीय अधिकारियों की जिम्मेदारियों में से पहला उतरदायित्व देश में सामान्य कीमत स्थिरता (Price Stability) के उद्देश्य को प्राप्त करना है। इसकी परिभाषा कुछ इस प्रकार हैं, ***"कीमत स्थिरता कीमतों के सामान्य स्तर में अल्पकाल में विशेष अथवा तीव्र परिवर्तनों के झुकाव का न होना है।"***

इसका मतलब यह नहीं है कि व्यक्तिगत कीमतें स्थिर होनी चाहिए और इसका मतलब यह भी नहीं है कि कीमत सूचकांक (Price Index) स्थिर होना चाहिए। इसका अर्थ केवल यह हैं कि कीमतों के स्तर (Price Level) में परिवर्तन बहुत कम मात्रा में होना चाहिए। कीमतों में बहुत ज्यादा उतार-चढ़ाव को दूर रखना कीमत स्थिरता को दर्शाता है।

पिछले कुछ वर्षों से उचित कीमत स्थिरता को बनाए रखना विकसित और अविकसित दोनों ही देशों में आर्थिक नीति का स्पष्ट उद्देश्य बन गया है। जिस आवश्यक उद्देश्य के लिए कीमत स्थिरता पर जोर दिया जाता है वह कीमतों में तेज उतार-चढ़ाव से बचना है, जिसका अर्थव्यवस्था पर बहुत अस्थिर प्रभाव पड़ता है। वे मुख्य कारण जिनकी वजह से मौद्रिक और राजकोषीय अधिकारियों को मुद्रास्फीति (Inflation) को खत्म करने के लिए कड़े प्रयास करने पड़ते हैं, इस प्रकार हैं:

1. मुद्रास्फीति (Inflation) की अधिकता में बाद की अवधि में संभावित अपस्फीति के अंश पाए जाते हैं।
2. इससे बाज़ार में अनिश्चितता की स्थिति पैदा हो जाती है जिसमें व्यापारियों के लिए भविष्य की योजनाएँ बनाना मुश्किल हो जाता है। विशेषकर, उत्पादन क्षेत्र में निवेश गतिविधियाँ रुक जाती हैं।
3. मुद्रास्फीति(Inflation) की प्रक्रिया समुदाय की बचत (Community savings) को कम कर देती है। परिणामस्वरूप, आर्थिक विकास धीमा होने से पूँजी निर्माण में बाधा आती है।
4. मुद्रास्फीति (Inflation), आय के पुनर्वितरण (Redistribution of Income) का कारण बनती है जोकि स्पष्टत: कम और निश्चित आय वाले लोगों के लिए हानिकारक है। इससे किसी देश के लिए अनुचित सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिणाम सामने आते हैं।
5. मुद्रास्फीति (Inflation), भुगतान संतुलन की समस्या (Problem of Balance of Payment) पैदा करती है क्योंकि एक तरफ यह निर्यात (Export) को हतोत्साहित करती है और दूसरी तरफ यह आयात (Import) को प्रोत्साहित करती है।

6. इससे अर्थव्यवस्था पर तीव्र दबाव (Acute pressure) पैदा होता है, जिसे यदि रोका नहीं गया तो इससे कभी-कभी मुद्रा का परित्याग (abandonment of Currency) हो जाता है और परिणामस्वरूप संपूर्ण मौद्रिक प्रणाली ध्वस्त हो जाती है।

ऊपर बताए गए कारणों से, सामान्य रूप से कीमत में उतार-चढ़ाव और विशेष रूप से मुद्रास्फीति की सार्वभौमिक रूप से निंदा की जाती है और उन्हें संबोधित करने के लिए नीतिगत उपकरणों का उपयोग किया जाता है।

आर्थिक नीति के इस उद्देश्य की उपयुक्तता के बारे में निश्चित रूप से कोई मतभेद नहीं है परन्तु कीमत स्थिरता की सबसे उपयुक्त विधि के बारे में कोई आम सहमति नहीं है। इसमें निम्न तीन विभिन्न विचार हैं जिनमें ***पहला***: धीरे-धीरे बढ़ती कीमतों, ***दूसरा*** धीरे-धीरे गिरती कीमतों एवं ***तीसरा*** स्थिर कीमतों के साथ कीमतों की स्थिरता की पहचान की जाती है। यह तीनों विचार कुछ इस प्रकार हैं:

A. धीरे-धीरे बढ़ती कीमतें (Slowly Rising Prices)-

इस कथन के बारे में अलग-अलह अर्थशास्त्रियों ने अपने विचार दीए हैं, कुछ अर्थशास्त्रियों का कहना यह भी हैं नियमित रूप से नियंत्रित और अत्यधिक उच्च मूल्य स्तर का अभाव पूरी तरह से मूल्य स्थिरता के अनुरूप है। उदाहरण के लिए, **सैमुएलसन (Samuelson)** के अनुसार, यदि कीमत स्तर प्रति वर्ष 2% की दर से बढ़ता है तो मुद्रास्फीति की इस धीमी गति से बनी रहने वाली स्थिति से कोई बड़ा डर नहीं हो सकता है। कुछ अन्य अर्थशास्त्रियों ने 3% की सीमा का प्रस्ताव भी रखा हैं हालाँकि अन्य अर्थशास्त्री इस संबंध में कोई आंकड़े नहीं देते हैं।

धीरे-धीरे बढ़ता मूल्य स्तर उद्यमियों को कई तरह से प्रेरित करता है जैसे:

1. व्यवसाय की लागत में देरी होने से उनके लाभ की मात्रा बढ़ जाती है।
2. यदि एक व्यक्ति का कुछ उधार हैं जो उसको चुकाना है तो बढ़ती कीमतों से उसके ऋण का जो वास्तविक बोझ हैं उसमें कमी होती है।
3. बढ़ती हुई कीमतें आमतौर पर अच्छे व्यवसाय और उच्च बिक्री से मेल खाती हैं।
4. बढ़ती हुई कीमतों की समय-अवधि उद्यमियों को जोखिम लेने के लिए प्रोत्साहित करती है जिसका वे फायदा उठाने के किए तत्पर होते हैं।

इन बातों के आधार पर यह तर्क दिया जाता है कि धीरे-धीरे बढ़ती हुई कीमतें उत्पादन, रोजगार और आय में वृद्धि लाती है।

इस प्रकार के तर्क का तात्पर्य यह है कि समृद्धि और पूर्ण रोजगार तभी संभव है जब व्यवसायी लोग राष्ट्रीय आय का अधिक हिस्सा पाने की उम्मीद करते हैं। यह बढ़ती हुई कीमतों की स्थिति में सम्भव हो सकता है परन्तु यहाँ यह बात ध्यान देने वाली हैं कि लाभ में वृद्धि लाने वाला महत्वपूर्ण तत्व केवल कीमतों में वृद्धि ही नहीं हैं बल्कि कीमतों में वृद्धि कितनी मात्रा में हो रही हैं, इसकी अगणनीयता (uncountability) से है। यदि भविष्य की कीमतों की स्पष्ट रूप से भविष्यवाणी की जा सकती है तो व्यवसायिक लोग अनिवार्य रूप से उस निश्चितता के साथ तालमेल बिठा लेंगे और लाभ की संभावना गायब हो जाएगी। इसलिए यह दावा किया जाता है कि हर साल 3% या उससे कम मूल्य वृद्धि से समुदाय को कोई गंभीर क्षति नहीं होगी।

B. धीरे-धीरे घटती कीमतें (Slowly Falling Prices)-

अर्थशास्त्रियों के एक अन्य समूह का सुझाव यह है कि कीमत स्थिरता धीरे-धीरे गिरती कीमतों से संबंधित है। यह विचारधारा इस बात पर जोर देती है कि वास्तविक लागत कम करने और उत्पादकता बढ़ाने में तकनीकी प्रगति का लाभ मुद्रा की कम मूल्यों के माध्यम से उपभोक्ताओं तक पहुँचना चाहिए। यदि उत्पादकता में वृद्धि से वास्तविक लागत कम हो जाती है लेकिन

कीमतें तब भी ऊंची रहती हैं तो उत्पादकता का लाभ केवल मुट्ठी भर लोगों को ही मिलेगा। ऐसी स्थिति का सामाजिक और आर्थिक दोनों आधारों पर विरोध किया जाता है।

हेन्ज़ (Haines) के अनुसार धीरे-धीरे घटती कीमतों की नीति दो महत्त्वपूर्ण प्रश्न पैदा करती है ***पहला,*** क्या यह सचमुच सही है कि जो लोग उत्पादन में नहीं लगे हैं उन्हें उत्पादन में वृद्धि का हिस्सा मिलना चाहिए? ***दूसरा,*** यदि हर सुधार का लाभ कम कीमतों के माध्यम से उपभोक्ताओं को दिया जाता है और सुधार करने वाले उत्पादकों को लाभ नहीं मिलता है तो क्या इससे उद्योग तेजी से बढ़ पाएंगे?

इन प्रश्नों का कोई स्पष्ट उत्तर नहीं दिया जा सकता परन्तु एक बात फिर भी स्पष्ट है कि लगातार गिरती हुई कीमतें, भले ही धीमी गति से क्यों ना गिर रही हो परन्तु इससे व्यावसायिक इकाइयों का उत्साह और आत्मविश्वास इस हद तक कम हो जाएगा कि अर्थव्यवस्था में मंदी और बेरोजगारी बढ़ सकती है और वह बहुत कम दक्षता स्तर (efficiency level) पर काम करेंगी।

C. स्थिर कीमत स्तर (Constant Price Level)-

धीरे-धीरे कीमतें बढ़ने और घटने से अन्ततः अस्थिरता पैदा हो सकती है। अर्थशास्त्रियों के एक अन्य वर्ग के अनुसार, कीमतों के स्थिर स्तर से इन स्थितियों पर काबू पाया जा सकता है। यह सच है कि स्थिर मूल्य स्तर, आय समूहों के जीवन-स्तर में वृद्धि का आश्वासन नहीं देता है। जैसा कि धीरे-धीरे गिरती कीमतों की स्थिति में होता है, लेकिन इस स्थिति में अर्थव्यवस्था में मंदी का जो डर गिरती कीमतों की स्थिति में पाया जाता है, वह स्थिर कीमत स्तर की स्थिति में नहीं पाया जाता है। स्थिर मूल्य स्तर व्यवसाय वृद्धि को बढ़ाते हुए समग्र समुदाय के जीवन स्तर को बढ़ाता है। स्थिर मूल्य स्तर को बनाए रखना धीरे-धीरे बढ़ते मूल्य स्तरों से बेहतर है क्योंकि धीरे-धीरे बढ़ती कीमतों से बचत में लगातार गिरावट आती है और सीमित तथा कम आय वाले समूहों और उधारदाताओं पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। स्थिर कीमतों की स्थिति में ये बुरे प्रभाव नहीं होते हैं। स्थिर कीमतें व्यापारिक समुदाय को प्रेरित करती हैं और व्यवसाय का विस्तार करती हैं।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से, कीमत स्थिरता का तात्पर्य कीमत स्तर (Price level) में बड़े ऊपर या नीचे की ओर होने वाले परिवर्तनों को रोकना और इसे एक विशेष स्तर के पास बनाए रखना है।

12.4.2 पूर्ण रोज़गार (Full Employment)

1940 के दशक में रोजगार के उच्च और स्थिर स्तर को बनाए रखना आर्थिक नीति का मुख्य उद्देश्य माना जाता था। यह स्पष्ट है कि अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की गारंटी नहीं दी जा सकती। हालाँकि, काम करने के इच्छुक और सक्षम प्रत्येक व्यक्ति को कीमत की गारंटी देना एक असंभव विचार है। ऐसे दो कारण हैं जिनकी वजह से किसी भी देश में कुछ लोग हमेशा बेरोजगार रहेंगे। सबसे पहला, तकनीकी परिवर्तनों के कारण कुछ श्रमिकों को काम से बाहर निकाले जाने की संभावना है। और दूसरा, स्वतंत्र समुदायों में श्रमिकों को चयन की स्वतंत्रता होती है। कुछ लोग काम इसलिए छोड़ देते हैं क्योंकि उन्हें काम पसंद नहीं है, बॉस पसंद नहीं है, उन्हें बाथरूम की दीवारों का रंग पसंद नहीं है, वे कुछ बदलाव चाहते हैं या फिर मालिक उन्हें पसंद नहीं करते। इस प्रकार, यदि श्रमिकों को चयन की स्वतंत्रता होगी तो लोगों में कुछ बेरोजगारी अवश्य होगी। अगर इसे मान लिया जाए तो इसका मतलब यह है कि 100 फीसदी रोजगार लगभग असंभव है। अतः यह आवश्यक है कि उपरोक्त कारणों को ध्यान में रखते हुए बेरोजगारी को मापा जाए तथा शेष श्रम शक्ति (remaining labor force) को नियोजित किया जाए।

संक्षेप में अधिकतम रोजगार को उपयुक्त स्तर पर निर्धारित करना उचित है और आर्थिक नीति को इसकी प्राप्ति और इसे बनाए रखने के लिए चलाना चाहिए।

12.4.3. भुगतान सन्तुलन (Balance of Payments)

भुगतान के अंतर्राष्ट्रीय संतुलन को बनाए रखने के प्रयासों के परिणामस्वरूप उच्च ब्याज दरें, धन आपूर्ति की धीमी वृद्धि दर और घाटे के लिए योजना बनाने में विफलता होती है। इन मुद्रास्फीति विरोधी उपायों से अपस्फीति और आय और रोजगार के स्तर में कमी आती है। मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के उचित संयोजन से, आर्थिक नीति के अन्य उद्देश्यों को नुकसान पहुंचाए बिना, कम से कम अल्पावधि में, वांछित भुगतान संतुलन प्राप्त किया जा सकता है।

12.4.4 सतत आर्थिक वृद्धि (Steady Economic Growth)

आर्थिक वृद्धि को अक्सर प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पाद (per capita GNP) में वृद्धि के रूप में परिभाषित किया जाता है। यह संभवत: दुनिया के विकसित और अविकसित देशों में एक महत्वपूर्ण कारक बना रहेगा। इस कारण से, आर्थिक विकास को आर्थिक नीति उद्देश्यों की सूची में उचित रूप से उच्च स्थान दिया गया है। निम्नलिखित कारणों से विश्व के सभी देशों में आर्थिक विकास ने बहुत अधिक ध्यान आकर्षित किया है-

1. आर्थिक विकास की उच्च दर श्रम बल में प्रवेश करने वाले नए लोगों को रोजगार प्रदान कर सकती है।
2. तकनीकी कारणों से बेरोजगार लोगों को उच्च विकास दर रोजगार प्रदान कर सकती हैं।
3. विकास की अपर्याप्त दर के कारण निवेश और नवाचार के लिए प्रोत्साहन को कम करती है। वास्तव में संभावित उत्पादकता वृद्धि को हासिल नहीं किया जा सकता है और पूँजी स्टॉक के विस्तार की दर धीमी हो जाती है।
4. विकास की उच्च दर बड़ी संख्या में परिवारों के लिए उच्च जीवन स्तर का आश्वासन दे सकती है।
5. अपर्याप्त वृद्धि कार्य दिवस की लंबाई कम करने का दबाव बनाती है। भले ही लोग सामान्य घंटों तक काम करने के इच्छुक हों, फिर भी उन्हें कम समय तक काम करने के लिए मजबूर किया जाता है या अनिच्छुक हो जाते हैं।
6. विकासशील देशों में तीव्र आर्थिक विकास से वैज्ञानिक और तकनीकी विकास को प्रोत्साहित करती है। इससे उत्पादन क्षमता में दीर्घकालिक वृद्धि होती है।
7. तीव्र विकास से विद्यालय, महाविद्यालय, तकनीकी संस्थान, स्वास्थ्य सेवाएं, शहरी और आवास विकास, प्रदूषण के खिलाफ अभियान और संसाधनों की उचित बचत और विकास आदि सामाजिक और आर्थिक पूँजी के निर्माण के अधिक प्रयास किए जाते हैं।
8. उच्च विकास दर के साथ भेदभाव और शोषण की समस्याएँ भी दूर हो जाती हैं क्योंकि लोग अधिक शिक्षित हो जाते हैं और समानता के महत्व को समझते हैं।
9. सैन्य शक्ति के वांछित स्तर को प्राप्त करने के लिए उच्च विकास दर की भी आवश्यकता होती है।
10. यदि विकसित देश उच्च विकास दर बनाए रखते हैं, तो वे व्यापार, ऋण और निवेश के माध्यम से गरीब देशों को बड़े पैमाने पर सहायता प्रदान करने में सक्षम होते हैं।

यहाँ आर्थिक विकास से जुड़ा सबसे बुनियादी सवाल विकास की उचित दर निर्धारित करना है। इसका उत्तर इतना सरल भी नहीं परन्तु ऐसा कहा जा सकता हैं की विकास दर हमेशा अलग-अलग देशों में अलग-अलग होती है।

12.4.5 आय में अधिक समानता (Greater Equality in Incomes)

किसी भी देश के लिए केवल विकास और उच्च आय स्तर हासिल करना ही पर्याप्त नहीं है। बल्कि यह भी महत्वपूर्ण है कि आर्थिक विकास का फल सभी लोगों के बीच समान रूप से वितरित हो। आर्थिक असमानताओं के बने रहने या बढ़ जाने से देश आर्थिक रूप से अक्षम (incompetent), सामाजिक रूप से विस्फोटक और नैतिक रूप से आपराधिक हैं। इसलिए, आर्थिक नीति का लक्ष्य

देश में सभी लोगों के लिए, विशेषकर निम्न आय वर्ग के लोगों के लिए सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित करना होना चाहिए। ताकि उन्हें भी स्थिति (Status), अवसर, स्वतंत्रता और राजनीतिक शक्ति जैसे हर आधार पर संतुष्टि और समानता मिल सके। कोई भी नीति नियमों का संकलन है, जिसके द्वारा किसी वांछित उद्देश्य को प्राप्त किया जा सकता है। आर्थिक नीति में, अर्थव्यवस्था में संतुलन के वास्तविक और वांछित स्तरों के बीच अंतर को कम करने के लिए विभिन्न आर्थिक चरों जैसे मुद्रा की माँग और आपूर्ति, ब्याज दरें, कीमत स्तर, आय, रोजगार और विभिन्न राजकोषीय उपकरणों में परिवर्तन का भी उपयोग किया जाता है अथवा इनके माध्यम से आर्थिक नीति के कुछ निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

निष्कर्ष

व्यापक आर्थिक नीतियों के उद्देश्यों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि सरकार के लिए सभी उद्देश्यों को एक साथ प्राप्त करने का प्रयास करना बिल्कुल भी संभव नहीं है। उद्देश्यों को देश के दीर्घकालिक और अल्पकालिक भविष्य, सामाजिक और आर्थिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अल्पकालिक और दीर्घकालिक उद्देश्यों के रूप में वर्गीकृत किया जाना चाहिए। इष्टतम और स्थिर लक्ष्य विचारों के अनुसार अर्थव्यवस्था के अल्पकालिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीति उपकरणों का प्रभावी ढंग से उपयोग किया जाना चाहिए। हालाँकि, अल्पकालिक उद्देश्यों को प्राप्त करने पर जोर देते समय उचित सावधानी बरतनी चाहिए, जिससे दीर्घकालिक उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधा नहीं आए।

उदाहरण के लिए, कीमत स्थिरता या विनिमय दर स्थिरता अल्पकालिक उद्देश्य हैं लेकिन किसी देश में सतत आर्थिक विकास एक दीर्घकालिक उद्देश्य है जिसे हर देश को हासिल करने की आवश्यकता है। यदि किसी देश की अर्थव्यवस्था मुद्रास्फीति या अपस्फीति से गुजर रही है तो ऐसी स्थिति से उबरने के लिए नियमित आधार पर मौद्रिक और राजकोषीय साधनों का उपयोग किया जाना चाहिए ताकि लगातार मुद्रास्फीति या अपस्फीति आर्थिक विकास में बाधा न बने। इसके अतिरिक्त, सरकार को सावधान रहना चाहिए कि कीमतों को स्थिर करने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली नीति पूँजी संचय और निवेश में सतत विकास प्राप्त करने के अर्थव्यवस्था के दीर्घकालिक लक्ष्यों की प्राप्ति पर प्रतिकूल प्रभाव न डाले।

इसी प्रकार अल्पावधि में विनिमय दर स्थिरता प्राप्त करने के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीति उपकरणों का उपयोग किया जा सकता है। लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि ये उपकरण विकास की गति को धीमा न करें। इसलिए आर्थिक नीति के उद्देश्यों के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए अल्पकालिक समस्याओं के समाधान को प्राथमिकता दी जानी चाहिए लेकिन दीर्घकालिक उद्देश्यों को भी ध्यान में रखना चाहिए। अल्पकालिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उठाया गया कोई भी नीतिगत उपाय, चाहे राजकोषीय हो या मौद्रिक, आर्थिक नीति के दीर्घकालिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में बाधा नहीं बननी चाहिए।

12.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. .....समष्टि आर्थिक नीति का उद्देश्य नहीं हैं। (ब्याज दर तय करना **या** पूर्ण रोज़गार)
2. समष्टि आर्थिक नीति के ..... भाग हैं। (2 **या** 5)
3. मौद्रिक नीति का सम्बन्ध ..... तत्व से हैं। साख नियन्त्रित **या** सार्वजनिक आय)
4. आर्थिक वृद्धि को अक्सर प्रति व्यक्ति ..... तत्व के माध्यम से मापा जाता हैं? (सकल राष्ट्रीय उत्पाद **या** शुद्ध घरेलू उत्पाद)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. समष्टि आर्थिक नीति के उद्देश्यों में से एक उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान सन्तुलन हैं।
2. समष्टि आर्थिक नीति के दस भाग हैं।
3. राजकोषीय नीति का सम्बन्ध साख नियन्त्रित से नहीं हैं।

12.7 सांराश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने समष्टि आर्थिक नीति के बारे में विस्तार से पढ़ा एवं समझा की समष्टि आर्थिक नीति उन संसाधनों से सम्बन्ध रखती हैं जिनसे सरकार कुछ निश्चित उद्देश्यों के अनुसार देश के आर्थिक मामलों का विनिमय अथवा संशोधन करती हैं। इसी के साथ आपने समष्टि आर्थिक नीति के दों मुख्य साधनों के बारे में भी जाना जिन्हें मौद्रिक नीति एवं राजकोषीय नीति कहा जाता हैं। मौद्रिक नीति से आशय केन्द्रीय बैंक द्वारा अपनाए गये उपायों से हैं जिसके द्वारा वह देश की अर्थव्यवस्था में मुद्रा (Currency) एवं साख (Credit) की मात्रा को नियंत्रित करता हैं ताकि अर्थव्यवस्था में संतुलन बना रहें। वहीं दूसरी ओर राजकोषीय नीति सरकार द्वारा अपनाई गई वह नीति हैं जिसका सम्बन्ध सार्वजनिक आय, व्यय तथा ऋर्ण से हैं। यह नीति अर्थव्यवस्था में कुल माँग को प्रभावित करने का महत्वपूर्ण उपाय हैं।

समष्टि आर्थिक नीति के पाँच मुख्य उद्देश्य हैं जिनके बारे में इस इकाई में आपने विस्तार से पढ़ा, यह पाँच मुख्य उद्देश्य कुछ इस प्रकार हैं, ***पहला*** कीमतों की स्थिरता, इस उद्देश्य के अनुसार कीमत स्तर में परिवर्तन बहुत कम होना चाहिए। अत्यधिक कीमत में उतार-चढ़ाव से बचना कीमत स्थिरता को दर्शाता हैं। दूसरा पूर्ण रोज़गार, इस उद्देश्य के अंतर्गत सरकार अपनी नीति को कुछ इस तरह तैयार करती हैं जिससे अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति बनी रहे, अत: कम से कम लोग बेरोजगार हों। ***तीसरा*** अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान सन्तुलन, यह एक रिपोर्ट है जिसमें किसी देश के निवासियों द्वारा शेष विश्व के साथ किए गए लेन-देन का विवरण दिया जाता हैं, सरकार या केंद्रीय बैंक अपनी नीतियों को इस तरह बनाते हैं जिससे अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान सन्तुलन में रहें या अधिशेष, भुगतान संतुलन अधिशेष तब होता है जब निर्यात, सेवाओं और निवेश से आय आयात और बाहरी दायित्वों पर खर्च से अधिक हो जाती हैं। ***चौथा*** सतत आर्थिक वृद्धि, समष्टि आर्थिक नीति के अंतर्गत सतत आर्थिक वृद्धि भी एक मुख्य उद्देश्य हैं, देश की आर्थिक वृद्धि का बहुत महत्त्व हैं, इसके अंतर्गत लोगों को रोजगार, नवाचार के लिए प्रेरणा, उच्च जीवन स्तर आदि जैसे कई लाभ मिलते हैं। ***पाँचवा*** आय की अधिक समानता, आर्थिक असमानताओं के बने रहने या बढ़ जाने से देश आर्थिक रूप से अक्षम, सामाजिक रूप से विस्फोटक और नैतिक रूप से आपराधिक हैं। इसलिए, आर्थिक नीति का लक्ष्य देश में सभी के लिए, विशेषकर निम्न आय वर्ग के लिए सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित करना होना चाहिए। ताकि उन्हें भी स्थिति, अवसर, स्वतंत्रता और राजनीतिक शक्ति जैसे हर आधार पर संतुष्टि और समानता मिल सके। इन सभी उदेश्यों को आपने एक-एक कर बारीकी से पढ़ा और जाना की यह कैसे अर्थव्यवस्था के लिए जरुरी हैं और इन्हें प्राप्त करना हमारे लिए क्यों आवश्यक हैं। इससे आगे की इकाईयों में आप मौद्रिक नीति एवं राजकोषीय नीति को विस्तार से पढेंगे।

12.8 शब्दावली (Glossary)

- **मुद्रास्फ़ीति (Inflation) :** किसी अर्थव्यवस्था में मुद्रा-स्फ़ीति तब होती हैं जब वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में व्यापक वृद्धि होती हैं और सामान्य कीमत स्तर लगातार बढ़ने लगता हैं।
- **सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product) :** किसी देश के सामान्य निवासियों द्वारा एक लेखा वर्ष में देश के अंदर एवं बाहर सृजित आय के कुल योग को सकल राष्ट्रिय उत्पाद कहा जाता हैं।
- **संतुलन (Equilibrium) :** एक ऐसी स्थिति जिसमें सभी प्रभाव एक-दूसरे को रद्द कर देते हैं, जिसके परिणामस्वरूप एक स्थिर या संतुलित स्थिति बनती है।
- **अपस्फीति (Deflation) :** अपस्फीति की स्थिति तब आती हैं जब अर्थव्यवस्था में कीमत स्तर लगातार गिरता हैं।
- **श्रम बल (Labor Force) :** श्रम बल से तात्पर्य जनसँख्या के उस भाग से हैं जिसकी आयु 15 वर्ष से अधिक तथा 60 वर्ष से कम हैं। इस आयु वर्ष को श्रम बल कहा जाता हैं।

- **दक्षता स्तर (Efficiency Level) :** दक्षता स्तर इस बात का माप है कि कोई तंत्र या प्रक्रिया द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए संसाधनों का कितनी अच्छी तरह उपयोग करती है।
- **कीमत स्तर (Price Level) :** कीमत स्तर का तात्पर्य किसी विशिष्ट समय अवधि में किसी देश या क्षेत्र में वस्तुओं और सेवाओं की औसत कीमत से है। यह अर्थशास्त्र में एक प्रमुख संकेतक है और अर्थशास्त्रियों द्वारा इसकी बारीकी से निगरानी की जाती है। कीमत स्तर महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मुद्रास्फीति की भविष्यवाणी करने में मदद कर सकता है जोकि नीति निर्माताओं और केंद्रीय बैंकों के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय है।
- **बेरोजगारी की दर (Rate of Unemployment) :** बेरोजगारी की दर, श्रम की आपूर्ति का पूरी तरह उपयोग न हो पाने का पैमाना है । यह ऐसे लोगों के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में अर्थव्यवस्था की असमर्थता को दर्शाता है जोकि काम तो करना चाहते हैं मगर कर नहीं पा रहे हैं। हालांकि वे रोजगार के लिए उत्सुक हैं और इसे पाने के लिए सक्रिय प्रयास भी कर रहे हैं।
- **चयन की स्वतंत्रता (Freedom of choice) :** पसंद की स्वतंत्रता एक व्यक्ति का बाहरी पक्षों द्वारा प्रतिबंधित किए बिना कई विकल्पों में से एक को चुनने का अधिकार है। यह एक मानव अधिकार है जो लोगों की क्षमता की रक्षा करता है: अपना पैसा कैसे खर्च करना है, अपने स्वास्थ्य देखभाल निर्णय स्वयं लें, आजीविका के लिए काम करें, और दोस्तों और परिवार के साथ संबंध रखें।
- **विनिमय दर (Exchange Rate) :** विनिमय दर एक मुद्रा की सापेक्ष कीमत है जिसे दूसरी मुद्रा (या मुद्राओं के समूह) के संदर्भ में व्यक्त किया जाता है।
- **केन्द्रीय बैंक (Central Bank) :** केंद्रीय बैंक एक सार्वजनिक संस्थान है जोकि किसी देश या देशों के समूह की मुद्रा का प्रबंधन करता है और धन आपूर्ति को नियंत्रित करता है - वस्तुत:, प्रचलन में धन की मात्रा। कई केंद्रीय बैंकों का मुख्य उद्देश्य मूल्य स्थिरता है।

12.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ब्याज दर तय करना
2. 2
3. साख नियन्त्रित
4. सकल राष्ट्रीय उत्पाद

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य
2. असत्य
3. सत्य

12.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), ***Macroeconomic Analysis***, Galgotia Publications, New Delhi

12.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics, Theory and policy***, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley,G. (1978), ***Macroeconomics : Theory and Policy***, Macmillan, New York

12.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. समष्टि आर्थिक नीति से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख दों उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
2. समष्टि आर्थिक नीति के मुख्य उदेश्यों की स्पष्ट रूप से व्याख्या कीजिए।
3. आर्थिक मूल्य स्थिरता और पूर्ण रोजगार के बीच संघर्ष को कैसे हल किया जा सकता है? व्याख्या कीजिए।

इकाई-13 मौद्रिक नीति के यंत्र
(Tools of Monetary Policy)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)
13.2 उद्देश्य (Objectives)
13.3 मौद्रिक नीति का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Monetary Policy)
13.4 मौद्रिक नीति के उद्देश्य (Objectives of Monetary Policy)
13.5 मौद्रिक नीति के यंत्र (Tools of Monetary Policy)
13.5.1 परिमाणात्मक विधियाँ (Quantitative Methods)
13.5.2 गुणात्मक विधियाँ (Qualitative Methods)
13.6 अल्प-विकसित देशों में मौद्रिक नीति का महत्व एवं सीमाएं (Importance and Limitations of Monetary Policy in Under-Developed Countries)
13.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
13.8 सांराश (Summary)
13.9 शब्दावली (Glossary)
13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
13.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
13.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
13.13 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

वर्तमान युग में प्रत्येक देश में केन्द्रीय बैंक का महत्त्व बहुत बढ़ गए हैं। जिसका कारण यह है कि किसी भी देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने में मौद्रिक नीति सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मौद्रिक नीति से तात्पर्य उन उपायों से है जो मुद्रा की पूर्ति, लागत और उपलब्धता को प्रभावित करके किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को अधिक कुशलता से चलाने में मदद करते हैं। इसमें बैंक दर, खुले बाजार की क्रियाएँ, रिजर्व आवश्यकताओं में परिवर्तन और गुणात्मक साख नियंत्रण के मौद्रिक उपकरणों में जानबूझ कर किए गए परिवर्तन शामिल होते हैं।

13.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- ✓ मौदिक नीति के अर्थ को समझ कर उसे परिभाषित कर सकेंगे।
- ✓ मौदिक नीति के उद्देश्यों से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ मौद्रिक नीति के दो मुख्य यंत्रों (परिमाणात्मक एवं गुणात्मक विधि) के बारे में जान सकेंगे।
- ✓ अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति के महत्व एवं सीमाओं को समझ सकेंगे।

13.3 मौद्रिक नीति का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Monetary Policy)

किसी देश में मौद्रिक नीति का निर्माण तथा क्रियान्वयन देश का केन्द्रीय बैंक करता है। मौद्रिक नीति से आशय केन्द्रीय बैंक के द्वारा अपनाए गए उन उपायों से है जिनके द्वारा वह अर्थव्यवस्था में मुद्रा (Currency) तथा साख (credit) की मात्रा को नियन्त्रित करता है ताकि अर्थव्यवस्था की समष्टि आर्थिक स्थायित्व को प्राप्त किया जा सके।

जॉनसन (Johnson) के अनुसार, ***"मौद्रिक नीति का आशय केन्द्रीय बैंक द्वारा मुद्रा की पूर्ति पर नियन्त्रण रखने की नीति से है, ताकि सामान्य आर्थिक नीति के उद्देश्य पूरे हो सकें।"***

पॉल ऐंजिग (Paul Einzing) के अनुसार, ***"मौद्रिक नीति के अन्तर्गत उन सभी मौद्रिक निर्णयों और उपायों को शामिल किया जाता है जिनका उद्देश्य मौद्रिक प्रणाली को प्रभावित करना हो।"***

केण्ट (Kent) के अनुसार, ***"मौद्रिक नीति का आशय एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए चलन का विस्तार और संकुचन करने की व्यवस्था से है।"***

जी. के. शॉ (G. K. Shaw) के शब्दों में, ***"मौद्रिक नीति से हमारा अभिप्राय मौद्रिक अधिकारियों द्वारा मुद्रा की मात्रा, उपलब्धि तथा लागत (ब्याज की दर) में परिवर्तन करने के लिए की गयी चेतन क्रियाएं हैं। (By monetary policy we mean any conscious action undertaken by the monetary authorities to change the quantity, availability or cost (rate of interest) of money.)"***

13.4 मौद्रिक नीति के उद्देश्य (Objectives of Monetary Policy)

मौद्रिक नीति के उद्देश्य सम्बन्धी विषय पर बहुत मतभेद रहा है तथा समय-समय पर अलग-अलग उद्देश्य को महत्व दिया गया है। मौद्रिक नीति के निम्न पांच उद्देश्य है।

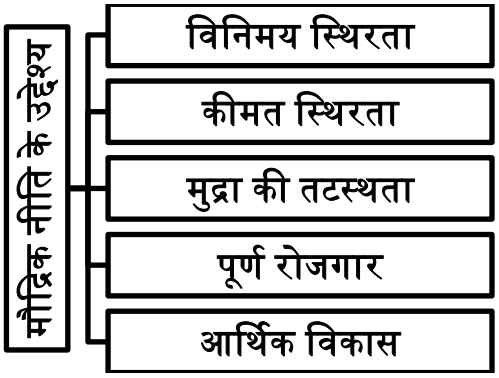

1. **विनिमय स्थिरता (Economic Stability)** - मौद्रिक नीति का उद्देश्य विनिमय दर में स्थिरता बनाये रखना है। विनिमय स्थिरता का आशय विनिमय दर को स्थायी बनाए रखने से है अथवा बाहरी सन्तुलन प्राप्त करने से है।
2. **कीमत स्थिरता (Price Stability)** - 1929 से 1933 की महामन्दी के बाद मौद्रिक नीति का मुख्य उद्देश्य कीमत-स्तर में स्थिरता और व्यापारिक चक्रों की स्थिरता बनाए रखना बन गया है।
3. **मुद्रा की तटस्थता (Neutrality of Money)** - तटस्थ मुद्रा की नीति का सुझाव सर्वप्रथम **विक्स्टीड (Wicksteed)** ने प्रस्तुत किया था। तटस्थ मुद्रा नीति का सविस्तार विवेचन **प्रो. हेयक (Prof. Heyek)** ने अपनी पुस्तक **'Price and Production'** में किया है। तटस्थ मुद्रा नीति, स्वतन्त्र व्यापार की विचारधारा पर आधारित है। इस नीति के समर्थकों का कहना है कि मुद्रा की मात्रा में परिवर्तन के परिणामस्वरूप देश के आर्थिक जीवन में अस्थिरता उत्पन्न होती है इसलिए यदि देश में आर्थिक स्थिरता बनाए रखनी है तो मुद्रा की मात्रा में कोई परिवर्तन नहीं करना चाहिए मुद्रा को पूर्ण रूप से तटस्थ बनाया जाना चाहिए।
4. **पूर्ण रोजगार (Full Employment)** - पूर्ण रोजगार का उद्देश्य मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य माना जाता है। जब पूर्ण रोजगार का उद्देश्य प्राप्त हो जाएगा तो अन्य उद्देश्य स्वयं ही पूर्ण हो जाएगे। मौद्रिक नीति न केवल पूर्ण रोजगार के स्तर तक पहुँचने में मदद कर सकती है बल्कि इस स्तर को प्राप्त करने के बाद अर्थव्यवस्था को इसी स्तर पर बनाए रखने के लिए भी इस्तेमाल की जा सकती है।
5. **आर्थिक विकास (Economic Growth)** – अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य आर्थिक विकास और कीमत स्थिरता होना चाहिए।

13.5 मौद्रिक नीति के यंत्र (Tools of Monetary Policy)

केंद्रीय बैंक की मौद्रिक नीतियों के दो मुख्य यंत्र हैं जिन्हें परिमाणात्मक विधियाँ एवं गुणात्मक विधियाँ कहा जाता हैं। इसकी परिमाणात्मक विधियों से अभिप्राय बैंकों की ऋण मात्रा को नियंत्रित करने से होता है।

इस इकाई में आप इन दोनों विधियों के बारे में विस्तार से पढेंगे एवं यह समझेंगे की यह दोनों विधियाँ आखिरकार किस प्रकार से किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को संतुलन में लाने का कार्य करती हैं।

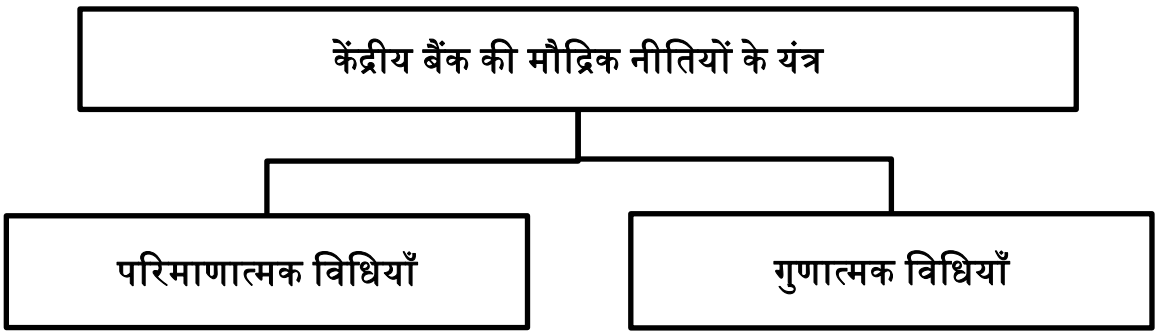

13.5.1 परिमाणात्मक विधियाँ (Quantitative Methods)

परिमाणात्मक विधियों का सम्बन्ध साख की मात्रा तथा उसकी कीमत अर्थात ब्याज दर के नियन्त्रण से होता है। इसमें बैंक दर नीति, खुले बाजार की क्रियाओं तथा न्यूनतम वैधानिक कोष अनुपात आदि विधियाँ आती है। इसके अंतर्गत आने वाली प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं।

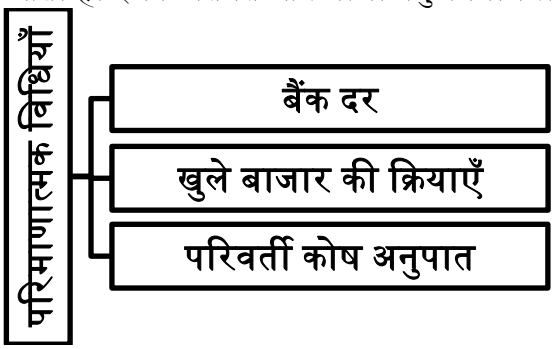

1. बैंक दर (Bank Rate) - बैंक दर नीति, साख मुद्रा पर नियंत्रण रखने की अप्रत्यक्ष और काफी पुरानी विधि है। बैंक दर, वह दर है जिस पर किसी देश का केन्द्रीय बैंक, व्यापारिक बैंकों को, सरकारी एवं अन्य स्वीकृत प्रतिभूतियों की जमानत पर ऋण प्रदान करता है। इसे कटौती की दर (Discount Rate) भी कहते है।

बैंक दर के अलावा एक बाजार दर (Market Rate) भी होती है। बाजार दर, वह दर है जिस पर व्यापारिक बैंक सामान्य जनता को ऋण देने के लिए तैयार होता है। बैंक दर में वृद्धि के कारण बाजार दर भी ऊँची हो जाती है और इस प्रकार व्यापारी तथा निवेशकर्ता व्यापारिक बैंकों से कम मात्रा में मुद्रा उधार लेंगे जिससे साख का संकुचन हो जाएगा। केन्द्रीय बैंक द्वारा बैंक दर को घटने पर ब्याज दर भी नीची हो जाएगी। सस्ती बाजार ब्याज दर पर व्यापारियों द्वारा ऋण लेना अपेक्षाकृत अधिक लाभदायक होगा और साख का विस्तार हो जाएगा। नीची बैंक दर रखने की नीति, सस्ती मुद्रा नीति (Cheap Money Policy) और ऊँची बैंक दर रखने की नीति महँगी मुद्रा नीति (Dear Money Policy) कहलाती हैं।

यदि अर्थव्यवस्था में मुद्रा-स्फीति (Inflation) की दशा विद्यमान है तो इसके नियन्त्रण हेतु केन्द्रीय बैंक, बैंक दर को बढ़ा देगा क्योंकि इसके फलस्वरूप व्यापारिक बैंक भी ब्याज दर को बढ़ा देंगे और व्यापारी वर्ग बैंकों से ऋण लेना कम कर देंगे। इससे अर्थव्यवस्था में साख का संकुचन हो जायेगा। इसके विपरीत यदि अर्थव्यवस्था में मुद्रा-विस्फीति (Deflation) की दशा विद्यमान है तो उसको रोकने के लिए केन्द्रीय बैंक को बैंक दर कम करनी पड़ती है। जब बैंक दर कम हो जाती है तो उससे बाजार ब्याज दर भी कम हो जाती है। इससे व्यापारी अधिक मात्रा में बैंकों से ऋण लेना चाहेंगे और इस प्रकार साख का विस्तार हो जाएगा।

बैंक दर नीति की सफलता के लिए दो बातें आवश्यक होती हैं। ***पहली***, बैंक दर में परिवर्तन के फलस्वरूप ब्याज दरों में भी वैसा ही परिवर्तन होना चाहिए अर्थात् बैंक दर बढ़ने पर बाजार ब्याज दर बढ़नी चाहिए और बैंक दर के कम हो जाने पर बाजार ब्याज दर भी कम हो जानी चाहिए। ***दूसरी***, अर्थव्यवस्था के आर्थिक ढाँचे में लोच होनी चाहिए ताकि बैंक दर में प्रत्येक परिवर्तन का उत्पादन, रोजगार, लागतों, कीमतों तथा मजदूरी आदि पर उपयुक्त प्रभाव पड़ सके।

2. खुले बाजार की क्रियाएँ (Open Market Operations) - केन्द्रीय बैंक द्वारा परिमाणात्मक साख नियन्त्रण का दूसरा महत्त्वपूर्ण तरीका है- खुले बाजार की क्रियाएँ। खुले बाजार की क्रियाओं से अभिप्राय केन्द्रीय बैंक द्वारा भुद्रा एवं पूँजी बाजारों में सरकारी तथा अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों को खरीदना और बेचना होता है।

खुले बाजार की क्रियाओं के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक बाजार में प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय करता है। इस क्रिया से मुद्रा बाजार में तत्काल मुद्रा की मात्रा प्रभावित होती है। केन्द्रीय बैंक जब प्रतिभूतियों को बेचता है तो मुद्रा बाजार में मुद्रा की मात्रा कम होने लगती है। इसके विपरीत केन्द्रीय बैंक जब प्रतिभूतियों को बाजार से खरीदता है तो मुद्रा बाजार में मुद्रा की मात्रा बढ़ जाती है। केन्द्रीय बैंक द्वारा खुले बाजार की क्रिया व्यापारिक बैंकों के नकद कोष को प्रभावित करती है जिसके फलस्वरूप व्यापारिक बैंकों की साख निर्माण की शक्ति कम अथवा अधिक हो जाती है। इससे मुद्रा की मात्रा में और अधिक वृद्धि अथवा कमी होती है।

मुद्रा स्फीति के दिनों में केन्द्रीय बैंक बाजार में प्रतिभूतियों को बेचना शुरू कर देता है। इसके फलस्वरूप व्यापारिक बैंकों की जमा कम हो जाएगी क्योंकि साधारणतया इन प्रतिभूतियों के क्रेता व्यापारिक बैंक अथवा उनके ग्राहक होते हैं। व्यापारिक बैंकों द्वारा प्रतिभूतियाँ खरीदे जाने पर केन्द्रीय बैंक प्रतिभूतियों के विक्रय मूल्य के बराबर व्यापारिक बैंकों के खाते को जमा (Debit) कर देते हैं। इसके अलावा जितने मूल्य की प्रतिभूतियाँ व्यापारिक बैंकों के ग्राहकों द्वारा खरीदी जाती हैं तो भी व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों में कमी आ जाएगी क्योंकि अब इन प्रतिभूतियों के क्रेता बैंकों में विद्यमान अपने जमा खातों में से रुपये निकालकर केन्द्रीय बैंक को भुगतान करेंगे। इस प्रकार व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों में कमी होने पर उनकी साख निर्माण की शक्ति कम हो जाएगी और ऋण की कुल मात्रा कम हो जाएगी।

मुद्रा-विस्फीति (Deflation) की अवस्था में केन्द्रीय बैंक प्रतिभूतियों को खुले बाजार में खरीदता है। केन्द्रीय बैंक प्रतिभूतियाँ बेचने वाले व्यक्तियों या संस्थाओं को चैकों द्वारा भुगतान करता है जिन्हें वे व्यक्ति अथवा संस्थाएँ अपने बैंक में जमा कर देते हैं। व्यापारिक बैंकों के पास अधिक जमा राशि आने से उनकी साख निर्माण की शक्ति अधिक हो जायेगी। इससे साख का विस्तार होगा और आर्थिक मन्दी से बचा जा सकेगा।

खुले बाजार क्रियाओं के सफलता के लिए चार बातें आवश्यक होती हैं। ***पहली***, एक अच्छी तरह से विकसित और व्यवस्थित प्रतिभूति बाजार का होना जरूरी है। ***दूसरी***, वाणिज्यिक बैंकों के कोष प्रतिभूतियों के विक्रय और क्रय से प्रभावित होने चाहिए। ***तीसरी***, केन्द्रीय बैंक के पास अर्थव्यवस्था में मुद्रा की पूर्ति को प्रभावित करने के लिए पर्याप्त प्रतिभूतियाँ होनी चाहिए। ***चौथी***, सरकारी प्रतिभूतियों के मूल्य में शीघ्र उच्चावचन नहीं होना चाहिए।

3. परिवर्ती कोष अनुपात (Variable Reserve Ratio) - वैधानिक कोष आवश्यकताओं के अनुसार वाणिज्यिक बैंक कोष रखने के लिए बाध्य है। यह वाणिज्यिक बैंकों की साख निर्माण क्षमता को जल्दी और सीधे से नियंत्रित करने की एक विधि है। वाणिज्यिक बैंकों को दो प्रकार के कोष रखने पड़ते हैं।

(क) नकद कोष अनुपात (Cash Reserve Ratio) : इसका अभिप्राय वाणिज्यिक बैंकों के द्वारा केन्द्रीय बैंक के पास रखे जाने वाले शुद्ध माँग और सावधि देयताओं के एक न्यूनतम प्रतिशत से है।

नकद कोष अनुपात में परिवर्तन वाणिज्यिक बैंकों की साख निर्माण क्षमता को प्रभावित करता है। नकद कोष अनुपात में बढ़ोतरी वाणिज्यिक बैंकों के अतिरिक्त कोष को कम कर देती हैं और उनकी साख निर्माण की क्षमता को सीमित कर देती है।

(ख) वैधानिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio) : इससे अभिप्राय शुद्ध माँग और सावधि देयता के उस न्यूनतम प्रतिशत से है जो वाणिज्यिक बैंकों को अपने पास रखना होता है। वैधानिक तरलता अनुपात को तरल परसंपत्तियों जैसे अतिरिक्त कोष, गैर ऋणग्रस्त प्रतिभूतियों सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों या दूसरे बैंकों के पास चालू खाते की राशि के रूप में रखा जाता है। वैधानिक तरलता अनुपात में परिवर्तन बैंकों की सरकारी प्रतिभूतियों को बेचने या उनके बदले में केन्द्रीय बैंक से उधार लेने की स्वतंत्रता को प्रभावित करता है। वैधानिक तरलता अनुपात में बढ़ोतरी बैंकों की साख देने की क्षमता को कम कर देती है।

केन्द्रीय बैंक नकद कोष अनुपात और वैधानिक तरलता अनुपात में परिवर्तन करके बैंकों की साख निर्माण क्षमता को प्रभावित कर सकता है।

13.5.2 गुणात्मक विधियाँ (Qualitative Methods)

गुणात्मक विधियाँ साख के प्रवाह को उचित कार्यों में लगाने की चेष्टा करती हैं जबकि परिमाणात्मक विधियाँ केवल साख की कुल मात्रा को प्रभावित करती हैं। गुणात्मक विधियों के अन्तर्गत इस बात का ध्यान रखा जाता है कि साख को किन कार्यों में लगाना चाहिए। इन विधियों द्वारा साख नियन्त्रण की प्रक्रिया को चयनात्मक साख नियन्त्रण (Selective Credit Control) भी कहते हैं। इसके अंतर्गत आने वाली प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं।

1. साख की राशनिंग (Rationing of Credit) - यह साख को नियन्त्रित करने का एक महत्वपूर्ण तरीका है। जब केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंक के द्वारा उत्पन्न हुई साख की माँग हेतु आपूर्ति को पूरा नहीं कर पाता है तब वह साख की राशनिंग करता है। साख निर्माण की अधिकतम सीमा निश्चित करके विभिन्न बैंको के लिए अभ्यंश (Quota) निर्धारित कर दिया जाता है।

केन्द्रीय बैंक साख की राशनिंग चार प्रकार से कर सकता है। ***पहला,*** किसी बैंक के बिलों को पुन: भुनाने (Rediscounting) की सुविधा पूर्ण रूप से समाप्त करके। ***दूसरा,*** किसी बैंक के बिलों को पुन: भुनाने की सुविधा सीमित करके। ***तीसरा,*** कुछ बैंकों की ऋण प्राप्ति की सीमाएं निर्धारित करके। ***चौथा,*** विभिन्न बैंकों के लिए एवं विभिन्न कार्यों के लिए साख के अभ्यंश (Quota) निर्धारित करके।

बेजमैन ने लिखा है कि ***"अधिक पिछड़ी आर्थिक स्थितियों में साख का कोटा निर्धारित कर देना ही केवल एक ऐसी निर्णायक विधि है जो केन्द्रीय बैंक द्वारा व्यवसाय की ओर से अधिक साख की माँग को रोकने के लिये प्रयोग में लाया जा सकता है।"***

यह तरीका अत्यन्त प्रत्यक्ष एवं प्रभावपूर्ण है किन्तु केन्द्रीय बैंक को इसे लागू करने में कठिनाई होती है। देश की अर्थव्यवस्था के एक बहुत बड़े भाग पर सरकारी नियन्त्रण का अभाव रहना भी इस रीति के प्रयोग में एक बहुत बड़ी कठिनाई होती है। यह पद्धति नियोजित अर्थव्यवस्था के लिए अधिक उपयुक्त होती है तथा इसके प्रयोग से देश में सुव्यवस्थित साख व्यवसाय का निर्माण हो सकता है।

2. **उपभोक्ता साख का नियमन (Regulation of Consumer Credit)** - वस्तुओं की माँग को नियन्त्रित करने के लिए केन्द्रीय बैंक उपभोक्ता साख का भी नियमन करती है। साख की अधिकतम भुगतान अवधि निश्चित कर दी जाती है ताकि उपभोक्ता ऋणों का भुगतान शीघ्र अति शीघ्र कर सके। इसका उद्देश्य उपभोक्ताओं पर माल खरीदार विक्रेताओं पर माल बेचने तथा बैंकों द्वारा ऋण देने पर प्रतिबन्ध लगाना है। इससे साख के प्रसार पर रोक लगाई जा सकती है। यदि उपभोक्ता द्वारा माँग को बढ़ाना हो तो कम दर पर ऋण को उपलब्ध कराना, किस्तों पर कम ब्याज दरे लगाना, भुगतान अवधि सहज कर देना जैसे नियमों को लागू किया जाता है।

3. **सीमान्त आवश्यकताओं में परिवर्तन (Change in Margin Requirements)** - केन्द्रीय बैंक ऋणों की सीमान्त आवश्यकताओं में परिवर्तन करके गुणात्मक साख नियन्त्रण की नीति को लागू कर सकता है। जब केन्द्रीय बैंक प्रतिभूति के आधार पर ऋण देता है तो वह प्रतिभूति के पूर्ण मूल्य (Full value of Security) के बराबर ऋण नहीं देता बल्कि कम धनराशि का ऋण देता है। प्रतिभूति के मूल्य (यानि जमानत के रूप में रखे गये माल का मूल्य) तथा उसके आधार पर दी गयी ऋण की धनराशि के अन्तर को सीमान्त (Margin) कहा जाता है। जब केन्द्रीय बैंक महसूस करता है कि देश के व्यापारी किसी विशेष वस्तु का अधिक भण्डार रख रहे हैं और उस वस्तु की कीमतों में वृद्धि हो रही है तो वह इन वस्तुओं के लिए दी जाने वाली साख पर नियन्त्रण करता है। इसके लिए वह सीमांत आवश्यकता को बढ़ा देता है।

उदाहरण के लिए, यदि सीमान्त आवश्यकता 20% है तो केन्द्रीय बैंक 1000 रुपए मूल्य के माल या भण्डार के आधार पर 800 रुपए का ऋण देता है। अब यदि मुद्रा स्फीति को रोकने अथवा सट्टे को हतोत्साहित करने के उद्देश्य से केन्द्रीय बैंक सीमांत आवश्यकता को बढ़ाकर 40% कर देता है तो व्यापारिक बैंक केवल 600 रुपए ऋण दे सकेंगे। इस प्रकार साख विस्तार पर रोक लग सकेगी। इसके विपरीत यदि केन्द्रीय बैंक साख विस्तार करना चाहता है तो वह सीमांत की नीची दर निश्चित कर देगा।

4. **प्रत्यक्ष कार्यवाही (Direct Action)** - साख नियन्त्रण के लिए लगभग सभी केन्द्रीय बैंकों ने सीधी कार्यवाही का प्रयोग किसी-न-किसी रूप में किया है। सीधी कार्यवाही के अन्तर्गत वे विधियाँ आती हैं जिनके द्वारा केन्द्रीय बैंक इन बैंकों को ऋण से वंचित कर दण्डित करता है जो साख के निर्माण के सम्बन्ध में केन्द्रीय बैंक की सलाह को नहीं मानते। इस नीति की कुछ सीमाएं होती है- जैसे ***पहली***, व्यावहारिक रूप से ये संतोषजनक नहीं होता। ***दूसरा,*** वाणिज्यिक बैंक साधारण रूप से ऐसे अवसर नहीं देते। ***तीसरा,*** यह जानना सरल नहीं होता कि कब कोई बैंक अनुचित प्रयोग के लिए साख का प्रसार कर रहा है। ***चौथा***, बैंक स्वंय भी साख के वास्तविक प्रयोग पर नियन्त्रण नहीं रख पाते और ना ही आवश्यक व अनावश्यक प्रयोगों में अन्तर कर पाते है।

5. **नैतिक दबाव (Moral Suasion)** - साख नियन्त्रण हेतु केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों पर नैतिक प्रभाव डालकर भी उन्हें सहमत कर लेता है। केन्द्रीय बैंक, वाणिज्यिक बैंको को समझाने बुझाने,

निवेदन करने, अनौपचारिक सुझाव और परामर्श देने के लिए सहयोग प्राप्त कर लेता है। नैतिक दबाव की सफलता में विश्वास व्यक्त करते हुए **डबल्यू. आर. बर्गेस (W.R. Burgess)** लिखते हैं कि ***"केन्द्रीय बैंक अनेक बार व्यापारिक बैंकों को सुझाव देकर भी सामान्य साख स्थिति पर पर्याप्त प्रभाव डाल सकते हैं।"***

नैतिक दबाव की नीति की सफलता मुख्यता तीन बातों पर निर्भर करती है। ***पहली***, केन्द्रीय बैंक का मुद्रा बाजार पर पूरा अधिकार होना चाहिए। ***दूसरी***, केन्द्रीय को इस सम्बन्ध में पर्याप्त अधिकार प्राप्त होना चाहिये। ***तीसरी***, केन्द्रीय बैंक और अन्य बैंको के बीच सहयोग एवं सदभावना होनी चाहिए।

6. **प्रचार (Publicity)** - आधुनिक समय में केन्द्रीय बैंक प्रचार के माध्यम से जनता के सक्रिय सहयोग को भी प्राप्त करता है। जनता व बैंकों को दी गई चेतावनियों तथा सूचनाओं के प्रकाशन द्वारा केन्द्रीय बैंक अपनी नीति का प्रचार करता है इस सम्बन्ध में अमेरिकी विचारक जी. बी. मैकलॉफिन का दृष्टिकोण बिल्कुल सही है। उनके अनुसार, ***"साख में प्रधान तत्व मस्तिष्क की दशा होती है और साख का नियन्त्रण उस समय तक नहीं किया जा सकता, जब तक कि लोकमत क नियन्त्रित नहीं कर लिया जाता।"***

13.6 अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति का महत्व एवं सीमाएं (Importance and Limitations of Monetary Policy in Under-Developed Countries)

अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति का महत्व के साथ साथ कुछ सीमाएं हैं। इसके महत्त्व इस प्रकार हैं

A. अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति का महत्व (Importance of Monetary Policy in Under-Developed Countries)

एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में मौद्रिक नीति साख की लागत तथा उपलब्धता को प्रभावित करके स्फीति पर नियंत्रण करके तथा भुगतान शेष संतुलन को बनाए रखकर आर्थिक वृद्धि की दर को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अत: ऐसे देश में मौद्रिक नीति के मुख्य उद्देश्य स्फीति को नियंत्रित करने तथा कीमतों को स्थिर करने हेतु साख नियंत्रण करना, विनिमय दर को स्थिर करना, भुगतान शेष में संतुलन प्राप्त करना तथा आर्थिक विकास बढ़ाना है।

1. **स्फीतिकारी दबावों को नियंत्रित करना (To Control Inflationary Pressures)** - विकास प्रक्रिया में उत्पन्न होने वाले स्फीतिकारी दबावों पर काबू पाने के लिए, मौद्रिक नीति को साख नियंत्रण के परिमाणात्मक तथा गुणात्मक दोनों प्रकार के उपायों की आवश्यकता होती है। अल्पविकसित देशों में स्फीति को नियंत्रित करने में मौद्रिक नीति के उपकरणों में खुले बाजार प्रचालन सफल नहीं हैं क्योंकि यहाँ हुंडी बाजार (Bill Market) छोटा और अविकसित होता है। वाणिज्यिक बैंक लोचशील नकद जमा (cash-deposit) अनुपात रखते हैं क्योंकि उन पर केन्द्रीय बैंक का पूर्ण नियंत्रण नहीं होता। वे अपनी सापेक्षतया कम ब्याज दरों के कारण सरकारी प्रतिभूतियों में भी निवेश करने के लिए अनिच्छुक होते हैं। इसके अतिरिक्त सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करने के बजाय वे अपने रिजर्वों को तरल रूप (स्वर्ण, विदेशी मुद्रा और नकदी) में रखना पसन्द करते हैं। वाणिज्यिक बैंक भी केन्द्रीय बैंक से उधार लेने या पुनर्बट्टा करते रहना नहीं चाहते।

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में मौद्रिक नीति के उपकरण के रूप में बैंक दर नीति और खुले बाजार प्रचालनों की अपेक्षा परिवर्तनशील रिजर्व अनुपात (variable reserve ratio) का उपयोग अधिक प्रभावकारी होता है चूंकि प्रतिभूतियों का बाजार बहुत छोटा है इसलिए खुले बाजार प्रचालन सफल नहीं हैं परन्तु केंद्रीय बैंक द्वारा परिवर्तनशील रिजर्व अनुपात में वृद्धि या कमी प्रतिभूतियों की कीमतों पर बिना विपरीत प्रभाव डाले बिना ही वाणिज्यिक बैंकों के पास

उपलब्ध नकदी को बढ़ाते या घटा देते हैं। वाणिज्यिक बैंक विशाल नकद रिजर्व रखते हैं जो केन्द्रीय बैंक द्वारा घटाये नहीं जा सकते परन्तु नकद रिजर्व अनुपात को बढ़ाने से बैंकों की तरलता घटती है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में परिवर्तनशील रिजर्व अनुपात के उपयोग की कुछ सीमाएं हैं: ***प्रथम***, चूंकि गैर-बैंकिंग वित्तीय मध्यस्थ केन्द्रीय बैंक के पास जमाओं को नहीं रखते हैं इसलिए वे इससे प्रभावित नहीं होते। ***द्वितीय***, वे बैंक जो अतिरिक्त तरलता नहीं रखते हैं, उनकी अपेक्षा जो इसे रखते हैं, अधिक प्रभावित होते हैं।

किन्तु साख के आवंटन को प्रभावित करने और फलस्वरूप निवेश की पद्धति को प्रभावित करने में परिमाणात्मक उपायों की अपेक्षा गुणात्मक साख नियंत्रण उपाय अधिक प्रभावकारी होते हैं। अल्पविकसित देशों में कृषि, खनन, उद्योग में उपलब्ध वैकल्पिक उत्पादकीय स्रोतों की अपेक्षा स्वर्ण, आभूषण, मालसूचियों (inventories), वास्तविक सम्पदा आदि में निवेश करने की प्रबल प्रवृत्ति पाई जाती है। ऐसे अनुत्पादकीय उद्देश्यों के लिए साख सुविधाओं को नियंत्रित तथा सीमित करने के लिए चयनात्मक साख नियंत्रण अधिक उपयुक्त होते हैं। वे खाद्यान्नों तथा कच्चे माल के विषय में सट्टा क्रियाओं को नियंत्रित करने में लाभदायक होते हैं। वे अर्थव्यवस्था में अनुभागीय स्फीतियों (sectional inflations) को रोकने में अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं। वे आयातकर्ताओं के लिए विदेशी मुद्रा के बराबर अग्रिम राशि में जमा करना अनिवार्य बनाकर आयात के लिए माँग में कटौती करते हैं। इसका यह प्रभाव भी पड़ता है कि बैंकों के आरक्षण घट जाते हैं यहां तक कि इस प्रक्रिया में उनके जमा केन्द्रीय बैंक को हस्तान्तरित हो जाते हैं। चयनात्मक साख नियंत्रण उपाय निश्चित प्रकार के जमानत, उपभोक्ता साख नियमन और साख की राशनिंग के स्थान पर सीमा आवश्यकताओं के परिवर्तन के रूप में हो सकते हैं।

2. **कीमत स्थिरता प्राप्त करना (To achieve Price Stability)** - कीमत स्थिरता प्राप्त करने के लिए मौद्रिक नीति एक महत्वपूर्ण औजार हैं यह मुद्रा की माँग तथा पूर्ति में समुचित समायोजन लाती है। मुद्रा की माँग एवं पूर्ति दोनों में असंतुलन का प्रभाव कीमत स्तर में प्रतिबिम्बित हो जाएगा। मुद्रा पूर्ति में कमी वृद्धि को रोक देगी जबकि इसकी अधिकता मुद्रा-स्फीति लाएगी। जब अर्थव्यवस्था विकास की ओर अग्रसर होती हैं तो कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि तथा गैर-मौद्रिक क्षेत्र के मौद्रिक क्षेत्र में धीरे-धीरे परिवर्तित होने से मुद्रा की माँग बढ़ती है। इससे लेन-देन तथा सट्टा उद्देश्य के लिए मुद्रा की माँग भी बढ़ेगी। इसलिए मौद्रिक अधिकारी को स्फीति रोकने के लिए तथा कीमतों में स्थिरता लाने के लिए मुद्रा की पूर्ति को मुद्रा की माँग के अनुपात से अधिक बढ़ाना पड़ेगा।
3. **भुगतान-शेष घाटा कम करना (To Bridge BOP Deficit)** - ब्याज दर नीति के रूप में मौद्रिक नीति भुगतान शेष के घाटे को पूरा करने के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। विकास के नियोजित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को गम्भीर भुगतान शेष की कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। ऐसे देशों को विद्युत, सिंचाई, परिवहन आदि जैसा बुनियादी ढांचा स्थापित करने, तथा लोहा और इस्पात, उर्वरक, रसायन आदि के लिए प्रत्यक्षत: उत्पादकीय क्रियाओं हेतु पूँजी उपकरण, मशीनरी, कच्चामाल, पुर्जे और उपकरण आयात करने पड़ते हैं जिससे उनके निर्यात में वृद्धि होती है परन्तु उनके निर्यात गतिहीन होते हैं और मुद्रा-स्फीति के कारण निर्यात की कीमतें भी ऊंची होती हैं। परिणामस्वरूप, आयात और निर्यात में अन्तर उत्पन्न हो जाता है, जिससे भुगतान शेष असंतुलित हो जाता है। मौद्रिक नीति ऊंची ब्याज दर द्वारा भुगतान शेष के घाटे को कम करने में सहायक हो सकती है। ऊंची ब्याज दर निवेशों के अंतर्प्रवाह को प्रोत्साहन देकर भुगतान शेष के अन्तर को कम करने में सहायक होती है।
4. **ब्याज दर नीति (Interest Rate Policy)** - एक विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए ऊँची ब्याज दर नीति अधिक बचत को प्रोत्साहित करती है, बैंकिंग आदतें विकसित करती है तथा अर्थव्यवस्था के मुद्रीकरण (monetization) को तीव्रता प्रदान करती है, जोकि पूँजी निर्माण और आर्थिक वृद्धि के

लिए आवश्यक है। ऊँची ब्याज दर नीति स्फीति को दूर करने वाली भी है क्योंकि यह सट्टे तथा मुद्राओं (Currencies) के लिए उधार लेने और निवेश करने को हतोत्साहित करती है। फिर, यह नीति दुर्लभ पूँजी संसाधनों के आवंटन को अधिक उत्पादकीय स्रोतों में बढ़ावा देती है।

5. **बैंकिंग और वित्तीय संस्थाएं स्थापित करना (To Create Banking and Financial Institutions)** - अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति का एक उद्देश्य पूँजी निर्माण के लिए बचतों को जुटाने, प्रवाहित करने और प्रोत्साहित करने के लिए बैंकिंग और वित्तीय संस्थाओं की स्थापना तथा विकास करना होता है। मौद्रिक अधिकारी को ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में शाखा बैंकिंग की स्थापना को प्रोत्साहन देना चाहिए। ऐसी नीति गैर-मौद्रीकृति (Non-monetization) क्षेत्र के मुद्रीकरण (monetization) में सहायक होगी और पूँजी निर्माण के लिए बचत और निवेश को प्रोत्साहित करेगी। यह मुद्रा और पूँजी बाजार को भी संगठित और विकसित करेगी।

B. अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति की सीमाएँ (Limitations of Monetary Policy in Under-Developed Countries)

अल्पविकसित देशों के आर्थिक विकास में मौद्रिक नीति का एक महत्वपूर्ण स्थान है परन्तु अल्पविकसित देशों की संरचनात्मक विशेषताओं के कारण वहाँ मौद्रिक नीति के सफल प्रयोग का क्षेत्र अधिक सीमित रहता है। अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति के पूर्ण रूप से प्रभावशील न होने के कारण निम्नलिखित हैं।

1. **विशाल अमौद्रिक क्षेत्र (Large Non-monetary Areas)** - अल्पविकसित देशों में एक विशाल अमौद्रिक क्षेत्र पाया जाता है जहाँ मुद्रा का चलन नहीं होता बल्कि वस्तु-विनिमय की पद्धति ही प्रचलित रहती है। फलत: इन देशों में मुद्रा की मात्रा या ब्याज की दर सम्बन्धी परिवर्तन आर्थिक परिवर्तन की क्रियाओं पर कोई प्रभाव नहीं डालते।
2. **संगठित मुद्रा बाजार का अभाव (Absence of Organized Money Market)** - इन देशों में मुद्रा बाजार असंगठित, छोटा और अविकसित होता है।
3. **मौद्रिक नीति का विलम्बित प्रभाव (Delayed Effect of Monetary Policy) -** अनुभव यह बताता है कि यदि मौद्रिक नीति प्रभावपूर्ण भी हो तो भी उसका प्रभाव काफी समय के बाद जाकर होता है।
4. **बिल बाजार का प्रभाव (Absence of Bill Market)** - अल्प-विकसित देशों में बिल बाजार का भी अभाव होता है जिसके कारण साख प्रणाली ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर पाती।
5. **साख मुद्रा का कम महत्व (Lesser Importance of Credit Money)** - अल्प-विकसित देशो में साख मुद्रा के स्थान पर चलन मुद्रा अधिक महत्वपूर्ण रहती है। अत: केन्द्रीय बैंक द्वारा बैंकों की साख पर नियन्त्रण लगाने पर भी मुद्रा की पूर्ति पर नियन्त्रण नहीं हो पाता।
6. **समन्वित ब्याज दर संरचना का अभाव (Lack of Integrated Interest-rate Structure)** - एक समन्वित एवं सुसंगठित ब्याज दर संरचना के अभाव में केन्द्रीय बैंक, बैंक-दर में परिवर्तन करके ब्याज की दर को प्रभावित करने में असमर्थ रहते हैं।

13.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ..... मौद्रिक नीति का उद्देश्य नहीं हैं। (मुद्रा की तटस्थता **या** ब्याज दर नीति)
2. परिमाणात्मक विधियाँ ..... बैंक द्वारा इस्तेमाल की जाती हैं। (केन्द्रीय **या** व्यापारिक)
3. सस्ती मुद्रा नीति का तात्पर्य ..... बैंक दर रखने की नीति से हैं। (नीची **या** उच्ची)

4. गुणात्मक विधियों के अंतर्गत आने वाली प्रमुख विधि ..... हैं। (ब्याज दर नीति **या** प्रत्यक्ष कार्यवाही)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. कीमत स्थिरता मौद्रिक नीति का उद्देश्य नहीं हैं।
2. सस्ती मुद्रा नीति का तात्पर्य नीची रेपो दर रखने की नीति से हैं।
3. केंद्रीय बैंक की मौद्रिक नीतियों यंत्र परिमाणात्मक एवं गुणात्मक विधियों से हैं।

13.8 सारांश (Summary)

मौद्रिक नीति से आशय केन्द्रीय बैंक के द्वारा अपनाए गए उन उपायों से है जिनके द्वारा वह अर्थव्यवस्था में मुद्रा तथा साख की मात्रा को नियन्त्रित करता है ताकि अर्थव्यवस्था की समष्टि आर्थिक स्थायित्व को प्राप्त किया जा सके। मौद्रिक नीति के कुल पांच उद्देश्य, ***पहला*** विनिमय स्थिरता, ***दूसरा*** कीमत स्थिरता, ***तीसरा*** मुद्रा की तटस्थता, ***चौथा*** पूर्ण रोजगार और ***पांचवा*** आर्थिक विकास। मौद्रिक नीति देश में संतुलन बनाए रखने के लिए मुख्य दो यंत्रो का प्रयोग करती हैं जिन्हें परिमाणात्मक विधियाँ एवं गुणात्मक विधियाँ कहा जाता हैं। परिमाणात्मक विधियों का सम्बन्ध साख की मात्रा तथा उसकी कीमत अर्थात ब्याज दर के नियन्त्रण से होता है। इसके अंतर्गत तीन उपकरण आते हैं, ***पहला***, बैंक दर नीति, ***दूसरा,*** खुले बाजार की क्रियाएँ और ***तीसरा,*** न्यूनतम वैधानिक कोष अनुपात। गुणात्मक विधियाँ साख के प्रवाह को उचित कार्यों में लगाने की चेष्टा करती हैं जबकि परिमाणात्मक विधियाँ केवल साख की कुल मात्रा को प्रभावित करती हैं। इस विधि के अंतर्गत कुल छ: उपकरण आते हैं जो की इस प्रकार हैं: साख की राशनिंग, उपभोक्ता साख का नियमन, प्रत्यक्ष कार्यवाही, नैतिक दबाव, सीमान्त आवश्यकताओं में परिवर्तन और प्रचार।

इसके साथ ही आपने अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति के महत्व के बारे में भी जाना जोकि इस प्रकार हैं, स्फीति को नियंत्रित करना, कीमतों को स्थिर करने हेतु साख नियंत्रण करना, विनिमय दर को स्थिर रखना, भुगतान शेष में संतुलन प्राप्त करना और आर्थिक विकास को बढ़ाना। अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति के महत्व को समझने के बाद आपने यह भी जाना की अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति की सीमाएँ क्या-क्या हैं जिसमे मुख्य सीमाएँ कुछ इस प्रकार हैं, विशाल अमौद्रिक क्षेत्र, संगठित मुद्रा बाजार का अभाव, मौद्रिक नीति का विलम्बित प्रभाव, बिल बाजार का प्रभाव, साख मुद्रा का कम महत्व और समन्वित ब्याज दर संरचना का अभाव यह सब उपकरण मौद्रिक नीति की सीमाएँ हैं।

13.9 शब्दावली (Glossary)

- **गैर-ऋणग्रस्त (Unencumbered Securities):** गैर-ऋणग्रस्त प्रतिभूतियों से अभिप्राय उन प्रतिभूतियों से है जो केन्द्रीय बैंक से ऋण के लिए प्रतिभूतियों के रूप में कार्य नहीं करती हैं।
- **अनुमोदित प्रतिभूतियों (Approved Securities):** अनुमोदित प्रतिभूतियों से अभिप्राय उन प्रतिभूतियों से होता है जिनके पुनर्भुगतान की गारंटी सरकार द्वारा दी जाती है।
- **मुद्रा-स्फीति (Inflation):** मुद्रा-स्फीति का तात्पर्य एक समयावधि में वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में होने वाली सामान्य वृद्धि से है। इसका अर्थ यह है कि मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि से भी हो सकती है। मुद्रा-स्फीति मुद्रा की क्रय शक्ति को कम कर देती है, जिसका अर्थ है कि मुद्रा की प्रत्येक इकाई कम सामान और सेवाएँ खरीदती है।
- **बिल बाज़ार (Bill Market):** बिल बाज़ार या डिस्काउंट बाज़ार से तात्पर्य उस बाज़ार से है जहाँ अल्प दिनांकित बिल और अन्य कागजात खरीदे और बेचे जाते हैं।
- **भुगतान-शेष घाटा (Balance of Payment Deficit):** भुगतान शेष घाटे का मतलब है कि देश निर्यात की तुलना में अधिक वस्तुओं, पूँजी और सेवाओं का आयात करता है।

13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ब्याज दर नीति 2. केन्द्रीय 3. नीची
4. ब्याज दर नीति

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. असत्य 2. असत्य 3. सत्य

13.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), Macroeconomic Analysis, Galgotia Publications, New Delhi

13.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics***, Theory and policy, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley,G. (1978), ***Macroeconomics : Theory and Policy***, Macmillan, New York

13.13 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. मौद्रिक नीति की परिमाणात्मक विधियाँ से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख उपकरणों की व्याख्या कीजिए।
2. मौद्रिक नीति की गुणात्मक विधि के अर्थ को समझाइए और साथ ही इसके प्रमुख उपकरणों की भी व्याख्या कीजिए।
3. अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति के महत्व को विस्तार से समझाइए।
4. मौद्रिक नीति का अर्थ क्या हैं? अल्पविकसित देशों में मौद्रिक नीति की सीमाएँ क्या-क्या हैं, इसकी व्याख्या कीजिए।

इकाई-14 राजकोषीय नीति के यंत्र
(Tools of Fiscal Policy)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)
14.2 उद्देश्य (Objectives)
14.3 राजकोषीय नीति की अवधारणा (Concept of Fiscal Policy)
14.4 राजकोषीय नीति के उद्देश्य (Objective of Fiscal Policy)
14.5 राजकोषीय नीति के यंत्र अथवा उपकरण (Tools of Fiscal Policy)
14.5.1 बजट नीति (Budget Policy)
14.5.2 क्षतिपूरक रोजकोषीय नीति (Compensatory Fiscal Policy)
14.5.3 करारोपण (Taxation)
14.5.4 सार्वजनिक व्यय (Public Expenditure)
14.5.5 सार्वजनिक ऋण (Public Debt)
14.6 अल्प-विकसित देशों में राजकोषीय नीति का महत्व (Significance of Fiscal Policy in Under-Developed Countries)
14.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
14.8 सारांश (Summary)
14.9 शब्दावली (Glossary)
14.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
14.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
14.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

पिछली इकाइयों में हमने समष्टि आर्थिक नीति के उद्देश्यों के बाद मौद्रिक नीति से सम्बन्धित तथ्यों का अवलोकन किया। आपने यह जाना कि जहां एक ओर मौद्रिक नीतियों का सम्बंध केन्द्रीय बैंक से है जोकि विभिन्न विधियों द्वारा इन नीतियों का प्रतिपादन करते है एवं अर्थव्यवस्था को प्रभावित करते है, वही दूसरी ओर राजकोषीय नीति सरकार द्वारा तय की जाती है और इसका सम्बन्ध सार्वजनिक आय, व्यय तथा ऋण सम्बन्धी क्रियाओं से होता है।

इस इकाई में आप राजकोषीय नीति के बारे में विस्तार से पढेंगे। राजकोषीय नीति सरकार के उन कार्यों का उल्लेख करती है जोकि सरकार की प्राप्तियों (receipts) तथा व्ययों (expenditure) को प्रभावित करते है।

राजकोषीय नीति अर्थव्यवस्था में कुल माँग को प्रभावित करने का एक महत्वपूर्ण उपाय है साथ ही आर्थिक स्थिरता एवं आर्थिक विकास जैसे उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी राजकोषीय नीति के विभिन्न यंत्रों का प्रयोग किया जाता है।

14.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- ✓ राजकोषीय नीति के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ✓ राजकोषीय नीति के उद्देश्यों को समझने में सक्षम होंगे।
- ✓ राजकोषीय नीति के विभिन्न उपकरणों से परिचित हो सकेंगे।
- ✓ विभिन्न परिस्थितियों में राजकोषीय नीति का प्रयोग के बारे में अवगत होंगे।

14.3 राजकोषीय नीति की अवधारणा (Concept of Fiscal Policy)

राजकोषीय नीति का अर्थ (Meaning of Fiscal Policy)

राजकोषीय नीति से अभिप्राय सरकार की आय, व्यय तथा ऋण से सम्बन्धित नीतियों से होता है।

राजकोषीय नीति की परिभाषा (Defination of Fiscal Policy)

राजकोषीय नीति को परिभाषित करते हुए **प्रो. आर्थर स्मिथीज (Prof. Arthur Smith)** ने लिखा है *"राजकोषीय नीति वह नीति है जिससे सरकार अपने व्यय तथा आगम के कार्यक्रम को राष्ट्रीय आय, उत्पादन तथा रोजगार पर इच्छित प्रभाव डालने तथा अवांछित प्रभावों को रोकने के लिए प्रयुक्त करती है।" (Fiscal policy is a policy under which government uses its expenditure and revenue programmes to influence desirable effects and avoid undesirable effects on national income, production and employment).*

हार्वे (Harvey) एवं **जॉनसन (Johnson)** के अनुसार, *"अर्थव्यवस्था की क्रियाओं के स्तर एवं स्वरूप में परिवर्तन लाने के उद्देश्य से शासकीय व्यय एवं कराधान में जो परिवर्तन लाये जाते हैं, उन्हें राजकोषीय नीति में शामिल किया जाता है।" (Fiscal policy incorporates such changes in government expenditure and taxation designed to influence the pattern and level of activity.)*

जे. के. शॉ (J. K. Shaw) के अनुसार, *"हम राजकोषीय नीति को परिभाषित करने की दृष्टि से उसमें कीमत परिवर्तनों, सार्वजनिक व्यय के समय एवं संरचना में परिवर्तन कर भुगतान की बारम्बारता एवं संरचना में परिवर्तन को शामिल करते हैं।" (We define fiscal policy to change the price level composition or time of government expenditure or to vary the burden, structure or frequency of tax payment.)*

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन के बाद आप राजकोषीय नीति के अर्थ को सरलतम शब्दों में इस प्रकार व्यक्त कर सकते है। राजकोषीय नीति आर्थिक नीति का वह भाग है जिसका उपयोग सरकार अर्थव्यवस्था पर वांछित प्रभाव डालने और अवांछित प्रभावों को कम करने के लिए करती है।

राजकोषीय नीति का विकास (Evolution of Fiscal Policy)

यदि आप आर्थिक विचारों के इतिहास का अध्ययन करें तो आप पाएगें कि राजकोषीय नीति का विकास तीन महत्वपूर्ण चरणों से होकर गुजरा हैं।

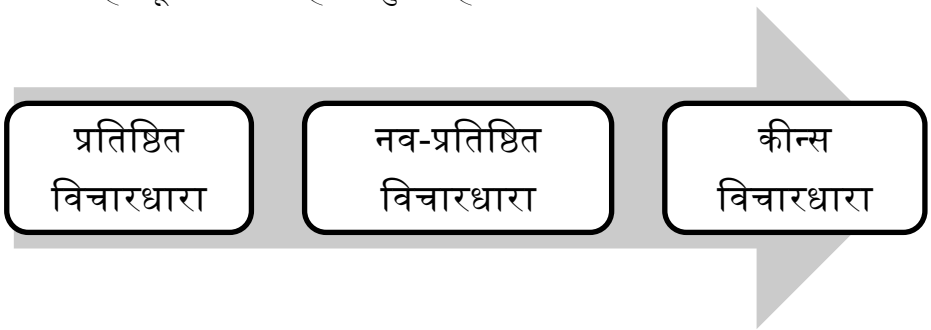

प्रतिष्ठित विचारधारा- प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री इस बात पर एकमत थे कि सरकार का कार्यक्षेत्र सीमित (केवल शान्ति एवं सुरक्षा तक) होना चाहिए साथ ही इसके बजट का आकार छोटा तथा इसका स्वरूप सन्तुलित होना चाहिए। इस विचारधारा का मुख्य आधार **जे.बी. से** (J. B. Say) का बाजार नियम था, जिसके अनुसार – ***"पूर्ति अपनी मांग स्वयं उत्पन्न करती है (Supply creates its own demand.)"*** तथा अर्थव्यवस्था में जो कुछ भी उत्पादन होता है वह तत्काल ही पूरा का पूरा बिक जाता है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का यह दृढ़ विश्वास था कि आर्थिक प्रणाली के पूंजीवादी स्वरूप का अनुपालन करने वाले समाज में सदैव पूर्ण रोजगार पाया जाता है जिसके परिणामस्वरूप आर्थिक मामलों में सरकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता ही नहीं होती है इसीलिए सरकार को अहस्तक्षेप (Laissez Faire) की नीति का पालन करना चाहिए।

नव- प्रतिष्ठित विचारधारा- इस विचारधारा के मुख्य प्रवर्तक **मार्शल (Marshall)** एवं **पीगू (Pigou)** हैं। इनका मानना है कि अहस्तक्षेप की नीति पर आधारित पूंजीवादी व्यवस्था का समाज पर सर्वाधिक अवांछनीय प्रभाव पड़ता है। अधिकतम सामाजिक लाभ (Maximum Social Benefit) के उद्देश्य को सुनिश्चित करने के लिए सरकार अहस्तक्षेप की नीति को त्याग कर आर्थिक मामलों में सक्रिय भूमिका अदा करे। उदाहरण के लिए सरकार अवांछनीय क्षेत्रों में विनियोग को कम करने के लिए राजकोषीय उपायों का प्रयोग कर सकती है अथवा इच्छित क्षेत्र में विनियोग बढ़ाने के लिए अनुदान या छूट का उपयोग कर सकती है। सरकार को केवल उत्पादन बढ़ाने में ही नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक असमानता को कम करने में भी पहल करनी चाहिए परन्तु यह सब अधिक आय एवं अधिक व्यय से ही सम्भव है। अत: नवप्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने अर्थव्यवस्था में अधिकतम कल्याण को प्राप्त करने के लिए बड़े बजट की वकालत की।

कीन्स की विचारधारा- आपको जानना चाहिए कि 1936 में कीन्स की पुस्तक के प्रकाशन के बाद राजकोषीय नीति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। **कीन्स** (Keyness) ने प्रतिष्ठित विचारधारा पर पूर्ण विराम लगा दिया। **कीन्स** ने **जे.बी. से** के बाजार के नियम को चुनौती दी और कहा कि प्रत्येक पूर्ति अपनी माँग उत्पन्न नहीं करती और इसके परिणामस्वरूप पूंजीवादी समाज में बेरोजगारी तथा अति-उत्पादन की सम्भावना विद्यमान रहती है। यदि किसी प्रकार इस माँग की कमी को पूरा किया जा सके तो अर्थव्यवस्था में न तो अति उत्पादन होगा और ना ही बेरोजगारी। **कीन्स** के अनुसार इस समग्र माँग की कमी को उपभोग व्यय में वृद्धि करके तथा विनियोग व्यय में वृद्धि करके पूरा किया जा सकता है। 1930 की विश्वव्यापी मंदी को दूर करने की समस्या को दूर करने के लिए प्रो. कीन्स ने राजकोषीय नीति की सहायता लेकर इस बात को प्रमाणिता के साथ सिद्ध कर दिया

था कि बेरोजगारी तथा मंदी जैसी समस्याओं को हल किया जा सकता हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं की देश की अर्थव्यवस्था के संचालन में राजकोषीय नीति का महत्वपूर्ण स्थान हैं।

14.4 राजकोषीय नीति के उद्देश्य (Objective of Fiscal Policy)

किसी देश की अर्थव्यवस्था एवं उसकी आर्थिक स्थिति के अनुरूप ही राजकोषीय नीति के उद्देश्य निर्धारित होते है। आर्थिक स्थिरता एवं आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना ही राजकोषीय नीति का मुख्य उद्देश्य है।

1. **आर्थिक स्थिरता (Economic Stability)-** आर्थिक स्थिरता को एक संकुचित उद्देश्य माना जाता है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार आर्थिक स्थिरता का तात्पर्य कीमतों में स्थिरता करने से है। सामान्य कीमत स्तर (General Price Level) में यदि स्थिरता बनी रहे तो आर्थिक स्थियता (economic stability) का लक्ष्य प्राप्त माना जाता है। चूंकि प्रख्यात अर्थशास्त्रियों ने अर्थव्यवस्था में सदैव पूर्ण रोजगार की स्थिति के अस्तित्व को माना है, इसलिए रोजगार, आय और उत्पादन की स्थिरता प्रश्न से परे थी। 1930 की महामन्दी ने इस भ्रम को तोड़ा और कीन्स द्वारा यह ज्ञात हुआ कि पूर्ण रोजगार एक **'सामान्य स्थिति'** ना होकर एक ऐसी **'आदर्श स्थिति'** है जिसको प्राप्त करने तथा बनाए रखने के लिए हर एक अर्थव्यवस्था को निरन्तर प्रयासरत रहना चाहिए। यहाँ पर राजकोषीय नीति एक साधन के रूप में प्रयुक्त की जानी चाहिए।
2. **पूर्ण रोजगार स्तर पर आर्थिक स्थिरता (Economic Stability at Full Employment)-** कीमतों में अल्पकालीन अथवा चक्रीय उतार चढावों को रोकने में राजकोषीय नीति सक्षम सिद्ध हो सकती है। अर्थव्यवस्था में प्रभावपूर्ण माँग में होने वाले अल्पकालीन परिवर्तनों को सरकार अपनी बजट नीति से उचित परिवर्तनों के द्वारा निष्प्रभाव कर सकती है। इसे क्षतिपूरक राजकोषीय नीति (Compensatory Fiscal Policy) कहते है।

   अल्पकालीन स्थिरता प्राप्त हो जाने पर आर्थिक क्रियाओं का स्तर अपने आप ऊँचा उठ जाता है और फिर दीर्घकाल में पूर्ण रोजगार स्तर पर स्थिरता प्राप्त हो जाती हैं। **कीन्स (Keynes)** अल्पकाल को ही महत्व देते थे परन्तु आगे चलकर **हैरोड (Harrod)** तथा **डोमर (Domar)** ने उल्लेख किया कि विकसित अर्थव्यवस्था में भी दीर्घकालीन असन्तुलन उत्पन्न होने की संम्भावना होती है। अत: राजकोषीय नीति का उद्देश्य दीर्घकालीन स्थिरता को प्राप्त करना भी होना चाहिए। **कीन्स** के अनुसार उपभोग में वृद्धि करने में राजकोषीय नीति सहायक होती है। इसके परिणामस्वरूप ही मन्दी पर काबू पाया जा सकेगा और साथ ही इस बात पर भी जोर देना चाहिए कि निवेश में कमी ना हो जिससे आय बनती रहें और माँग प्रभावित ना हो। व्यावहारिक रूप में, स्थिर कीमत स्तर तथा पूर्ण रोजगार परस्पर अंसगत विचार है। यदि पूर्ण रोजगार चाहिए तो थोड़ी बहुत कीमतों में उच्चावचन तो सहन करना ही पड़ेगा।
3. **आर्थिक विकास (Economic Development)-** आर्थिक विकास को बढावा देने के लिए राजकोषीय नीति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक विकासशील देश में राजकोषीय नीति का कार्य क्षतिपूरक क्रिया से अधिक होता है। जहाँ एक ओर तो सार्वजनिक ऋण (Public Debt) तथा हीनार्थ प्रबन्धन (Deficit Finance) की नीतियों का प्रयोग करके वित्तीय साधन जुटाएं जा सकते है जिससे आर्थिक विकास का कार्य ना रूके वहीं दूसरी ओर ऐसे उपाय अपनाए जाने होते है जिसमें उपभोग के लिए बढ़ती हुई माँग को नियंत्रित किया जा सके ताकि बचतों में वृद्धि हो तथा पूँजी निर्माण को प्रोत्साहन मिले। निवेश में वृद्धि करना हो, धन एवं आय के वितरण की असमानताएं कम करनी हो, रोजगार के अवसर को बढ़ाना हो, स्फीति का प्रतिकार करना हो आदि इन सब लक्ष्यों की प्राप्ति में राजकोषीय नीति बहुत महत्वपूर्ण है।

14.5 राजकोषीय नीति के यंत्र अथवा उपकरण (Tools of Fiscal Policy)

राजकोषीय नीति के विभिन्न उपकरणों को विभिन्न उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। हर यंत्र आर्थिक क्रियाओं के स्तर को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। इस सम्बन्ध में देश का बजट, कर, सार्वजनिक व्यय तथा ऋण महत्वपूर्ण उपकरण है।

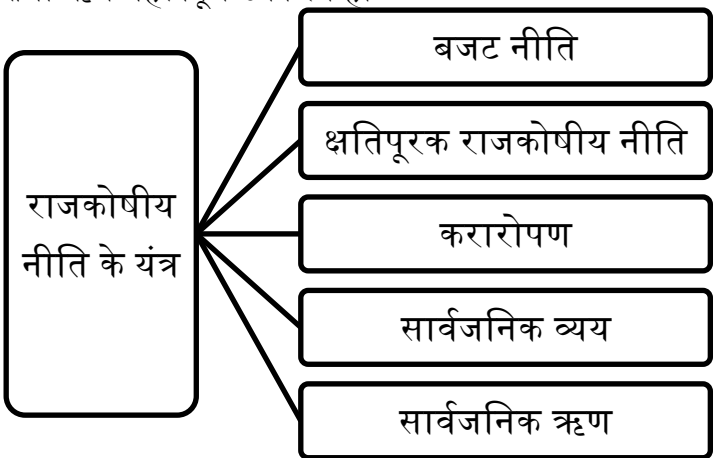

14.5.1 बजट नीति (Budget Policy)

बजट नीति के अंतर्गत सर्वप्रथम आप इसके प्रकारों को जानेंगे

1. **बजट घाटा (Deficit Budget) -** यदि अर्थव्यवस्था में मंदी की स्थिति हो तो घाटे का बजट एक अत्यन्त उपयोगी यंत्र सिद्व हो सकता है। जब सरकारी व्यय, सरकारी प्राप्तियों से बढ़ जाता है तब अर्थव्यवस्था में राष्ट्रीय आय को पूरा करने के लिए उसमें मुद्रा की अतिरिक्त मात्राएं डाली जाती है। घाटा सरकार के शुद्ध व्यय को व्यक्त करता है जोकि राष्ट्रीय आय को शुद्ध व्यय के गुणक से बढ़ाता है। घाटे का बजट, कुल माँग पर विस्तारक प्रभाव डालता है। इसे चित्र 14.1 के माध्यम से दर्शाया जा सकता है।

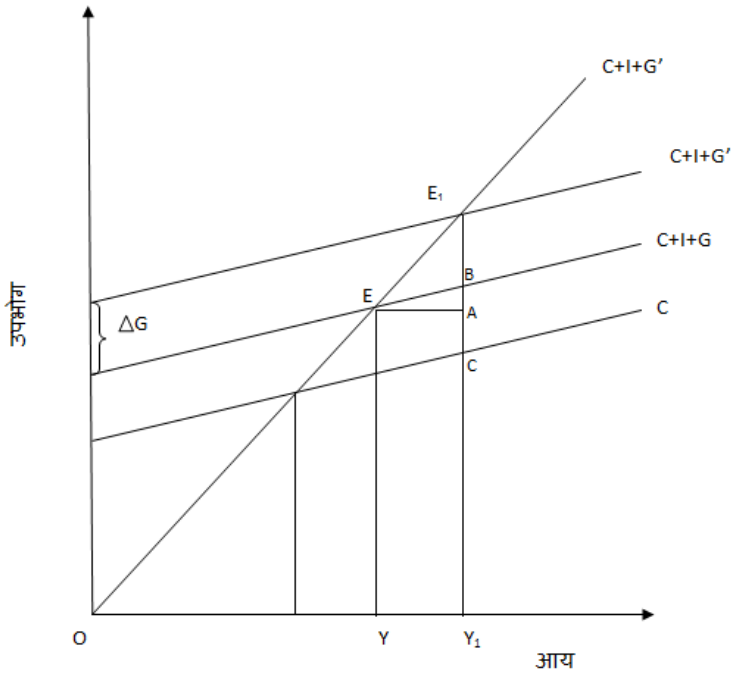

चित्र 14.1

C उपभोग फलन (Consumption Function) है, C+I+G बजट को दर्शाता हैं जिसमें उपभोग (C), निवेश (I), तथा सरकारी व्यय (G) को व्यक्त करता है इसे **कुल व्यय फलन** भी कहते है। E संतुलन की स्थिति को दर्शाता हैं। सरकारी व्यय (G) बढ़ाने पर कुल व्यय ऊपर की ओर खिसक कर $C+I+G_1$ हो जाता है और आय OY से बढ़कर OY_1 हो जाती है इस स्थिति में नया सन्तुलन E से परिवर्तित होकर E_1 हो जाता है। सरकारी व्यय के हुई वृद्धि ($\Delta G = E_1 B$) की अपेक्षा कुल आय में वृद्धि YY_1 हो जाती है जो अधिक है। ΔG उपयोग में वृद्धि को व्यक्त करता है। इस प्रकार घाटे का बजट हमेशा विस्तारक होता हैं क्योंकि वास्तविक सरकारी व्यय की मात्रा की अपेक्षा ही राष्ट्रीय आय में अधिक वृद्धि होती है। यहाँ पर करों को पहले जैसा समान रखा जाता है। करों में कमी के माध्यम से भी बजट घाटा प्राप्त किया जा सकता है। जब कर कम कर दिए जाते है तो प्रयोज्य आय (Disposable Income) अपेक्षाकृत अधिक बच जाती है जो उपभोग व्यय को प्रेरित करती है। यह आगे चलकर कुल माँग, उत्पादन, आय तथा रोजगार में वृद्धि देता है। इसे चित्र 14.2 द्वारा दर्शाया जा सकता है। C उपभोग फलन है। यह मान लिया जाए कि ET मात्रा के समान कर की मात्रा को घटा दिया जाता है जिससे उपभोग फलन ऊपर की ओर सरक कर C से C' पर पहुँच जाता है जिससे आय OY से बढ़कर OY_1 हो जाएगी।

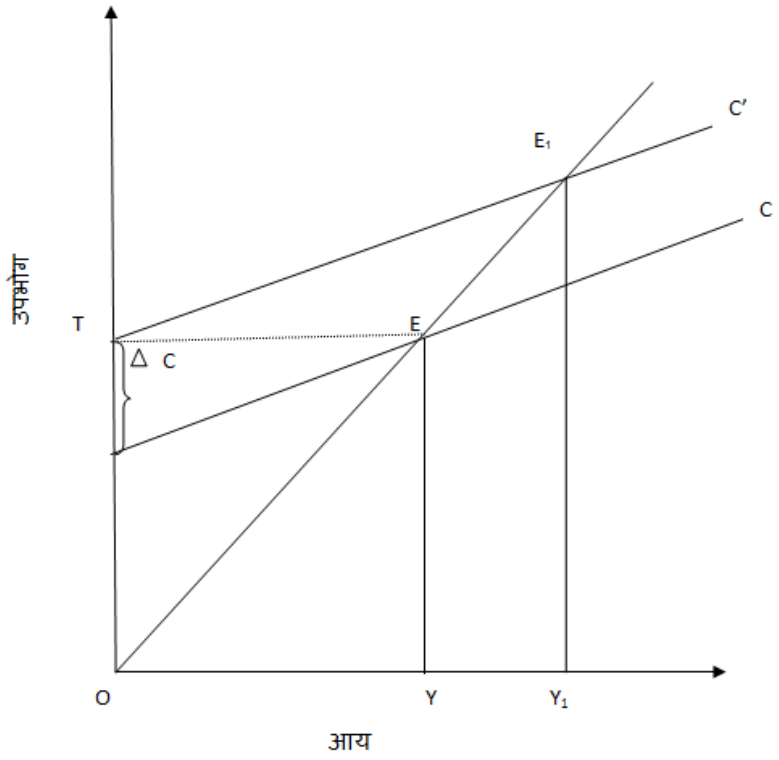

चित्र 14.2

करों में कमी से बढे हुए उपभोग व्यय (Consumption expenditure) के मार्ग में बहुत विस्तारक नहीं होती क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि करों में की गयी राहत उपभोग को प्रोत्सहित ही करे। यह भी सम्भव है कि उससे बचत कर ली जाए।

अत: ऐसी स्थिति में सरकार की नीति यह होनी चाहिए कि वह करों में कमी करने के साथ-साथ सरकारी व्यय की नीति का भी अनुसरण करे जिसका गुणक प्रभाव उपभोग और निवेश पर पड़कर अर्थव्यवस्था को मंदी की स्थिति से बहार ला सकें।

2. बचत का बजट (Surplus Budget) - यदि अर्थव्यवस्था में तेजी अथवा अन्त स्फीति की स्थिति बन रही हो तो ऐसे में बचत का बजट उपयोगी सिद्ध होता है और इससे मुद्रास्फीति का दबाव नियंत्रण में रहता है। यह कराधान में वृद्धि अथवा सरकारी व्यय में कमी करके किया जा सकता है। यह कराधान में वृद्धि अथवा सरकारी व्यय में कमी करके भी किया जा सकता है। इसका प्रभाव आय

और कुल माँग में वृद्धि होगी जो बढ़े हुए करों के परिणामस्वरूप सरकारी या निजी उपभोग व्यय में कमी के गुणक के बराबर होगी।

चित्र 14.1 में मान लें कि अर्थव्यवस्था E_1 पर संन्तुलन में है। यदि ΔG सरकारी व्यय में कमी कर दी जाए तो अब E नयी संतुलन स्थिति है जो सरकारी व्यय में E_1B की कमी हो जाने के परिणामस्वरूप आय OY_1 से गिरकर OY हो गई है। आय में होने वाली कमी $Y_1Y = AE > E_1B$ जोकि व्यय में हुई कमी है क्योंकि उपभोग में भी BA की कमी हो गयी है।

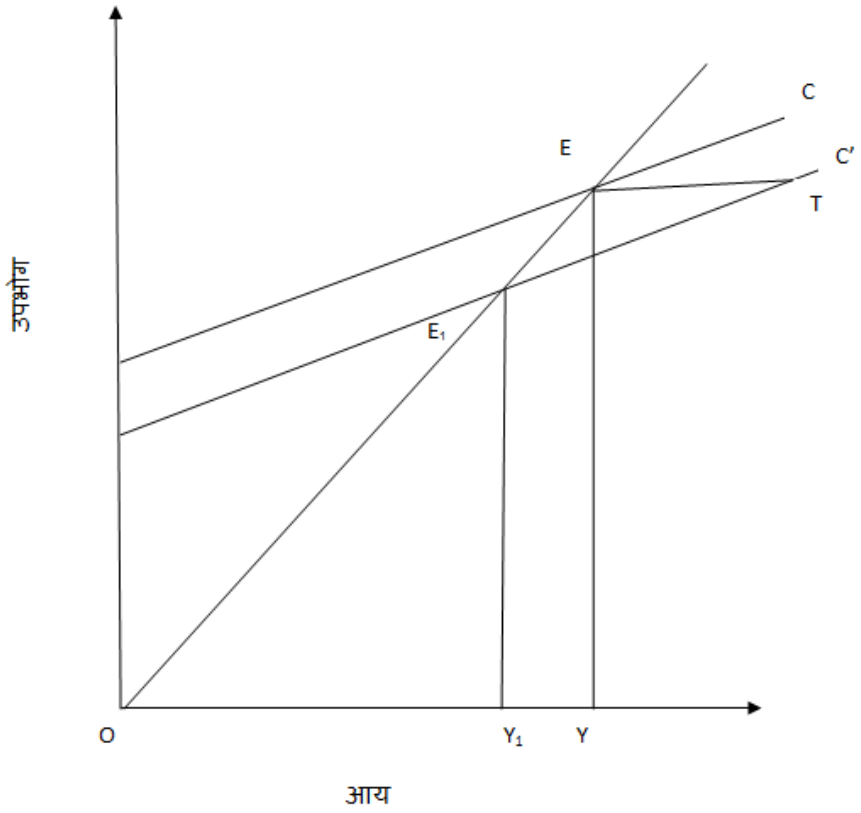

चित्र 14.3

जब करों में वृद्धि होती है तो सरकारी व्यय के रहते हुए भी **बचत का बजट** हो सकता है। इससे लोगों की प्रयोज्य आय (disposable income) घट जाती है और उपभोग व्यय में कमी हो जाती है। इसके फलस्वरूप कुल माँग, उत्पादन, आय तथा रोजगार में कमी हो जाती है। चित्र 14.3 में C रेखा कर लगाने से पहले का उपभोग फलन हैं। ET मात्रा के बराबर कर लगाने पर उपभोग फलन नीचे की ओर सरक कर C' पर आ जाता है। नई सन्तुलन स्थिति E_1 है। आय गिरकर OY से OY_1 हो जाती है।

3. सन्तुलित बजट गुणक (Balance Budget Multiplier) - यह एक अन्य विस्तारवादी राजकोषीय नीति है। इस नीति में करों में वृद्धि तथा सरकारी व्यय में वृद्धि की मात्रा समान होती है। इसका परिणाम यह होता है कि शुद्ध राष्ट्रीय आय बढ़ती है। इसका कारण यह है कि कर लगाने के कारण उपभोग में कमी सरकारी व्यय के बराबर नहीं होती है।

सन्तुलित बजट राजनीतिक दृष्टिकोण से उचित माना गया है क्योंकि इससे राजनीतियों द्वारा फिजूलखर्ची पर रोक लगती है। सन्तुलित बजट का विचार मान्यता के अनुरूप था कि अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार पर सन्तुलित मुद्रा स्फीति के बिना तभी सम्भव है जब सरकार द्वारा करों से प्राप्त राशि सरकारी व्यय से ना कम हो और ना ही अधिक हो परन्तु प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के इन विचारो का खण्डन किया हैं। सन्तुलित बजट के विस्तारात्मक प्रभाव भी हो सकते है। इसका विचार आर्थिक स्थिरता के उद्देश्य के विरुद्ध है।

संक्षेप में, समृद्धि काल में आधिक्य के बजट तथा मंदिकाल में घाटे के बजट बनाने का प्रयास किया जाता है। दोनों ही स्थितियों में सार्वजनिक ऋण के माध्यम से वांछित उद्देश्य प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

14.5.2 क्षतिपूरक रोजकोषीय नीति (Compensatory Fiscal Policy)

क्षतिपूरक राजकोषीय नीति का लक्ष्य सार्वजनिक व्यय और करों में जोड़-तोड़ करके मुद्रास्फीति और अपस्फीति की दीर्घकालिक प्रवृत्तियों के खिलाफ अर्थव्यवस्था की क्षतिपूर्ति करना माना जाता है।

जब अर्थव्यवस्था में अवस्फीतिकारी प्रवृत्तियाँ हो तो सरकार यही चाहेंगी कि घाटे के बजट तथा करों में कमी के माध्यम से सरकार अपने व्यय को घटाएं। दूसरी ओर जब स्फीतिकारी प्रवृत्तियां हो तो सरकार बचत का बजट बनाकर और करों को बढ़ाकर अपने व्यय घटाए ताकि पूर्ण रोजगार स्तर पर अर्थव्यवस्था स्थिर बनाई जा सकें। क्षतिपूरक राजकोषीय नीति के तीन मार्ग है।

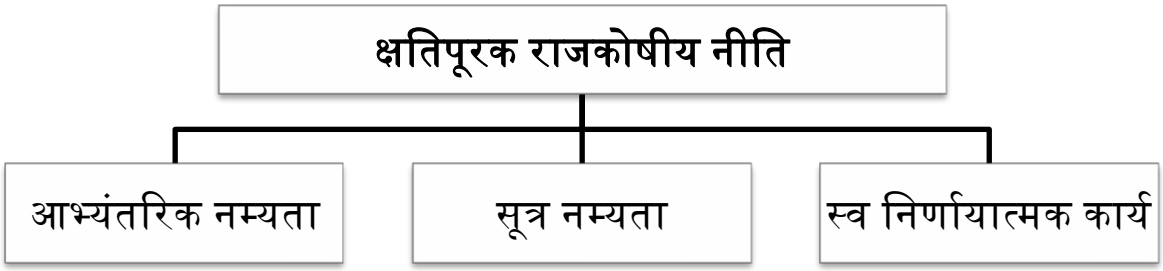

1. आभ्यंतरिक नम्यता (Built in Flexibility)

इसका अर्थ सरकार की ओर से किसी कार्रवाई के बिना अर्थव्यवस्था के भीतर चक्रीय उतार-चढ़ाव की प्रतिक्रिया में व्ययों तथा करों का स्वचालित समायोजन से है। इसके अर्न्तगत बजट में अपने आप परिवर्तन होते है। अत: इसे स्वचलित स्थिरीकरण की तकनीक भी कहा जाता है। व्यापार चक्र की चाहे गिरती हुई अवस्था हो या अधोमुखी अवस्था, सरकारी व्ययों एवं करो में स्वत: समायोजन हो जाता है। राष्ट्रीय आय कम होने पर करों से अर्जित आय कम हो जाती है, सरकारी व्यय बेरोजगारी राहत तथा सामजिक सुरक्षा हितों पर अपने आप ही बढ़ जाते है एवं राष्ट्रीय आय बढ़ने पर कर (Tax) की दरों में वृद्धि हो जाती है और बेरोजगारी राहत तथा सामाजिक सुरक्षा हितों पर सरकारी व्यय अपने आप घट जाएगें।

2. सूत्र नम्यता (Formula Flexibility)

इसके अर्न्तगत नीतिकार कर की दरों तथा सरकारी व्यय की किसी निर्दिष्ट सूचक (specified indicator) के व्यवहार के आधार पर परिवर्तित करते है। यदि संकेतक एक निश्चित बिंदु से आगे बढ़ता है तो यह एक पूर्व निर्धारित सूत्र के अनुसार, सरकारी व्यय में स्वचालित कमी और देश में करों में वृद्धि और इसके विपरीत की उम्मीद करेगा। व्यापार के उतार चढ़ाव की तेजी को नियन्त्रित करने में आभ्ययंतरिक नम्यता की अपेक्षा सूत्र नम्यता अधिक सशक्त है।

3. स्व निर्णायात्मक कार्य (Discretionary Action)

यह राजकोषीय नीति के लिए बजट में ऐसे कार्यों द्वारा परिवर्तन लाने की आवश्यकता होती है जैसे कर दरों अथवा सरकारी व्यय अथवा दोनों में परिवर्तन करना। यह सामान्य तौर से तीन रूप ले सकता है।

क. करों में परिवर्तन जब व्यय स्थिर रहता है।
ख. व्यय में परिवर्तन जब कर स्थिर रहते है।
ग. कर एवं व्यय दोनों में एक साथ परिवर्तन।

स्फातिकारी अथवा अवस्फतिकारी प्रवृत्तियों को रोकने के लिए अन्य दोनों तरीकों की अपेक्षा तीसरा तरीका कहीं अधिक प्रभावशाली तथा श्रेष्ठ है।

14.5.3 करारोपण (Taxation)

करारोपण ऐसा यंत्र है जो स्वायत्त आय (autonomous income), उपभोग तथा निवेश को प्रभावित करता है।

मन्दी की स्थिति में करों में कमी करने से लोगों के पास उपलब्ध स्वायत्त आय में वृद्धि होती है तथा उनके द्वारा अधिक व्यय किया जाता है। उपभोग में वृद्धि के लिए वस्तुओं पर कर (Tax) कम कर दिए जाते है तथा निवेश को प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए उपाय किए जाते है। परन्तु जैसा कि **कालकी** (Kalecki) ने अपना मत प्रस्तुत किया कि यह आवश्यक नहीं है कि करों (Taxes) में कमी, निवेश को प्रोत्साहित ही करे। मुद्रा-स्फीति विरोधी कर नीति (Tax Policy) का उद्देश्य स्फीतिक अन्तर (Inflationary Gap) को कम करना होता है। अतिरिक्त को नियन्त्रित करने के उद्देश्य से व्यय कर तथा उत्पाद शुल्क में वृद्धि काफी सहायक होती है। इस नीति को अपनाते समय यह ध्यान देना आवश्यक है कि लोगों की स्वायत्त आय (autonomous income) में इतनी कमी ना हो जाए कि इसके प्रभाव में शिथिलता की स्थिति (state of Sag) उत्पन्न हो जाए। आर्थिक स्थिरता एवं आर्थिक विकास को प्राप्त करने का यह एक महत्वपूर्ण उपाय है।

14.5.4 सार्वजनिक व्यय (Public Expenditure)

सार्वजनिक व्यय द्वारा होने वाले परिवर्तन आर्थिक क्रियाओं को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते है। सार्वजनिक व्यय में वृद्धि का आय, उत्पादन तथा रोजगार पर उसी प्रकार का प्रभाव पड़ता है जैसा कि निवेश में वृद्धि का प्रभाव होता है। इसके विपरीत सार्वजनिक व्यय में कमी आर्थिक क्रियाओं के स्तर को उल्टी दिशा में प्रभावित करती है।

सार्वजनिक व्यय दो प्रकार के होते है

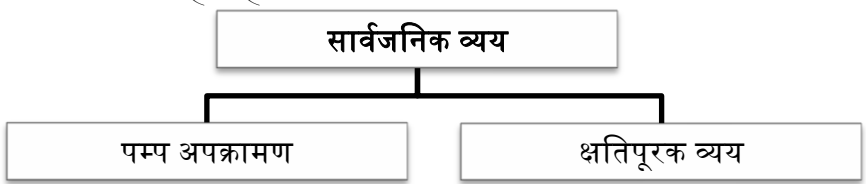

1. पम्प अपक्रमण (Pump Degradation)

इसके अर्न्तगत सरकार द्वारा आय की धारा में कुछ व्यय का अन्तक्षेप किया जाता है जिसके प्रभाव में साधनों का पूर्ण उपयोग होने लगता है। पम्प अपक्रमण अथवा समुद्रीपन इस मान्यता पर आधरित है कि अर्थव्यवस्था में समायोजन में होने की समस्या अस्थायी है। सरकार अपने आप समायोजन प्राप्त कर लेती है। आर्थिक क्रिया इसके माध्यम से अब अपने प्रेरक शक्ति से परिचालित होने लगेगी और बिना सार्वजनिक व्यय के अर्थव्यवस्था को स्थिर आर्थिक वृद्धि के पथ पर ले आएगी।

2. क्षतिपूरक व्यय (Compensatory Expenses)

क्षतिपूरक व्यय की धारणा तब विकसित हुई जब 1930 की महामंदी को पम्प अपक्रमण द्वारा भी नियन्त्रित नहीं किया जा सका। यह आभास हो गया कि आय, उत्पादन तथा रोजगार को उचित स्तर पर बनाए रखने के लिए सरकार निरन्तर प्रयत्नशील रहे। निजी निवेश में जो कमी होती है उसे सार्वजनिक निर्माण कार्यों पर सार्वजनिक व्यय तथा राहत उपाय द्वारा पूरा कर देते है। इससे ना सिर्फ श्रमिकों को रोजगार मिलेगा वरन् गुणक प्रक्रिया के माध्यम से कुल माँग, उत्पादन तथा आय में भी वृद्धि होगी।

जब अर्थव्यवस्था में पुनरुत्थान के चिह्न प्रकट हो तो सार्वजनिक निर्माण कार्यों तथा राहत उपायों पर किए गए व्यय को धीरे-धीरे घटा दिया जाए नाकि एक दम से रोका जाए। नई मुद्रा का निर्माण करके तथा बजट घाटे के लिए उधार लेकर क्षतिपूरक व्यय का वित्त प्रबन्धन किया जाता है। जबकि स्फीति के दौरान बचत का बजट बनाया जाता है।

14.5.5 सार्वजनिक ऋण (Public Debt)

पिछले कुछ दशकों में, सार्वजनिक ऋण एक महत्वपूर्ण राजकोषीय यंत्र के रूप में उभरा हैं। यदि सरकार सार्वजनिक ऋणों का बुद्धिमानी से उपयोग करती है तो अर्थव्यवस्था को इससे लाभ होता है। यह अर्थव्यवस्था में मुद्रा की तरलता को परिवर्तित करके समग्र व्यय को नियोजित करने का प्रयास करता है। सरकारी बजट में घाटे की भरपाई निम्नलिखित चार तरीकों से संभव है।

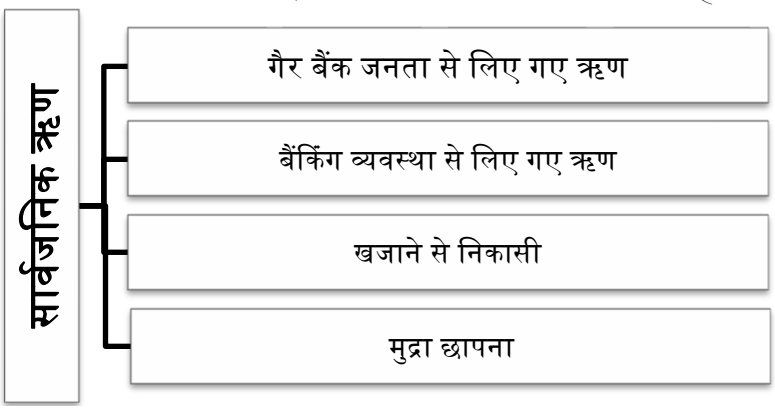

1. **गैर बैंक जनता से लिए गए ऋण (Loan taken from non-banking public)-** बॉण्डों की बिक्री द्वारा जनता से ऋण लिए जाते है जिनका भुगतान उपभोग बचत निजी अथवा संचय में से किया जाता है। इसका प्रभाव अपस्फीतिकारक होता है। इसके विपरीत बॉण्डों की खरीदे संचित धन से की जाती है तो व्यय के चक्रीय प्रवाह में वृद्धि होती है जिसका प्रभाव स्फीतिकारी होता है। सामान्यतया जनता से प्राप्त किया गया ऋण स्फीति काल में लाभपूर्ण होता है जबकि मंदी काल में हानिकारक।
2. **बैंकिग व्यवस्था से ऋण (Loan from banking system)-** बैंको को अतिरिक्त कोषों से सरकार ऋण प्राप्त करती है जिससे चक्रीय प्रवाह एवं राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। जब तेजी होती है तो अन्य साधन ना होने के कारण, सरकार को ऋण देने के लिए उन्हें अपने अन्य ऋणों में कमी करनी पड़ती है जिससे निजी निवेश में कमी करनी पड़ती है।
3. **खजाने से निकासी (Withdrawal from treasury)-** यदि खजाने में रखे शेषों में से बजट के घाटे की पूर्ति की जाती है तो निष्क्रिय साधन सक्रिय हो जाते है। इनका प्रभाव स्फीतिकारी होता है। सामान्यतया इस प्रकार के शेषों (balances) का आकार अधिक नही होता है, इसलिए इस प्रकार के ऋणों का कोई विशेष प्रभाव नही होता है।
4. **मुद्रा छापना (Printing Currency)-** नए नोट छापना सरकार का ब्याज रहित दायित्व होता है। नई मुद्रा से चक्रीय प्रवाह बढ़ता है जिसका प्रभाव स्फीतिकारक होता है। इसका प्रभाव कई बातों पर निर्भर करता है जैसे मुद्रा की पूर्ति की दर, अर्थव्यवस्था में खपत की क्षमता, लोगों की व्यय तथा बचत करने की प्रवृतियाँ इत्यादि।

14.6 अल्पविकसित देशों में राजकोषीय नीति का महत्व (Significance of Fiscal Policy in Under-Developed Countries)

1. **पूँजी निर्माण में वृद्धि (Increase in Capital Formation)-** अधिकांश अल्पविकसित देश पूँजी की कमी के कारण गरीबी के दुष्चक्र में फंसे हुए होते हैं। गरीबी के इस दुष्चक्र को तोड़ने के लिए संतुलित विकास आवश्यक होता है और यह तभी संभव हो पाता है जब सार्वजनिक व्यय के माध्यम से उच्च पूँजी निर्माण को प्रोत्साहित किया जाए। राजकोषीय नीति का मुख्य उद्देश्य पूँजी निर्माण की दर को उच्चतम संभव दर तक बढ़ाना है।

2. **आर्थिक विकास में गति लाने के लिए (Acceleration of Economic Growth)-** राजकोषीय नीति का दूसरा प्रमुख उद्देश्य आर्थिक विकास को तीव्रतर करना होता है। आर्थिक विकास से तात्पर्य राष्ट्रीय आय में दीर्घकालीन विकास से है जिसके द्वारा राष्ट्रीय आय और प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है। इससे लोगों के रहन-सहन के स्तर में आवश्यक सुधार होता है। सरकार अपनी कर-नीति, सार्वजनिक व्यय एवं सार्वजनिक ऋण की नीति द्वारा बचत, विनियोग एवं रोजगार को प्रोत्साहन दे सकती है।
3. **साधनों के आबंटन में महत्व (Importance in Allocation of Resources)-** साधनों का आबंटन उन निर्णयों से सम्बन्ध रखता है जो यह बताते हैं की समाज की भूमि, श्रम व पूँजीगत वस्तुओं का किस प्रकार से प्रयोग किया जाए, किन वस्तुओं का उत्पादन किया जाए एवं कितनी मात्रा में उत्पादन किया जाए। आधुनिक अर्थशास्त्र में इस तथ्य को स्वीकार किया जाने लगा है कि आर्थिक साधनों के सर्वोत्तम उपयोग में राज्य की राजकोषीय नीति का महत्वपूर्ण स्थान है।
4. **कीमत स्थिरता के साथ विकास (Growth with Price Stability)-** अल्प-विकसित देशों में स्थिरता की दृष्टि से समस्या कीमतों में वृद्धि की है। आर्थिक विकास की गति को जब तेज करने के प्रयत्न किए जाते हैं तो कीमतों में वृद्धि स्वत: ही होने लगती है। अल्पविकसित देशों में प्राय: राजकोषीय नीति के प्रयोग मुद्रा-स्फीति के प्रभावों को रोकने के लिए कम प्रभावशाली होते हैं परन्तु फिर भी यदि राजकोषीय साधनों को सही प्रकार से प्रयुक्त किया जाए तो उपयोगी परिणाम निश्चित रूप से प्राप्त किए जा सकते है।
5. **आय तथा धन की असमानता को कम करना (Reduction of Disparities of Income and Wealth)-** अल्प-विकसित देशों में ना केवल राष्ट्रीय आय में वृद्धि की समस्या व्याप्त है बल्कि यहाँ आय के वितरण में पाई जाने वाली असमानता को कम करने की समस्या भी विकट है। आय एवं धन की विषमता को दूर करने के लिए कुछ उपाय किए जाने चाहिए।
6. **रोजगार अवसरों में वृद्धि करना (Increase Employment Opportunities)-** अल्प-विकसित देशों में पूर्ण रोजगार की स्थिति नहीं पाई जाती। अत: राजकोषीय नीति का एक प्रमुख उद्देश्य देश में रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना है। देश में विद्यमान श्रम-शक्ति को रोजगार के अवसर प्रदान किए बिना आर्थिक विकास का लक्ष्य पूरा नहीं किया जा सकता। रोजगार में वृद्धि के लिए सरकार को अपनी राजकोषीय नीति के द्वारा अपनी आर्थिक विकास की गति को तेज करना चाहिए।
7. **भुगतान शेष की स्थिरता (Stabilization of Balance of Payments)-** अल्प-विकसित देशों में विकास के लिए पूँजीगत वस्तुओं के लिए विदेशों से बड़ी मात्रा में कच्चे माल एवं तकनीकी ज्ञान का आयात किए जाने तथा निर्यात योग्य अधिशेष कम होने के कारण भुगतान संतुलन की समस्या उत्पन्न होती है। भुगतान सन्तुलन की समस्या को दूर करने के लिए सरकार राजकोषीय नीति द्वारा निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिए विभिन्न प्रकार से कर में राहते प्रदान कर सकती है एवं स्वदेशी उद्योगों को सुरक्षा देने तथा आयात को नियन्त्रित करने के लिए आयात कर में वृद्धि कर सकती है। सरकार अनिवार्य उपभोग वस्तु के आयात पर प्रतिबन्ध लगाकर उनको देश में ही उत्पन्न करने के लिए राजकोषीय प्रोत्साहन दे सकती है। इसी प्रकार सार्वजनिक व्यय द्वारा ऐसे उद्योगों में विनियोग कर सकती है जिनसे निर्यात बढ़ने की सम्भावना हो।
8. **क्षेत्रीय असन्तुलन को दूर करना (Remove Regional Imbalance)-** अल्प-विकसित अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय असन्तुलन पाया जाता है। राजकोषीय नीति का उद्देश्य देश के सभी भागों का सन्तुलित विकास करना भी है। सरकार ऐसे क्षेत्रों का विकास करने के लिए कर (Tax) में राहत देती है। साथ ही सार्वजनिक व्यय द्वारा ऐसे क्षेत्रों के विकास के लिए सामाजिक व आर्थिक संरचना, जैसे- बिजली, सड़क, परिवहन के साधन, बीमा व बैंकिंग सुविधाओं का विकास करती है।

14.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. अधिकांश अल्पविकसित देश पूँजी की कमी के कारण ..... के दुष्चक्र में फंसे हुए होते हैं। (अमीरी **या** गरीबी)
2. अल्प-विकसित अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय ..... पाया जाता है। (असन्तुलन या सन्तुलन)
3. राजकोषीय नीति कल की स्थिति में अधिक महत्वपूर्ण है। (मंदी **या** स्फीति)
4. सरकारी व्यय के दो रूप बताए गए है एक है पम्प अपक्रमण एवं दूसरा है क्षतिपूरक **.....** (व्यय **या** आय)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. राजकोषीय नीति से अभिप्राय सरकार की आय, व्यय तथा ऋण से सम्बन्धित नीतियों से होता है।
2. जब बॉण्डों की खरीदारी संचित धन से की जाती है तो व्यय के चक्रीय प्रवाह में कमी होती है जिसका प्रभाव स्फीतिकारी होता है।
3. नवप्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने अर्थव्यवस्था में अधिकतम कल्याण को प्राप्त करने के लिए बड़े बजट की वकालत की।
4. प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार आर्थिक स्थिरता का तात्पर्य कीमतों में अस्थिरता करने से है।

14.7 सारांश (Summary)

राजकोषीय नीति सरकार के उन कार्यों का उल्लेख करती है जो सरकार की प्राप्तियों तथा व्ययों को प्रभावित करते है। किसी देश की अर्थव्यवस्था एवं उसकी आर्थिक स्थिति के अनुरूप ही राजकोषीय नीति के उद्देश्य निहित होते है। राजकोषीय नीति कीमतों में अल्पकालीन अथवा चक्रीय उतार चढावों को रोकने में सक्षम सिद्व हो सकती है। आर्थिक विकास को बढावा देने के लिए राजकोषीय नीति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। निवेश में वृद्वि करना हो, धन एवं आय के वितरण की असमानताएं कम करनी हो, रोजगार के अवसर को बढ़ाना हो, स्फीति का प्रतिकार करना हो आदि, इन सब लक्ष्यों की प्राप्ति में राजकोषीय नीति अति महत्वपूर्ण है।

जहाँ विकसित देश में मुद्रास्फीति की स्थिति में बचत वाले बजट कारगर होते है वहीं अल्प-विकसित देशो में स्फीतिक दबाव के बावजूद सरकारी व्यय तथा निवेश में कमी करना ना तो सम्भव होगा और ना तो वांछित होगा। राजकोषीय नीति के विभिन्न उपकरणों को विभिन्न उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। हर एक यंत्र आर्थिक क्रियाओं के स्तर को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इस सम्बन्ध में देश का बजट, कर, सार्वजनिक व्यय तथा ऋण महत्वपूर्ण उपकरण है।

14.8 शब्दावली (Glossary)

- **क्षतिपूरक राजकोषीय नीति (Compensatory Fiscal Policy)-** अर्थव्यवस्था में प्रभावी माँग में होने वाले परिवर्तनों की सरकार अपनी बजट नीति के द्वारा निष्प्रभाव करना।
- **क्षतिपूरक व्यय (Compensatory Expenses)-** कुल माँग में कमी क्षतिपूर्ति के लिए सरकार द्वारा अतिरिक्त के लिए सरकार द्वारा अतिरिक्त व्यय करना।
- **पम्प अपक्रमण (Pump Degradation)-** आय की धारा में सरकार द्वारा कुछ व्यय का अन्तक्षेप, जिसके प्रभाव में साधनो का पूर्ण उपयोग होना।
- **घाटे का बजट (Deficit Budget)-** सरकारी व्यय का आय की तुलना में अधिक होना।
- **क्रियाशील वित्त (Functional Finance)-** सार्वजनिक व्यय और आय की नीतियों का स्वरूप क्रियाशील होना।

14.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. गरीबी 2. असंतुलन 3. मंदी 4. व्यय

निम्नलिखित कथनों में से सत्य एवं असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य

14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Blackhouse, R. and A. Salansi (Eds.) (2000), ***Macroeconomics and the Real World*** (2 Vols.), Oxford University Press, London
- Branson, W.A. (1989), ***Macroeconomic Theory and Policy***, (3rd Edition), Harper and Row, New York
- Dornbusch, R. and F. Stanley (1997), ***Macroeconomics***, McGraw Hill, Inc., New York
- Hall, R.E. and J.B. Taylor (1986), ***Macroeconomics***, W.W. Norton, New York
- Shapiro, E. (1996), ***Macroeconomic Analysis***, Galgotia Publications, New Delhi

14.12उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Dwivedi, D.N. (2008) ***Macro-Economics***, 7th edition, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Ahuja, H.L. (2012) ***Macro Economics, Theory and policy***, S. Chand and Company Ltd., New Delhi.
- Colander, D.C., (2008) ***Economics***, McGraw Hill Education, New Delhi.
- Mishra, S.K. and V.K. Puri (2003), ***Principles of Macro Economics***, Himalaya Publishing House, New Delhi.
- Ackley,G. (1978), ***Macroeconomics : Theory and Policy***, Macmillan, New York

14.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. राजकोषीय नीति का मन्दी की स्थिति तथा स्फीति की स्थिति में महत्व की विवेचना कीजिए।
2. राजकोषीय नीति के विभिन्न यंत्रों की विवेचना कीजिए।
3. अल्प-विकसित देशों में राजकोषीय नीति के महत्व की व्याख्या कीजिए।